हेमंत-शिशिर-वसंत '६३-'६

महिला स्वास्थ्य विशेषांक

द्वैमासिक

जीवनीय

स्वास्थ्य पत्रिका

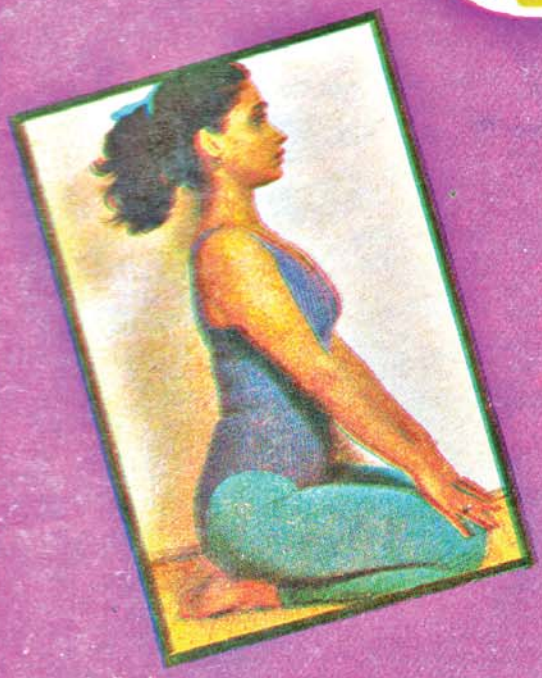

- स्त्रियों में हिस्टीरिया
- महिलाएं और एड्स
- स्त्रियों में मोटापा
- रक्ताल्पता या एनीमिया
- स्तन रोग एवं स्तन सौंदर्य
- माहवारी में परेशानी
- स्त्रियों में कमर दर्द
- श्वेत प्रदर - एक आम स्त्री रोग

१२ रु.

जीवनीय द्वैमासिक

मानद संपादक मंडल (लखनऊ)
पं. काशीनाथ गोपाल गोरे
डॉ. पारस नाथ मिश्र
वैद्य पूर्ण चंद्र जैन
डॉ. प्रेम सागर
वैद्य बदलू राम रसिक
डॉ. बिशन नारायण मेहरोत्रा
वैद्य ब्रज बिहारी मिश्र
डॉ. एम. पी. शुक्ल
डॉ. रवि कुमार शर्मा
डॉ. रेनु महेन्द्र
वैद्य सुल्तान अली खां
डॉ. सी.एस. सैंबी
डॉ. हरि प्रकाश शर्मा

कार्यकारी संपादक
डॉ. नरेंद्र नाथ मेहरोत्रा

संयोजक
पं. माधवाचार्य

संपादकीय सहायक
कु. वीना टंडन

साज-सज्जा
श्री संदीप सेनगुप्ता

इस पत्रिका के लिये कापार्ट से मिले अनुदान के हम आभारी हैं।

जीवनीय संबंधित समस्त विवादों का निपटारा लखनऊ के न्यायालयों के आधीन होगा।

जीवनीय सोसायटी की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक डा. नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा द्वारा प्रकाश पैकेजर्स, २५७ गोलागंज लखनऊ-१८ से मुद्रित तथा ई-III/ २४९ सेक्टर एच, अलीगंज लखनऊ-२० से प्रकाशित, संपादक डा. नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा

संपादकीय कार्यालय
जीवनीय
ई-III/२४९, सेक्टर एच
अलीगंज लखनऊ-२२६०२०
फोन-०५२२-७७५६८

अतिथि संपादक
वैद्य डी. एन. मिश्र

वर्ष ४, अंक ४-६
१६ नवंबर, १९९३- १५ मई, १९९४

संपादकीय सलाहकार समिति
वैद्य अयोध्या प्रसाद अचल, गया
हकीम अल्ताफ अहमद आजमी, नई दिल्ली
डॉ. गीता बामेजई, नई दिल्ली
वैद्य विवेकानंद पांडे, नई दिल्ली
वैद्य भगवान दाश, नई दिल्ली
वैद्य मायाराम उनियाल,नई दिल्ली
डॉ. टी. के. अब्दुल रज्जाक,पालक्कड़
वैद्य शिव कुमार मिश्र, पीलीभीत
वैद्य सुभाष रानाडे, पुणे
डॉ. उमा, बंगलूर
डॉ. भारतेन्दु प्रकाश, बाँदा
श्री ए.वी. बालसुब्रहमण्यम, मद्रास
वैद्य रमेश म. नानल, मुंबई
वैद्य भास्कर वि. साठ्ये, मुंबई
वैद्य नरेन्द्र सो. भट्ट, मुंबई
हकीम सफदर नवाब, लखनऊ
वैद्य वी.बी. म्हैस्कर, वड़ौदरा

जीवनीय में छपने वाले लेखों को पाठकों के लिए उपयोगी बनाने हेतु हम सतत् संपादकीय प्रयास करते हैं। परंतु रोग निदान एवं चिकित्सा एक कुशल चिकित्सक का ही काम है। स्वस्थ जीवन हेतु आवश्यक जानकारी अवश्य जीवनीय से प्राप्त करें पर रोग-चिकित्सा कुशल चिकित्सक की ही देखरेख में करें।

— संपादक

जीवनीय चंदे की दरें

	व्यक्तिगत (रुपये)	संस्थागत (रुपये)
वार्षिक	५०	८०
द्वैवार्षिक	९०	१५०
त्रैवार्षिक	१३०	२२०
आजीवन	५००	८००

चंदा साधारण डाकखर्च सहित है पर यदि पत्रिका रजिस्टर्ड डाक से मंगाना है तो उपरोक्त दरों में रु. ३५ और जोड़ कर भेजें। चंदे की रकम ड्राफ्ट या मनीआर्डर द्वारा ही 'जीवनीय सोसाइटी, लखनऊ' के नाम से भेजें।लोस्वापसंस के सदस्यों एवं स्वैच्छिक संस्थाओं को चंदे में १० प्रतिशत की छूट मिलेगी।

इस अंक में

अन्न सेवन का आयुर्वेदीय क्रम ६
एलर्जी या प्रत्यूर्जता ८
बवासीर में होम्योपैथी ९
एक्जीमा का होम्यो इलाज ११
सौंदर्यवर्धक वनौषधियां १३
स्वास्थ्यकर अपक्वाहार १४
गुरु-शिष्य परंपरा ५५

आवरण लेख

महिलाओं का आहार १७
सौंदर्यवर्धक व्यायाम १९
किशोरियों में मुहांसे २१
मातृत्व के अंग २३
स्त्रियों में मासिक धर्म २५
आर्त्तव चक्र २६
मासिक धर्म में उपयोगी औषधियां २८
मातृत्व की इच्छा २९
गर्भिणी का उपचार ३०
लाड़ले को स्तनपान ३१
स्तनरोग निवारण ३२
स्वास्थ्य व सौंदर्य ३३
महिलाओं में कमर दर्द ३४
श्वेतप्रदर ३५
महिलाओं मे गुप्त रोग ३६
हिस्टीरिया का होम्यो इलाज ३८
महिलाओं में मानसिक रोग ३९
भारतीय परिवेश में नारी ४०
रजोनिवृत्ति ४१
मोटापा कैसे दूर करें ४२
महिला स्वास्थ्य की उपेक्षा ४३
स्वस्थ सुन्दर बाल ४४
रतिज रोग ६७

औषध द्रव्य

मेथी ४७
गुणकारी हल्दी ४८
तेजपात ५०

आहार द्रव्य

स्वादिष्ट गूलर ४९
बथुआ ५१
संतरा ५२
अमरूद ५३
सोयाबीन ५४

स्थायी स्तंभ

हेमंत ऋतुचर्या ३
शिशिर ऋतुचर्या ४
बसन्त ऋतुचर्या ५
वैद्य परिचय १५
दादी मां के नुस्खे ४५
स्वयं बनाएं ५६
समस्या समाधान ५७
सक्रिय योगदान ५८
स्वादिष्ट व्यंजन ५९
पत्र-पत्रिकाओं से ६०
मधुसंचय ६१
जीवविज्ञान समाचार ६२
अनुसंधान समाचार ६३
ज्ञान कोष ६४
रोग-ज्योतिष ६४
पुस्तक समीक्षा ६५
विज्ञान पहेली ६६
जीवनीय उदर-कब्ज का इलाज ६८

संपादकीय

पिछले कुछ वर्षों में हमारी अर्थव्यवस्था पर अंतर्राष्ट्रीय परिवर्तनों का बहुत व्यापक प्रभाव पड़ा है। चूंकि हमारे देश में शिक्षा व स्वास्थ्य जैसे सामाजिक उत्थान के कार्यक्रमों में सरकारी संसाधनों का समुचित प्रबंध नहीं हो पाता है, अतः उन्मुक्त अर्थव्यवस्था का प्रभाव जनसाधारण के स्वास्थ्य पर और भी दूरगामी होता है। प्राथमिक स्वास्थ्य की सुविधाओं का लगातार सिमटना और बाजार व्यवस्था में आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं (औषधि, परीक्षण, उपचार सभी कुछ) का लगातार महंगा होते जाना जनसामान्य के लिए और भी अधिक चिंता का विषय होता जा रहा है।

ऐसे में स्वास्थ्य की देशी व स्थानीय परंपराओं पर आधारित चिकित्सा का भी महंगा या दुर्लभ होना जनसाधारण के लिए करेला और नीम चढ़ा की कहावत को चरितार्थ करेगा। सरकार के इस वर्ष के बजट या आठवीं पंचवर्षीय योजना, दोनों ही स्वास्थ्य की देशी औषधियों को जहां एक ओर अधिक महंगा बना देंगें, दूसरी ओर इनकी सरकारी सेवाओं में कोई भी उत्साहवर्धक वृद्धि होने का संकेत नहीं है। इस सबसे भी अधिक चिंताजनक प्रश्न है, तटकर एवं व्यापार की आम सहमति (गैट) के अंतर्गत भारतीय पेटेंट कानून में प्रस्तावित परिवर्तन जिनमें पौधों पर भी पेटेंट जैसी व्यवस्था का प्रावधान होगा। विकासशील देशों में उपलब्ध वानस्पतिक या अन्य नैसर्गिक संपदा पर उनके ही स्वामित्व के सिद्धांत को मानते हुए रियो सम्मेलन में अनुमोदित जैवविविधता अनुबन्ध ने उनको संपूर्ण मानव जाति के लिए उपलब्ध कराने का उचित सिद्धांत भी रखा है। पर गैट के अनुरूप पेटेंट प्रावधानों के अनुसार यदि किंचित आधुनिक अनुसंधान के फलस्वरूप प्राप्त ज्ञान को पेटेंट कराने का क्रम बढ़ता गया तो यह विकासशील देशों में उपलब्ध ज्ञान व संसाधनों को जबरदस्ती हथियाने जैसा होगा।

यद्यपि विश्व के किसी भी पेटेंट कानून में पूर्वविदित ज्ञान पर आधारित कोई वस्तु/प्रक्रिया को पेटेंट कराने का प्रावधान नहीं होता पर पेटेंट कानूनों की कानूनी दाँव-पेंच का सहारा लेकर जन-जन में उपलब्ध ज्ञान को भी पेटेंट कराया जा रहा है। उदाहरणतया नीम के कीटनाशक तत्व, रोग या गर्भनिरोधक गुणों का ज्ञान इस देश में या अन्यत्र भी शताब्दियों से रहा है और इसका जन-जन में उपयोग भी किया जाता रहा है पर इसी ज्ञान पर आधारित 'अनुसंधान' करके उसे पेटेंट कराया जा रहा है। इसी प्रकार हल्दी या अन्यान्य औषधीय पौधों के गुणों को पेटेंट करवाकर उस पर विकसित देशों की बहुराष्ट्रीय कंपनियों का एकाधिकार होने से उन पर आधारित औषधियाँ महंगी होती जाएंगी। बाजार व्यवस्था में आने से ये प्राकृतिक संसाधन, जो आज जनसाधारण को उपलब्ध है, इनका मिलना भी दूभर और मंहगा हो जाएगा। स्पष्ट है कि इससे न केवल जनसाधारण को स्वास्थ्य सुविधाओं की समस्या बढ़ेगी वरन देशी चिकित्सा पद्धतियों के समूल नष्ट होने का खतरा बढ़ता जाएगा।

इन समस्याओं की महिलाओं के स्वास्थ्य पर भी दोहरी मार पड़ेगी। आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं में उपेक्षित महिला स्वास्थ्य समस्याओं पर स्थानीय चिकित्सा पद्धतियां विशेषकर सशक्त है। देश भर में फैली दाईयाँ आज भी चारों ओर फैली महिला एवं शिशु स्वास्थ्य में घरेलू ज्ञान की परंपराएं अभी तक महिलाओं को अपने स्वास्थ्य के लिए कुछ अवसर उपलब्ध कराती रही हैं। यदि हमने समय रहते इन परंपराओं के उन्मूलन के इस पश्चिमोन्मुखी प्रयासों का विरोध नहीं किया तो हम न केवल अपनी एक सशक्त परंपरा के विनाश के दोषी होंगे वरन अपने जन-जन के स्वास्थ्य की उपेक्षा के भी दोषी होंगे जिसके लिए शायद इतिहास हमें कभी क्षमा न कर सके।

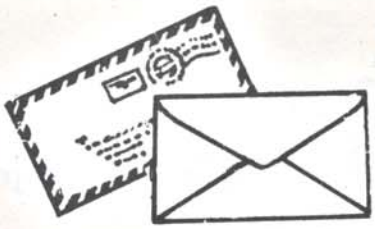

पाठकों के पत्र

प्रिय संपादक जी,

आपकी स्वास्थ्य पत्रिका जीवनीय के बारे में अपने मित्रों से सुना अब मेरी उसको प्राप्त कर पढ़ने की प्रबल इच्छा है। मुझे विश्वास है कि यह आयुर्वेदिक औषधियों के विषय में विस्तृत जानकारी देगी।

डा. एन. आर. दुबे

जबलपुर मैं आपकी पत्रिका का पिछले तीन वर्ष से पाठक हूँ और उसको बहुत रुचि से पढ़ता हूँ। लेकिन इधर कुछ महीनों से आपकी पत्रिका के अनियमित प्रकाशन से मुझे बहुत दुख है। कृपया इस तरफ अपना ध्यान दें।

डा. संतोष कुमार मालवीय, इलाहाबाद

जीवनीय स्वास्थ्य पत्रिका के प्रकाशन के विषय में मुझे जानकारी प्राप्त हुई है। चूंकि महिला समाख्या के अतंर्गत मै ग्रामीण इलाके में कार्यरत हूँ अतः इस पत्रिका में प्रकाशित लोक स्वास्थ्य की सामग्री की आवश्यकता महसूस होती है। इसीलिए मै इस पत्रिका के सब अंक प्राप्त करना चाहती हूँ।

शशि मौर्य, सहारनपुर

आपको हमारी पत्रिका ग्रामीण महिलाओं के लिए उपयोगी लगी इस जानकारी से हम प्रेरित हूए। हमें आपको अधिक प्रतीक्षा नही करवाना है। हम एक और उपयोगी महिला स्वास्थ्य अंक प्रकाशित कर रहे हैं।

संपादक

मैं जीवनीय का बहुत पुराना नियतिम पाठक हूँ। मुझे यह एक सम्पूर्ण व उपयोगी पत्रिका लगती है। इसलिए इसे नियमित रूप से पढ़ने का प्रयास करता हूँ। इस पत्रिका में समय समय पर विभिन्न चर्म रोगों पर प्रकाशित लेखों से विस्तृत जानकारी मिली। लेकिन मै इस विषय में और जानने के लिए इच्छुक हूँ। कृपया इस सम्बन्ध में मुझे सुझाव दें।

बलबीर सिंह, हिसार

मुझे जीवनीय स्वास्थ्य पत्रिका का एक अंक पढ़ने का अवसर मिला मैं, उसमें प्रकाशित लेखों को पढ़कर बहुत प्रभावित हुआ। इसमें प्रकाशित वैद्यों के विचार व अनुभव उपयोगी लगे। मुझे यह इतनी रोचक लगी कि मै अब इसके सब प्रकाशित अंकों को पढ़ना चाहता हूँ।

मोती लाल अग्रवाल, दिल्ली।

मैं आपकी पत्रिका का नियमित पाठक हूँ। मुझे जीवनीय पढ़ने से विभिन्न विषयों की चिकित्सा, सामाजिक व वैज्ञानिक जानकारी होती है। मेरा यह विचार है कि इसमें प्रकाशित लेखों और विचारों को पढ़ने से जीवन सार्थक बनाया जा सकता है। मैं इस पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

रामलखन चतुर्वेदी, रायबरेली।

आपके विचारों से हम लोग प्रोत्साहित हुए। आशा है कि आप इसी प्रकार अपने विचारों से हमें समय-समय पर अवगत कराते रहेगें।

संपादक

मैं जीवनीय की बहुत पुरानी पाठक हूँ। इस पत्रिका को बहुत रुचि से पढ़ती हूँ। मेरा यह सोचना है कि यह पत्रिका नारी जाति को अंधकार से बाहर निकालने में पूरी तरह मदद करती है। वह अपने स्वास्थ्य के लिए जागरूक हो सकती है। मेरा अनुभव यह है कि आयुर्वेदिक दवाइयाँ बहुत लाभ पहुँचाती है।

बीना कपूर, कानपुर

आप के सभी सुझावों से प्रेरित होकर हम लोगों ने यह अंक "महिला स्वास्थ्य विशेषांक" के रूप में प्रस्तुत करने का निश्चय किया है। आप इस अंक को पढ़ने के बाद हमे अपने विचार अवश्य भेजिए।

संपादक

आपका अस्थिरोग विशेषांक पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ। मैं इस अंक को बहुत अच्छी तरह ध्यान से पढ़ा। इसमें प्रकाशित वैद्य अतीक का साक्षात्कार मेरी माता जी के लिए विशेष रुप से लाभकारी सिद्ध हो सकता है, ऐसा मेरा विश्वास है। मेरी माता कैंसर से पीड़ित हैं। आप 'जीवनीय' से इस प्रकार के साक्षात्कार छापकर पाठकों को बहुत मदद करते हैं। मेरी शुभकामनाएं आपके साथ हैं।

रा. न. वर्मा, पूना

प्रिय पाठक,

"जीवनीय" का प्रकाशन लोक स्वास्थ्य परम्परा संवर्धन समिति (लोस्वापसंस) के सदस्य संगठनों एवं कार्यकर्ताओं के सक्रिय सहयोग द्वारा भारत की लुप्तप्राय होती स्वास्थ्य की बहुमूल्य स्थानिक परम्पराओं के विकास के लिए राष्ट्रीय स्तर पर शुरू किए गए आंदोलन का भाग है।पाठकों से अनुरोध है कि लोस्वापसंस तथा जीवनीय पत्रिका के सक्रिय सदस्य बन कर इस आंदोलन में अपना सहयोग दें तथा अपनी वाटिकाओं में औषधीय पौधे लगाकर व उनका प्रयोग करके स्वास्थ्य के सामान्य विकारों को दूर कर स्वास्थ्य लाभ लें।

सम्पादक मंडल

हेमन्त ऋतुचर्या

डा. संगीता जैन, नागपुर

संसार के प्रत्येक व्यक्ति की चाह होती है कि वह सदा निरोगी बना रहे। आयुर्वेद शास्त्र में कहा गया है कि चिकित्सक का पहला धर्म है– स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य का परिरक्षण करना। पूर्ण निरोगी व्यक्ति के लिये शारीरिक और मानसिक दोनों तरह से स्वस्थ रहना आवश्यक है।

सामान्यतः साल में तीन ऋतुएं ग्रीष्म, वर्षा, और शीत आती है। ये ऋतुएं भारत में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। प्राचीन आयुर्वेदज्ञों ने इन तीन ऋतुओं को छः में विभाजित किया है– हेमन्त, शिशिर, बसन्त, ग्रीष्म, वर्षा और शरद। पेड़–पौधे, पशु–पक्षी वातावरण सभी इन ऋतुओं से प्रभावित देखे जाते हैं। इन ऋतुओं का शरीर पर बुरा प्रभाव न हो, इसके लिए प्रातः उठने से रात्रि सोने तक की चर्या विभिन्न ऋतुओं में कुछ भिन्न–भिन्न होती है। इसका पालन करके हम निरोगी जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

हेमन्त ऋतु अगहन और पौष माह में नवम्बर मध्य से जनवरी मध्य तक रहती है। विसर्गकाल की यह सबसे उत्तम ऋतु है, क्योकि इस ऋतु में शरद ऋतु में प्रकुपित पित्त का शमन हो जाता है और किसी भी अन्य दोष का प्रकोप नहीं होता। वातावरण सौम्य होने से वनस्पतियाँ रस गुण से भरपूर रहती है। प्राणी भी हृष्ट पुष्ट रहते है, फलतः उनका दुग्ध भी पुष्टिकारक व मात्रा में अधिक निकलता है। हेमन्त ऋतु में पाचक अग्नि प्रबल होती है। आहार का पचन अच्छी तरह होने से शरीर का बल अच्छा रहता है। इसलिये सामान्यतः अन्य ऋतुओं की अपेक्षा इस ऋतु मे मानव अधिक स्वस्थ दिखाई देता है।

उचित आहारः – इस ऋतु में पाचनशक्ति उत्तम होने से वह भारी आहार को भी सरलता से पचा लेती है। यदि अधिक समय तक भोजन नहीं किया गया या कम मात्रा में किया गया अथवा अत्यधिक रूक्ष, कटु, तिक्त या कषाय रस प्रधान भोजन किया गया तो प्रदीप्त अग्नि शीघ्र ही भोजन को पचाने के पश्चात धातुओं का पचन करने लगती है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को अपनी पचन शक्ति के अनुरूप अपने भोजन की मात्रा निर्धारित कर लेनी चाहिये क्योकि हर व्यक्ति की पचन शक्ति उसकी आयु, लिंग, व्यवसाय आदि के अनुसार भिन्न भिन्न होती है। इस मौसम में विशेषतः मधुर, अम्ल, लवण, रस प्रधान भोजन का सेवन करना चाहिये। घी, तेल, दूध, मक्खन, मूँगफली, तिल, गुड़, शक्कर आदि से निर्मित मिष्टान्नों का उचित मात्रा में सेवन करें। अन्न मे गेहूँ, चावल, ज्वार, मक्का,

बर्फ, कुल्फी, ठंडे पेय आदि से इस ऋतु में बचें।

बाजरा, सोयाबीन, दालों में मूँग, अरहर, उड़द, मसूर, चना, शाक में मेथी, पालक, लौकी, कद्दू, मूली, गाजर, ककड़ी, टमाटर, गोभी, आलू, सेम, मटर, आदि, फलों में अमरूद, केला, अनार, आँवले, गन्ना, सेब, सीताफल, नींबू आदि का सेवन लाभदायक होना है।

ठंडा, बासी, रूक्ष भोजन का त्याग करें। शीतल पेय, बर्फ, आइस्क्रीम, फ्रीज का पानी, खट्टा दही, इमली व अमचूर जैसे पदार्थों का सेवन हानिकारक होता है। चाय, काफी, जैसे उष्ण पेय, ताजा दही, नींबू, आँवले का उपयोग किया जा सकता है। भोजन पकाते समय काली मिर्च, पिप्पली, सोठ, तेजपात, दालचीनी, लौंग, इलायची, का उपयोग करना चाहिये। ये न केवल भोजन को सुगन्धित, स्वादिष्ट बनाते है, बल्कि कफ और वात का शमन भी करते हैं।

उचित विहारः – प्रातः आलस्य का त्याग कर शीघ्र ही बिस्तर छोड़ देना चाहिये। प्रातः भ्रमण के लिये खुली हवा में जाना चाहिये। सुबह की धूप सेंकना चाहिये। शरीर के लिये लाभदायक आसन करने चाहिये। नियमित रूप से योगाभ्यास करने से शरीर की अतिरिक्त चर्बी कम होकर शरीर सुडौल और बलशील हो जाता है। प्राणायाम का भी प्रयोग करें, विशेष रूप से दमा के मरीजों में यह अतीव लाभकारी होता है।

संभावित रोग और उपचार

हेमन्त ऋतु को कफ का संचयकाल माना जाता है अतः थोड़ी–सी बदपरहेज़ी से कफ का प्रकोप होकर सर्दी, जुकाम, खाँसी, बुखार, न्यूमोनिया, टॉन्सिलायटिस, दमा जैसे रोग उत्पन्न होने में देर नहीं लगती। इनके उपचार के लिये तुलसी, अदरक, काली मिर्च, पिप्पली, हल्दी, लौंग, पुष्करमूल, भारंगी, काकड़ासिंगी, मुलेठी, सितोपलादि चूर्ण, लवंगादि वटी, त्रिभुवनकीर्ति रस, चित्रकहरीतकी अवलेह, कंटकारी अवलेह, आदि औषधियों को उचित मात्रा में योग्य अनुपान के साथ प्रयोग करना चाहिये। इस ऋतु में वातावरण शीतल होने से वात शीघ्र ही कुपित हो जाता है। संधिवात, आमवात, सायटिका से ग्रस्त रोगियों की पीड़ा इस ऋतु में बढ़ जाती है। इन रोगियों को एरंड, रास्ना, लहसुन, बला, अश्वगंधा, त्रिफला, दशमूल आदि का सेवन उचित रूप से करना चाहिये। जोड़ों में दर्द हो, किन्तु सूजन न हो तो बला तैल, पंचगुण तैल, प्रसारिणी तैल, महानारायण तैल, महामाष तैल, पंचगुण तैल, महानारायण तैल, महामाष् तैल, सैन्धवादि तैल आदि किसी से मालिश करनी चाहिये। सूजन होने पर मालिश न करें, एरंड के पत्तों को गर्म करके कपड़े की पट्टी द्वारा जोड़ों में बांध ले। दशांग लेप का प्रयोग भी इस अवस्था में अत्यंत लाभकारी होता है। रसायन और वाजीकर योगों का सेवन अन्य ऋतुओं की अपेक्षा इस ऋतु में लाभदायक होता है। इनसे अर्जित शक्ति द्वारा शरीर वर्ष भर निरोगी, बलवान बना रहता है।

शिशिर ऋतुचर्या

वैद्य एस.ए. खान, स्टेट फार्मेसी, लखनऊ

शिशिर ऋतु उत्तरायण काल की प्रथम ऋतु है। उत्तरायण के अन्तर्गत शिशिर, बसन्त और ग्रीष्म ऋतुयें आती हैं। इसी को आदान काल भी कहा जाता है। इस काल में शिशिर, बसन्त और ग्रीष्म में क्रमशः चन्द्रमा का प्रभाव कम होता जाता है और सूर्य का प्रभाव बढ़ता जाता है। सूर्य के प्रभाव से जीव-जन्तुओं, मनुष्यों एवं वनस्पतियों में बल का ह्रास होता है। इसी कारण इस काल को आदान काल कहा है। ये तीनों ऋतुएं स्वास्थ्य के लिए क्रमशः अधिक घटिया मानी जाती है। शिशिर ऋतु १६ जनवरी से १५ मार्च तक रहती है।

शिशिर ऋतु में वायु मण्डल में वात प्रधान रसों की उत्पत्ति होती है अतः प्राणियों के शरीर का बल क्रमशः कम होता जाता है। दूसरी तरफ काल प्रभाव से चन्द्रमा का प्रभाव भी अधिक होता है अतः कफ दोष की वृद्धि प्राणियों के शरीर में होती है। चूँकि इस ऋतु में भारत के अधिकांश भागों में तथा संसार के उन भागों में जहाँ इसी प्रकार की जलवायु होती है, अधिक ठण्ड व चन्द्रमा के प्रभाव के कारण वात कफ की वृद्धि होती है। अधिक ठण्ड और ठण्डी हवाओं के चलने या बर्फ, पाला आदि गिरने के कारण वात प्रकोप भी हो जाता है अतः थोड़ी सी भी असावधानी हो जाने से शरीर में वात कफ का प्रकोप होने की संभावनायें बढ़ जाती हैं।

वातज, और वात कफज रोग जैसे वातश्लेष्मज ज्वर, प्रतिश्याय, इन्फ्लूयेन्जा निमोनिआ, सन्धिशूल, हृदयशूल, शिरःशूल आदि वातज और वात कफज रोग होने की संभावनायें बढ़ जाती हैं। त्वचा शुष्क खुरदुरी हो जाती है। विशेषकर वात प्रधान प्रकृति के लोगों में वातज, कफज और वातकफज प्रकृति के लोगों के लिये यह ऋतु विशेष सावधानी की ऋतु है। वातज प्रकृति वाले लोगों को इस ऋतु में रूक्ष अन्न बाजरा, साँवा, कोदौं, जौ, मूँग, मक्का आदि का सेवन एवं कटुतिक्त रस वाले पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिये। बल्कि स्निग्ध मधुर रस युक्त पदार्थ, सूखे मेवे बादाम, काजू, गरी, चिलगोजा, मूँगफली, चिरौजी, पिस्ता आदि का सेवन एवं मांस, मछली, अण्डा और मक्खन आदि का सेवन करना चाहिए।

शिशिर ऋतु में तिल की चीजों का सेवन लाभकारी है

कफज प्रकृति के लोगों को अधिक कफवर्धक, स्निग्ध, मधुर रस युक्त, खट्टे, खोये के पदार्थों, दही, मांस, मछली, अण्डा आदि का अति प्रयोग नहीं करना चाहिये नहीं तो उनके शरीर के अन्दर कफ की वृद्धि (संचय) अधिक मात्रा में प्रकुपित होकर भंयकर कफज रोगों को उत्पन्न कर देगा पित्तज प्रकृति के लोगों को विशेष रूप से दूध, स्निग्ध, गरिष्ठ, मधुर रस युक्त, बलवर्धक आहार का सेवन करना चाहिये। क्योंकि इस समय जाठराग्नि तीव्र होती है उपरोक्त प्रकार का भोजन आसानी से पच सकता है। भूख लगने पर न खाने पर पित्तवृद्धि और पित्तप्रकोप होकर पित्तज रोग अम्लपित्त, भस्मक रोग, ज्वर आदि होने की संभावना बढ़ जाती है।

शिशिर ऋतु में सामान्य आहार- शिशिर ऋतु में सामान्य आहार मुख्यतः वातकफ शामक पित्तवर्धक, बलवर्धक, स्निग्ध उत्तम होना चाहिये।

पीपल, सूखे मेवे, घी, दूध, सोआ, मेथी, बैंगन, तिल, सोठ, गुड़, अदरख, हींग, जीरा, केशर, लहसुन, असगंध, कड़वा तेल, काली मिर्च, तेजपत्ता, जावित्री, तुलसी, जायफल, नरपक्षिओं का मांस, देशी अण्डा, मछली, मट्ठा, मद्य, कांजी आदि का प्रयोग करना चाहिये।

शिशिर ऋतु में विहार-शरीर को मोटे कपड़े या ऊनी कपड़ों से ढक कर रखना चाहिये। सिर व तलवों पर कड़वे या तिल तेल की मालिश करें। नियमित व्यायाम करें। ठण्डी और झोंकेदार वायु से बचें। रहने का स्थान गरम रखें। स्त्री संसर्ग की इस ऋतु में छूट है।

हेमन्त और शिशिर ऋतुयें स्वास्थ्यवर्धक ऋतुयें कहलाती है। परन्तु वास्तव में स्वास्थ्य वर्धक ऋतु हेमन्त ऋतु ही है। क्योकि इस ऋतु में किसी भी दोष की वृद्धि या प्रकोप नहीं होता।

शिशिर ऋतु में चूँकि कफ दोष की वृद्धि और संचय होता है अतः उसे सभी के लिये स्वास्थ्य वर्धक ऋतु नहीं कहा जा सकता है। वातज, वातकफज या कफज प्रकृति के व्यक्तिओं के लिये यह ऋतु स्वास्थ्यवर्धक सामान्य रूप से नहीं कही जा सकती।

यदि हम इस ऋतु में अपनी प्रकृति एवं ऋतु के अनुसार आहार विहार रखें तो अच्छा स्वास्थ्य प्राप्त कर सकते हैं तथा बसन्त ऋतु में होने वाले कफज रोगों से छुटकारा पा सकते है।

बसन्त ऋतुचर्या

शीतकाल की समाप्ति और ग्रीष्मकाल के प्रारम्भ के बीच जो दोनों ऋतुओं का सन्धिकाल होता है वह बसन्त ऋतु का होता है। हिन्दी माह के चैत्र एवं वैशाख, तदनुसार मार्च मध्य से मई मध्य तक का समय बसंत कहलाता है। आयुर्वेद के अनुसार यह आदान काल का मध्य है। इस ऋतु में सूर्य अपनी किरणों से जीव वनस्पतियों आदि संसार के सभी घटकों से जलीय अंश का शोषण करता है। वायु तीव्र तथा रूक्ष होकर स्नेह (चिकनाई) का शोषण करती है। रूक्षता उत्पन्न होने से तिक्त, कषाय और कटु रसों की वृद्धि होने से शरीर में दुर्बलता होती है। हेमन्त और शिशिर ऋतुओं में संचित कफ बसन्त ऋतु में सूर्य की किरणों से द्रवीभूत होकर उदर में प्रवेश कर जठराग्नि को मंद करता है। इस ऋतु में कफ के कुपित होने से खांसी, सर्दी जुकाम, टान्सिल में सूजन और गले में खराश आदि भी हो सकती है। इस ऋतु में वमन, नस्य आदि पंचकर्म करना चाहिए। व्यायाम, उद्वर्तन (उबटन) पैरों का दबाना, मर्दन आदि उत्तम है। सूर्योदय से पहले जाग कर, नित्य कर्म से निवृत्त होकर घूमने जाएं फिर स्नान करें। यदि शीत ऋतु में गरम पानी से स्नान करते रहे हों तो गुनगुने जल से स्नान कर सकते हैं। स्नान के पश्चात् शरीर पर कपूर, चन्दन आदि का लेप करें।

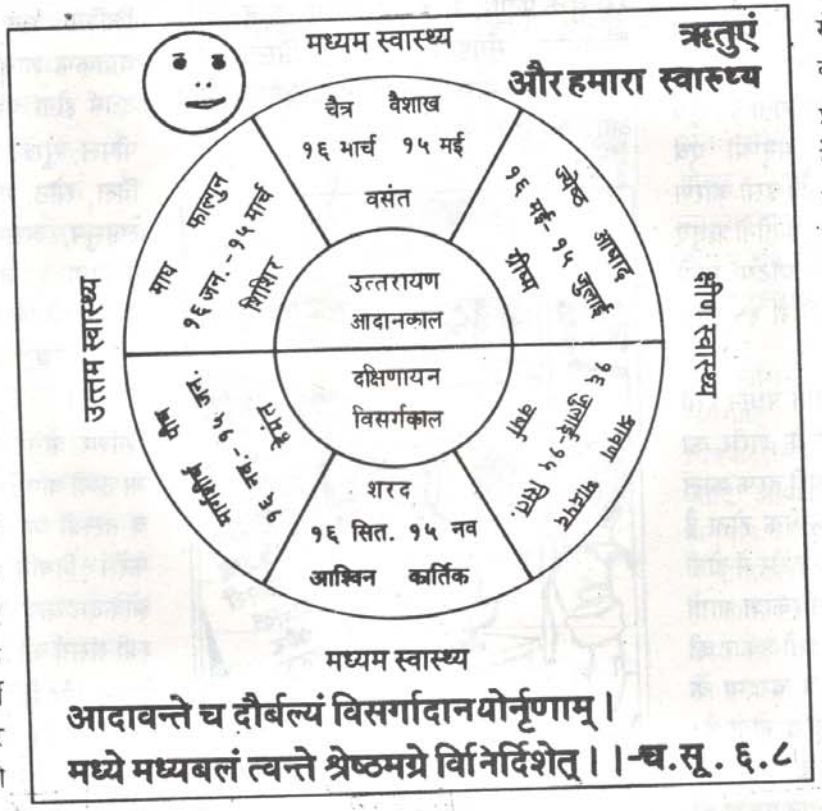

आदावन्ते च दौर्बल्यं विसर्गादानयोर्नृणाम्।
मध्ये मध्यबलं त्वन्ते श्रेष्ठमग्रे विनिर्दिशेत्।।-च.सू. ६.८

आहार विहार

इस ऋतु में शरीर से जल का ह्रास होता है अतः पानी खूब पीना चाहिए। पुराने अनाज और पचने में हल्के, कटु तथा तीखे एवं कषाय रस युक्त पदार्थों का सेवन करना चाहिये।

भोजन में पुराना जौ, गेहू एवं चावल, मूंग एव मसूर की दाल सब्जियों में लौकी, भिण्डी, बैगन करेला, शाकों में पालक, चौलाई आदि लें। मांसों में खरगोश, तीतर और बटेर का मांस उत्तम है। मौसमी फल अंगूर, सन्तरा, आंवला, गाजर आदि का सेवन लाभदायक है। यदि नित्य प्रातः विहार के समय नीम की १५-२० कोमल पत्तियां, २ कालीमिर्च के साथ चबा ली जायं तो त्वचा रोग और ज्वर से बचाव हो सकता है।

इस ऋतु में हरीतिकी (हरड़) का चूर्ण शहद के साथ सेवन करना विशेष रूप से लाभदायक है। इससे बवासीर, खांसी, बुखार, पीलिया, दस्त अम्लपित्त आदि रोग नष्ट होते हैं।

इनसे बचें: भारी तथा देर से पचने वाले खाद्य पदार्थ, अधिक अम्ल और मधुर भोज्य पदार्थ तथा नये अन्न का प्रयोग न करें। इस ऋतु में दिन में सोना वर्जित है।

वसन्त में सावधानियां

वसन्त में कफ दोष प्रकुपित होने के कारण कई रोग होने के साथ ही साथ शरीर का सम्यक उपचय नहीं होता है और शरीर विभिन्न रोगों के आक्रमण का प्रतिरोध करने में अक्षम हो जाता है।

प्रकुपित कफ को बाहर निकाल देना चाहिये जिसका सर्वोत्तम उपाय वमन है। यदि वमन क्रिया से आमाशय स्थित कफ को निकाल दिया जाय तो आमाशय कफ की शांति से सम्पूर्ण शरीर में बढ़े कफ द्रव्यों का शमन हो जाता है।

वमन क्रिया वामक द्रव्यों अथवा गले में उंगली, कमलनाल, रबर आदि किसी कोमल वस्तु से स्पर्श कराकर, यांत्रिक उत्तेजना से अथवा दोनों के प्रयोग से कराई जाती है।

किसी चोट से कमजोर, बहुत मोटे, बहुत दुबले, बच्चे, बूढ़े, गर्भिणी, हृदय रोगी, उदर, रक्तपित्त, वात व्याधि आदि के रोगियों को वमन नहीं कराना चाहिये। वमन के पूर्व कम से कम एक दो दिन तक स्नेहन स्वेदन कराना चाहिये। वमन किसी योग्य चिकित्सक की सलाह और देख-रेख में किया जाना चाहिये।

वमन के उपरान्त पेय, पवागू अथवा दूध पिलावें। वमन के दूसरे दिन अमलतास की फली, सनाय तथा हरड़ को विरेचन के रूप में प्रयुक्त करना चाहिये। इससे मंदाग्नि दूर होती है तथा अन्न का सम्यक पचन होने लगता है।

आयुर्वेदीय अन्न सेवन क्रम

वैद्य र.म.नानल, बम्बई

क्रम ज्ञान की आवश्यकता

प्रत्येक प्राकृतिक पदार्थ स्वयं में विशिष्ट होता है। मानव भी निसर्ग निर्मित है अतएव प्रकृति की भांति उसके शरीर में प्रत्येक बात का क्रम युक्त होना अनिवार्य है। इस क्रम को बनाये रखने से स्वास्थ्य प्राप्ति एवं स्वास्थ्य वृत्ति दोनों बनी रहती है और यही क्रम-रूप संतुलन यदि बिगड़ जाये तो रोगावस्था अटल है। यह त्रिकाला-बाधित सिद्धान्त है। यह शरीर आहार से बना है। आहार मानव की नौसर्गिक आवयश्कता है।

अतः उसका सेवन भी मानव देह के अनुकूल क्रम से ही किया जाना चाहिए।

क्रम बदलने से परिणाम बदल जाते हैं। यह भी शाश्वत सिद्धान्त है। अपने जीवन में भी हम इसका पालन करते हैं। सुबह जागने से लेकर रात को पुनः सोने तक हम एक क्रम का ही अनुसरण करते हैं। इस क्रम में कोई अन्तर आने पर पूरा कार्यक्रम बदल जाता है। इसका अनुभव हममें से हर एक को होगा।

आहार सेवन क्रम

हमारे शरीर में प्रविष्ट होने पर आहार का पाचन होता है। यह कार्य अग्नि द्वारा होता है। इस पाचन क्रिया के समय शरीर में विशिष्ट क्रियाएं अनेक रूप में निश्चित कालावधियों में घटती हैं। साथ ही इन क्रियाओं के घटने का एक निश्चित उद्देश्य मानव का स्वास्थ्य बनाए रखना है।

आहार पाचन के क्रम सर्व प्रथम कफ व अग्नि, तदनंतर पित्त एवं अग्नि एवं अग्नि तथा अन्तिम स्थूल पचन में वातदोष एवं अग्नि कार्यरत होते हैं। इन्हें अवस्थापाक कहते हैं। इनका क्रम यदि बनाये रखें तो खाया हुआ अन्न लाभदायक होता है और यदि क्रम बिगड़ जाये तो अजीर्ण, अम्लपित्त, अतिसार जैसे उदर रोग भी हो सकते हैं।

पूर्व मधुरं अश्नीयात् मध्ये अम्ल लवणौ रसौ।
पश्चात् शेषान् रसान् वैद्यो भोजनेषु अवचारयेत्।।

भोजन के प्रांरभ में मधुर पदार्थों का, मध्य में अम्ल-खट्टे एवं लवण-नमकीन का तथा उसके बाद शेष रसों का सेवन करें अर्थात् कटु तीखा, तिक्त, कडुवा, कषाय, चरपरा, इनका सेवन भोजन के अन्तिम चरण में करें। यह रसानुरूप क्रम है।

आदौ फलानि भुंजीत दाडिमादीनि बुद्धिमान्।
ततः पेयांस्ततो भोज्यान् भक्ष्यांश्चित्रान्ततः परम्।।

बुद्धिमान मनुष्य भोजन के पहले अनार आदि फलों का सेवन करें। तदनंतर पेय पदार्थ और उसके बाद विविध आकर्षक भोज्य एवं भक्ष्य पदार्थों का सेवन करें। ऐसा करने से जठर में पाचक स्राव (दोषों के विविध स्राव) भली भांति उतरते हैं। अनार जैसे फल, जो मधुर-अम्ल रस वाले होते हैं, जठराग्नि को बढ़ाते हैं। इससे पाचन के अनुकूल स्थिति निर्मित होती है। फलों में आंवला अमृतमय होता है। इसे भोजन के साथ कभी भी प्रयुक्त करें। यह भूख बढ़ाता है, मन को प्रसन्न करता है, इंद्रियों को सुचारू रखता है एवं उत्तम शरीरपोषण भी करता है।

घन पूर्वं समश्नीयात् केचिदाहुर्विपर्ययम्

इस सूत्र में गरिष्ठ पदार्थ कब खाये इस बात का द्विविध विचार दिया है भोजन के पूर्वार्ध में, भोजन के उत्तरार्ध में। हमारे विचार में यह क्रम अग्निशक्ति पर निर्भर रखना चाहिये। अर्थात् जहां तीव्र अग्नि एवं तीव्र क्षुधा हो वहां किसी भी क्रम की आवश्यकता नहीं होती। सामान्य स्थिति में गरिष्ठ आहार को भोजन के प्रारंभ में ही खाना उचित प्रतीत होता है क्योंकि पूर्व सेवित फल रस व पेयपान से जठर में पर्याप्त द्रव की मात्रा एवं अग्नि भी प्रकट हो जाती है। गरिष्ठ पदार्थों के पाचन के लिए क्लेद एवं अग्नि की आवश्यकता होती है। गरिष्ठ पदार्थों को अच्छी प्रकार चबाने के बाद भी कुछ भाग कई बार वैसा ही जठर में चला जाता है। वहां द्रव के कारण गरिष्ठता शेष नहीं रह पाती। भोजन के अन्त में गरिष्ठ पदार्थ खाने से पाचन में पर्याप्त द्रव नहीं मिल पाता और साथ ही जठर में मथने जैसी क्रिया हेतु पर्याप्त समय भी नहीं मिल पाता परिणामतः पाचन क्रम बिगड़ जाता है।

अतः यह सामान्य नियम उचित है कि गरिष्ठ पदार्थ भोजन में प्रथम खायें। वृद्ध वैद्य परंपरा के अनुसार जिस व्यक्ति को जिस क्रम की पुरानी आदत हो उसे तदनुसार ही अन्न सेवन करना ठीक है क्योंकि अचानक किसी भी क्रम को बदल देने से हानिप्रद परिणाम सामने आते हैं।

अन्न पदार्थ सापेक्ष क्रम

भोजन में कौन से द्रव्य कब खायें जायें इसका भी विचार महत्वपूर्ण होता है।

मृणालबिस शालूककन्देक्षु प्रभृतीनि च।
पूर्वयोज्यानिभिषजा न तु. पश्चात् कदाचन।।

मृणाल या कमल की जड़, शालूक, कंद और इक्षु इन पदार्थों का सेवन हमेशा भोजन के पूर्वार्द्ध में करना चाहिये, भोजन के बाद कभी न खायें। यह क्रम 'द्रव्य गुणं' शास्त्रानुरूप है। जैसे जो पदार्थ पचने में गुरु (भारी-देर से पचने वाले) हों उनका सेवन उत्तम अग्निबल तथा द्रवादि गुणों की उत्कटता होने पर ही करना चाहिये। वनस्पतियों में यह सामान्य रूप से पाया जाता है कि विशिष्ट अंग लघु होते हैं एवं कुछ अंग गुरु होते हैं। जैसे,

पत्रे पुष्पे फले नाले कन्दे च गुरुता क्रमात्।

अर्थात् पत्रशाक (मेंथी, बथुआ), पुष्पशाक (अगस्त्य, शिग्रु), फलशाक (करेला, लौकी आदि) नालशाक (कमल नाल, इक्षु मरिष) कन्दशाक (आलू गाजर) क्रमशः गुरु होते हैं। अतएव इनका सेवन भोजन के पूर्वार्द्ध में करना उचित होता है। इक्षुरस (गन्ने का रस) अथवा तज्जन्यपदार्थ जैसे गुड़, खांड आदि भी गुरु होते हैं। इक्षुरस शीतल एवं वातवर्धक भी होता है। अतएव सम्यक् पाचनार्थ इन्हें भोजन के प्रारंभ में ही खाना चाहिये।

आजं कांटिनेंटल डिशेज का भरपूर प्रचलन है जैसे-चायनीज। सर्वप्रथम थम्सअप जैसे पेय

लिये जाते हैं तदनंतर कार्नसूप, मांसाहार/शाकाहार और अंत में आईस्क्रीम अथवा कस्टर्ड। यह आहार क्रम पूर्णतया विकृत है। थम्सअप एक कृत्रिम पेय है तथा उसकी ली जाने वाली मात्रा जोकि २००/२५० मि.ली. होती है अधिक है। इससे द्रवाधिक्य होकर पाचन शक्ति मंद हो जाती है। तत्पश्चात मक्के का सूप लेते हैं जो पचने में भारी होता है और नित्यसेवन में न होने से असात्म्य भी होता है। तत्पश्चात फ्राईड राईस व इतर भोज्य पदार्थ होते हैं। पूर्वसेवित अन्न सेवन से कमजोर हुई अग्नि पर ये गुरू पदार्थ लाद दिये जाते हैं। अन्तिम चरण में तो अत्याचार की पराकाष्ठा हो जाती है, आईस्क्रीम, कस्टर्ड जैसे शांत, गुरु एवं दुग्ध जन्य पदार्थों का सेवन। चायनीज आहार के कृत्रिम पदार्थ, पान में प्रयुक्त होने वाले रासायनिक पदार्थ, सिरका जैसे खट्टे पदार्थ प्रचुर मात्रा में होते हैं। इन का सेवन करने के बाद दूध या दूध से बने पदार्थ खाना विरुद्ध दोष हो जाता है। परिणाम होता है अम्लपित्त, उदरशूल, उल्टियां, अतिसार जैसे कष्टदायक रोग।

क्रम ज्ञान का व्यवहारिक अनुभव

यदि किसी व्यक्ति को भोजन के बाद तुरन्त पानी पीने की आदत हो तो वह सामान्य रूप में ठीक होती है। परन्तु यदि किसी को प्रतिश्याय (जुकाम–सर्दी), श्वास (दमा), कास (खांसी), शिरःशूल (सिरदर्द) की शिकायत हो तो उसके लिये भोजन के बाद पानी पीना अयोग्य होता है। उस व्यक्ति को भोजन के बाद एक मुहूर्त तक पानी नहीं पीना चाहिए। (१ मुहूर्त = ४८ मिनट)। इस सामान्य क्रम को अपनाकर इन रोगों के रोगी अपने रोग से छुटकारा पा सकते हैं।

एक रोगी को मठ्ठा पीने की बुरी आदत थी। बिना मठ्ठे के वह खाना ही नहीं खा सकता था। जब उन्हें मठ्ठा बंद करने के लिये कहा गया तो उन्होंने सत्याग्रह किया। अब हमें पथ्य सेवन तो करवाना था इसलिये एक योजना बनायी। उनसे कहा आप भोजनान्त में छाछ न पीकर भोजनारम्भ में छाछ पियें। इससे आपका संतोष भी बना रहेगा और हमारा पथ्य भी और इस योजना द्वारा हमारा इच्छित भी साध्य हुआ।

इस प्रकार आहार सेवन क्रम का विचार करें। हम रोजाना २ से ४ बार कुछ न कुछ खाते हैं। दो बार भोजन करने का क्रम १०० वर्ष तक करना है अर्थात् २x३६५x१००=७३,००० बार भोजन करना है। जब कोई कार्य एक बार भी करने के लिए बुद्धिमान व्यक्ति क्रम योजना को बनाकर ही प्रवृत्त होता है, तब ७३,००० बार करने वाला क्रिया के प्रति वह क्रम नहीं अपनाएगा ? आप समझदार हैं, स्वयं ही सोचे।

पुराने अंक बिना डाक खर्च के

जीवनीय के पाठक पुराने अंकों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिये हमें बहुत से पत्र भेजते हैं। ऐसे सभी जिज्ञासु पाठकों के लिये, जो पुराने उपलब्ध अंक प्राप्त करना चाहते है, इस समय हमारे पास उपलब्ध अंकरें की सूची हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं।–

१९८९	१९९०	१९९१	१९९२	१९९३
शरद रु. ५	शिशिर–वसंत रु. ८	वसंत रु. ६	शिशिर रु. ८	ग्रीष्म–वर्षा रु. १०
हेमन्त रु. ५	वर्षा रु.५	ग्रीष्म रु. ६	वसंत–ग्रीष्म रु. १०	शरद रु. १०
	शरद रु. ५	वर्षा रु. ६	वर्षा रु. १०	
	हेमन्त–शिशिर रु. ८	शरद रु. ६		
		हेमन्त रु. ६		

ये सभी अंक ऊपर लिखी हुई पुरानी दरों पर बिना डाक –शुल्क के उपलब्ध हो सकते हैं यदि आप कम से कम रु. २५ मूल्य की पत्रिकाओं का ऑर्डर एक साथ भेजकर उसका अग्रिम भुगतान मनीऑर्डर या बैंक ड्राफ्ट द्वारा करें। पत्रिकाएं रजिस्टर्ड डाक से मंगाने के लिए रु. ७ जोड़ कर भेजें।

ऐलर्जी या प्रत्यूर्जता

डा. दिनेश सिंह, लखनऊ

आधुनिक युग में ऐलर्जी एक सुपरिचित बीमारी का नाम है। किसी को धुएँ से ऐलर्जी होती है किसी को इत्र से, किसी को सिन्थेटिक कपड़ों से और किसी को खान-पान से। प्रयोगों द्वारा यह प्रमाणित हो चुका है कि ऐलर्जी जठराग्नि के मन्द होने से उत्पन्न होती है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के अनुसार यदि ऐसे द्रव्य का सेवन किया जाए जो शरीर के लिए असात्म्य या प्रतिकूल हो तो शरीर के अनुकूल न होने के कारण रक्त में पहुंचने के पश्चात वह अपनी प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है। जिसके परिणाम स्वरूप शरीर में कुछ वैकारिक लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। इसे ही हम ऐलर्जी या प्रत्यूर्जता कहते हैं। यह विकृति रोग प्रतिरोधक क्षमता के घट जाने पर होती है।

सामान्यतया जब त्वचा पर अचानक किसी प्रकार का आघात लगता है या त्वचा किसी रसायन के सम्पर्क में आ जाती है अथवा कीट-पतंगे आदि काट लेते हैं तो वह तुरन्त लाल रंग की हो जाती है तथा चकत्ते निकल आते हैं। परन्तु यदि बार-बार ऐसा होता रहे तो कालान्तर में इसका प्रभाव त्वचा पर नहीं पड़ता और वह लाल नहीं होती। उसी प्रकार किसी असात्म्य द्रव्य का बार-बार सेवन करने से उस द्रव्य का शरीर पर उक्त वैकारिक लक्षण दिखाई नहीं पड़ता है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान भी ऐजर्ली के विषय में यही विचार रखता है और आयुर्वेद विख्यात महर्षि चरक ने भी इसी बात की पुष्टि की है।

"असात्म्यमपि क्रमेणोपयुज्यमानमदोषं भवति"।

अर्थात् असात्म्य द्रव्यों का क्रमपूर्वक सेवन करने से वे क्रमशः दोष रहित हो जाते हैं।

"रोगाः सर्वे पिमन्देऽग्नौ"।

अर्थात् सभी रोग अग्नि मन्द होने पर उत्पन्न होते हैं। यह आयुर्वेद का एक सामान्य सिद्धान्त प्रतिपादित है। महर्षि चरक ने कहा है-

"अग्निदोषान्मनुष्याणां रोगसंघाः पृथग्विधाः"

अर्थात मनुष्य में अग्नि दोष उत्पन्न होने के फलस्वरूप अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

वाग्भट्ट ने भी इसका प्रतिपादन किया है।

"प्रतिज्ञा वाग्भट्टस्य न मन्दाग्निं विना रुजः।"

अर्थात मन्दाग्नि के बिना कोई रोग उत्पन्न नहीं होता है।

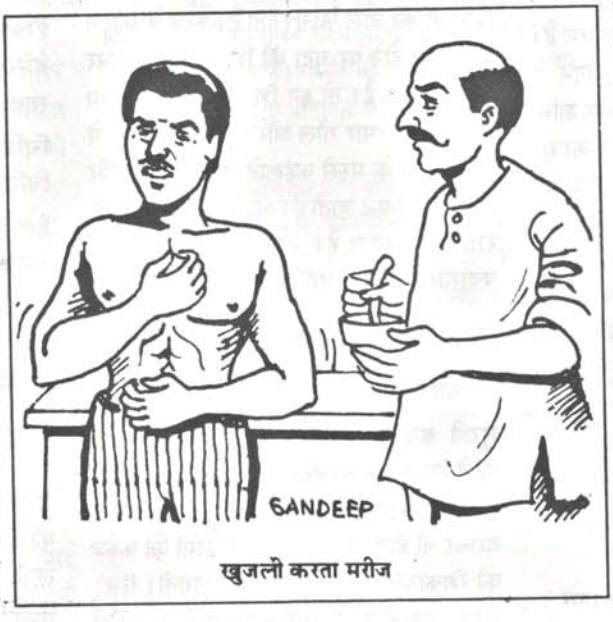

खुजली करता मरीज

आधुनिक मतानुसार जब प्रोटीन द्रव्यों का पाचन पूर्ण रूप से नहीं हो पाता है तो वह पूर्ण रूप से अमीनो ऐसिड्स के रूप में परिवर्तित न होकर अर्धपक्व या आम अवस्था में अर्थात् पेप्टाइड के रूप में ही जब रक्त में प्रवेश कर जाती है तो उससे ऐलर्जी की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसका अर्थ यह हुआ कि जठराग्नि की मन्दता के कारण आहार का परिपाक उचित रूप से न होने के कारण जो अपक्व या अर्धपक्व रस निर्मित होता है, जिसे आयुर्वेद में आमविष कहा गया है जब कफ दोष के साथ मिलकर रस धातु के द्वारा सम्पूर्ण शरीर में भ्रमण करता है, तो त्वचा के नीचे पहुंच कर वह रसायनों में अवरोध उत्पन्न कर देता है जिसके परिणाम स्वरूप रस त्वचा के नीचे संचित हो जाता है जिससे त्वचा पर उभार उत्पन्न होकर वहाँ पर चकत्ते या ददोरे से बन जाते हैं। यकृत के कार्यों में विषमता होने से भी ऐलर्जी के होने की प्रबल सम्भावना होती है। आधुनिक मतानुसार यकृत ही अग्नि का प्रधान स्थान है और वह भी आहार के परिपाक एवं चयापचयी क्रिया में भाग लेता है। इसके अतिरिक्त यह रक्त में स्थित विष का निर्हरण करता है अर्थात् पित्त द्वारा उन्हें शरीर से बाहर निकाल देता है। अतः रक्त में जब हिस्टामिन आदि विष द्रव्य उत्पन्न होते हैं तो यदि यकृत उन्हें अपने प्राकृतिक कर्म द्वारा शीघ्रतापूर्वक शरीर के बाहर निष्कासित नहीं कर देता तो ऐलर्जी उत्पन्न हो जाती है।

ऐलर्जी में उपयोगी आयुर्वेदिक औषधि

इस रोग में जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाली अर्थात दीपन-पाचन औषधियाँ दी जाएँ तो रोगी को अवश्य लाभ होता है। इसी प्रकार जो द्रव्य यकृत विकार को दूर करे तथा उसका शोधन करे उसके प्रयोग से भी ऐलर्जी का शमन होता है। त्रिफला, कुटकी, गुडूची, दारुहरिद्रा आदि द्रव्य यकृत का शोधन करके उसकी विकृति को दूर करते हैं। इनके समुचित प्रयोग से ऐलर्जी का प्रकोप शांत होता है।

आयुर्वेदिक विकृति विज्ञान के अनुसार ऐलर्जी रस रक्त दोषज विकार है जिसका स्थान संश्रय एवं अभिव्यक्ति स्थान त्वचा है। इसलिए इसमें रक्त शोधन एवं कफ शामक चिकित्सा दी जाती है जिससे तत्काल लाभ होता है। मंजिष्ठा, खदिर, गन्धक आदि द्रव्यों और उनसे निर्मित योगों का इस व्याधि पर अच्छा प्रभाव देखा गया है।

शेष पृष्ठ १० पर

बवासीर और हौम्योपैथिक उपचार

डा. रवीन्द्र प्रकाश, कानपुर

शरीर के गुदा भाग में होने वाला कष्टदायक रोग जो मुख्यतः लगातार कब्ज रहने के कारण होता है। इस रोग में गुदा की मांसपेशियों में मसूर या चने के बराबर मस्से निकल आते हैं, ये मस्से गुदा के अन्दर या बाहर हो सकते हैं इन मस्सों के कारण रोगी को मल त्यागते समय बहुत तेज पीड़ा व जलन होती है।

रोग के कारण

अनुचित खान–पान बवासीर का मुख्य कारण है। जैसे सही समय पर खाना न खाना, दिन में थोड़ा–थोड़ा करके कई बार खाना पाचन शक्ति कमजोर होने पर भी बहुत गरिष्ठ भोजन करना, जिससे खाया गया भोजन पूर्ण रूप से पच नहीं पाता और कब्ज की समस्या उत्पन्न हो जाती है। कब्ज रहने पर पाखाना कष्ट के साथ व गांठदार होता है, जिससे गुदा की मांसपेशियों पर दबाव पड़ता है और मसूर या चने के दाने के बराबर छोटे–छोटे मस्से निकल आते हैं जो संख्या में तीन होते हैं। जब इन मस्सों पर गांठदार और कड़े मल का दबाव पड़ता है तो मरीज को बहुत अधिक दर्द गुदा की मांसपेशियों में होता है, कभी–कभी मल त्यागने के बाद भी मरीज को काफी देर तक दर्द बना रहता है।

बवासीर पैदा करने वाले प्रमुख आहार : उड़द की दाल, सिघाड़ा, कढ़ी, बंडा, अरुई, शराब, आलू, मांसाहार और बहुत ज्यादा मसालेदार भोजन व शराब का अधिक प्रयोग।

अनुचित रहन–सहन : यह रोग उन लोगों में भी अधिक देखने को मिलता है, जो एक जगह ज्यादा देर तक बैठे रहते हैं, इसके अलावा उन लोगों को भी यह रोग होता है– जो दिन में अधिक सोते हैं, कठोर व ऊँचे नीचे आसन पर तथा ठंडी जगह बैठते, हाजत होने पर भी मल त्यागने नहीं जाते है।

पैतृक दोष : यदि मां या पिता में से किसी एक के भी क्रोमोसोम में बवासीर के लक्षण हैं तो उनकी संतानों में भी इस रोग के होने की सम्भावना अधिक होती है।

बवासीर गुदा में होने वाला रोग है। गुदा बड़ी आंत का अन्तिम भाग होता है जिसमें मांसपेशियों के तीन मांसल उभार होते है, जिन्हें प्रवाहणी, विसर्जनी व संवरण कहते हैं और साधारण भाषा में कॉच कहते हैं, इसकी भीतरी दीवार, एक पतली झिल्ली जैसी होती हैं इस भाग में लम्बी–लम्बी उभरी व दबी हुई रचनाएं होती है, इस भीतरी दीवार पर अशुद्ध रक्त ले जाने वाली शिराओं का जाल फैला रहता है। कब्ज के कारण मल कड़ा होने पर गुदा की शिराओं पर बराबर दबाव पड़ता है। तो इन शिराओं पर उभार आ जाता है, ये उभार गोल और नोकदार होते है, ये ही बवासीर के मस्से कहलाते है। खूनी बवासीर में ये शिराएं फट जाती हैं। और साफ व चमकदार रक्त आने लगता है। जबकि सूखे मस्से वाली बवासीर में शिराएं नहीं फटतीं।

लक्षण

बवासीर साधारणतः दो प्रकार के होते है–

सूखी बवासीर : मस्से सूखे, कड़े, मटमैले काले रंग के चने या मटर के दाने के बराबर होते है, कभी–कभी इनका आकार बेर की गुठली के बराबर भी होता है। मुख्य रूप से रोगी को कब्ज की शिकायत होती है। भूख नहीं लगती। सिर, कमर, जांघ में दर्द के साथ कभी–कभी जुकाम भी रहता है। अगर पित्त और गैस के कारण बवासीर है तो मस्से लाल या नीले रंग के होते है।

खूनी बवासीर : मस्से नीले रंग के होते हैं इनमें से कभी–कभी रक्तस्राव भी होता है। इसमें मस्से कड़े न होकर कोमल होते हैं तथा उनमें बहुत अधिक जलन व खुजली होती है। कभी–कभी हल्का बुखार भी रहता है। शारीरिक कमजोरी के साथ–साथ भूख भी नहीं लगती। अगर रक्त अधिक निकल जाता है तो रक्ताल्पता के कारण रोगी का शरीर सफेद पड़ जाता है। कब्ज की शिकायत नहीं रहती है अपितु उसका मल पतला होता है। रोगी को प्यास बहुत लगती है। ठण्डे खाद्य पदार्थ खाने की अधिक इच्छा होती है। मस्सों पर ठण्डा भींगा कपड़ा या बर्फ का टुकड़ा रखने पर जलन और दर्द में आराम मिलता है।

बवासीर के मस्सों से ज्यादा मात्रा में रक्त निकलता है, कभी–कभी ऐसे रोगी को खून चढ़ाना पड़ सकता है।

इस रोग में अधिक खून निकल जाने के कारण मरीज चिन्तित हो जाता है कि पता नहीं किस गम्भीर व विशेष रोग के कारण खून निकल रहा हैं। बवासीर के कारण जो खून निकलता है, वह पिचकारी के समान तेज धार वाला होता है और बेसिन पर पूरा फैल जाता है। यह रक्त मल के साथ निकलता है।

चिकित्सा : बवासीर रोग में दो प्रकार की चिकित्सा की जाती है–

१– औषधि द्वारा

२– शल्य चिकित्सा या सर्जरी द्वारा,

रोग के लक्षणानुसार कुछ होम्योपैथिक औषधियाँ प्रस्तुत की जा रहीं हैं–

आर्सेनिक ऐल्बम : बवासीर के मस्सों में जलन जो कि ठण्डे जल या ठण्डे वस्तु के प्रयोग से न घट कर गरम जल या गरम वस्तु के प्रयोग से घटती है। ऐसी स्थिति में आर्सेनिक ऐल्बम की ३० पोटेंसी की दवा रोज चार चार घन्टे पर लेनी चाहिए।

ऐलोज़ साँक्रोट्राइना : पाखाने के वेग के साथ मलाशय मस्से के साथ बाहर निकल आता है। और मस्सों में बहुत अधिक खुजली और जलन होती है जो कि ठण्डे पानी से घटती है। रोगी को अधिकतर पतले दस्त आते है। इसमें पाखाना वायु निकलने के साथ या पेशाब के वेग के साथ अनजान में हो जाता है। पेट में वायु होती है ऐसी स्थिति में ऐलोज़ सांक्रोट्राइना की ३० पोटेन्सी की दवा रोज तीन तीन घन्टे पर लेनी चाहिए।

एस्क्युलस हिपोकैस्टेनम : मलद्वार में कुछ गड़ते रहने सा दर्द, कमर में अकड़न मलद्वार भींगा मालूम होता है जलन और खुजली के साथ मस्सों में बहुत अधिक दर्द, यकृत की जगह भारी

मालूम होता है। पाखाना हो जाने के बाद भी मलद्वार में बहुत देर तक जलन और दर्द रहता है। साधारणतया मस्से से रक्त स्राव नहीं होता परन्तु बीमारी पुरानी हो जाने पर होता है, बवासीर का दर्द कमर और पीठ तक फैलता है जो विश्राम करने पर घटता है और हिलने डुलने पर बढता है। इन लक्षणों में मरीज को एस्क्युलस की ३० पोटेन्सी की दवा लेनी चाहिए अगर रोग पुराना है और रक्तस्राव भी हो रहा है तो इस दवा की १००० पोटेन्सी की एक खुराक हफ्ते में सिर्फ एक बार लेनी चाहिए।

ऐसिड क्यूरियेटिकम : मस्से का रंग नीला होता है और उसमें बहुत दर्द होता है। छूने पर, कपड़ा लग जाने या ठण्डा पानी लगते ही तकलीफ बढ़ जाती है। गरमी से या गरम पानी से तकलीफ कम होती है। गर्भावस्था में बवासीर की बीमारी होने पर भी यह दवा फायदा करती है। पेशाब करते समय बवासीर का मस्सा बाहर निकल आता है। यह सब लक्षण होने पर मरीज को ऐसिड क्यूरियेटिकम की ३० पोटेन्सी की दवा तीन तीन घन्टे पर लेनी चाहिए।

एमोनिकम कार्बोनिकम : मल कड़ा, गांठदार और बहुत कष्ट के साथ निकलता है। रक्तस्रावी बवासीर ऋतु (मासिक धर्म) के समय बढ़ जाती है और मलद्वार में खुजली होती है। पाखाने के समय मस्सा बाहर निकल आता है और बाद में भी बहुत तकलीफ होती है। मरीज को एमोनिकम कार्बोनिकम की ३० पोटेन्सी की दवा चार-चार घन्टे पर लेनी चाहिए। रक्तस्राव अगर अधिक हो रहा हो तो ३० पोटेन्सी की दवा दो-दो घन्टे पर लेनी चाहिए और आराम मिलने के बाद सुबह दोपहर और शाम एक-एक खुराक कर देनी चाहिए।

कैप्सिकम : बहुत अधिक दर्द के साथ खूनी बवासीर, मल त्यागते समय मिर्चे जैसी जलन इस लक्षण पर कैप्सिकम ३० पोटेन्सी की दवा तीन-तीन घन्टे पर लेनी चाहिए।

कोलिन्सोनिया : बहुत अधिक रक्तस्राव और कब्ज, पेट में वायु भरी रहती है और शूल होता है कब्ज के कारण तीन-तीन, चार-चार दिन तक पाखाना नहीं होता है। फिर एक दिन तीसरे पहर या शाम को पाखाना होता है और बहुत कड़ा मल निकलता है। अगर बवासीर के मरीज में यह सब लक्षण है तो कालिन्सोनिया ३० पोटेन्सी की दवा रोज तीन-तीन घन्टे पर लेनी चाहिए।

हैमामेलिस वरजिनिका : बेहद अकड़न का दर्द और जलन के साथ मलद्वार से बहुत अधिक मात्रा में रक्तस्राव तथा साथ में कमर में बहुत दर्द, ऐसे समय में हेमामेलिस मदर टिंचर का बाहरी प्रयोग करने और हैमामेलिस ३० पोटेन्सी की दवा चार-चार घन्टे पर खाने से बहुत शीघ्र आराम मिल जाएगा।

नक्स वोमिका : मरीज को कब्ज बना रहता है। लगातार पाखाना जाने की इच्छा तथा वेग रहता है। परन्तु पाखाना ठीक से नही होता। मस्से से रक्त का आना, मलद्वार पर खुजली होना, रोगी जो कुछ खाता है उसे ठीक से पचा नहीं पाता पेट में हल्की सी ऐंठन या दर्द बना रहता है। रात्रि जागरण, बहुत ज्यादा भोजन करने, शराब पीने, नशीले प्रदार्थो का सेवन करने वालो के लिए यह दवा बहुत उपयुक्त है। मरीज को नक्स वोमिका ३० पोटेन्सी की दवा प्रतिदिन चार चार घन्टे पर लेनी चाहिए।

रैटानाहिया : बदबूदार और पानी की तरह दस्त आते है। पाखाने के पहले, बाद और समय जलन, मलद्वार से रस निकलना, ठण्डे पानी के प्रयोग से आराम मिलता है। एटानहिया ३० पोटेन्सी की दवा चार चार घन्टे पर लेनी चाहिए।

सल्फर : कब्जियत बहुत रहती है। ऐसा मालूम होता है जैसे पेट में बायी तरफ बहुत अधिक वायु इकटठी हो रही है। पेट के निचले भाग में खींचने की तरह दर्द होता है, रोग के बहुत पुराने होने पर, मलद्वार पर डंक मारने जैसा दर्द, जलन और कुटकुटाहट होती है। बवासीर का रक्त स्राव बन्द होकर सरदर्द प्रभृति बीमारियां हो जाएं तो यह दवा बहुत फायदा करती है। इस दवा की २०० पोटेन्सी की एक खुराक सुबह के समय हर चौथे या पांचवें दिन लेनी चाहिए। अगर नक्सवोमिका देने के बाद सलफर दिया जाए तो बहुत फायदा होता है।

थूजा ऑक्सिडेण्टालिस : मलाशय के अंदरूनी भाग पर मस्सा निकलने के साथ मलद्वार पर फटे घाव हो उससे रस निकले ऐसी स्थिति में थूजा २०० की एक खुराक हर पाचवें दिन या या १००० पोटेंसी की एक खुराक हफ्ते में एक बार लेनी चाहिए।

वर्जित आहार

बवासीर के रोगी को मिर्च मसाले का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए। जो भोजन शीघ्र न पच सकें वह भोजन नहीं लेना चाहिए। बहुत देर तक खड़ा रहना और थकना ठीक नहीं रहता। लगाने वाली दवा को गरम पानी या वेसलीन के साथ लगाना चाहिए।

पृष्ठ ८ का शेष

ऐलर्जी या प्रत्यूर्जता

चिकित्सा

निम्न प्रकार के योग गुणकारी है-

(१) आरोग्यवर्धिनी- २- रत्ती; संजीवनी - २ रत्ती; गंधक रसायन - २ रत्ती; उपरोक्त की एक-एक मात्रा ४-४ घण्टे पर शहद या गुनगुने जल के साथ दी जानी चाहिए।

(२) सारिवाद्यासव - २ तोला समान जल के साथ भोजनोपरांत दो बार लें।

(३) त्रिफला चूर्ण - ३ माशा रात में सोते समय गरम दूध के साथ लें।

यदि ऐलर्जी जनित श्वास रोग हो तो उक्त चिकित्सा के साथ श्वास की भी चिकित्सा की जानी चाहिए। इसी प्रकार अन्य विकृतियाँ होने पर उनके शामक योगों के साथ उपर्युक्त योग दिये जाने चाहिए।

ऐलर्जी रोग में अपथ्य- उड़द, आलू, चावल, केला, कद्दू, दही आदि रोगी को नहीं देना चाहिए। जठराग्नि को मन्द करने वाले श्लेष्मवर्धक, गुरु, विष्टम्भी, मधुरस प्रधान द्रव्य भी ऐलर्जी के रोगी के लिए वर्जित हैं।

पथ्य आहार- लघु, सुपाच्य, अग्निदीपक, पाचक एवं श्लेष्माशामक आहारद्रव्य ऐलर्जी के रोगी के लिए लाभप्रद हैं।

एक्जीमा की होम्योपैथिक चिकित्सा

डॉ. पी. अली, पट्टांबि

छाजन, पामा या एक्जीमा ऐलर्जी से उत्पन्न एक चर्मरोग माना जाता है। मोटे तौर पर यह दो प्रकार का तीव्र तथा चिरकारी होता है। इसके निर्माण में अनेक रोगियों में एक प्रकार के तंत्रिका विक्षोभ का इतिहास पाया गया है। कुछ रोगियों में कारण का पता ही नहीं चलता। प्रायः एक्जीमा के रोगी रासायनिक पदार्थ, घानी, धूप, साबुन, पौधे, खाद्य, औषध आदि बाह्य प्रत्यूर्जताजनकों (ऐलर्जेनों) के प्रति अतिसंवेदी होते हैं। साथ ही लिवर की खराबी, कृमि, जठरांत्र पथ संक्रमण आदि आभ्यंतर ऐलर्जनों के प्रति भी संवेदी होते हैं। एक्जीमा शरीर पर कहीं भी हो सकता है विशेष रूप से चेहरे पर और हाथ-पैरों में। सूक्ष्मजैविक विषों, कवक तथा हारमोन असंतुलन से भी ऐलर्जी के लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि एक्जीमा की उत्पत्ति काफी जटिल है।

तीव्र एक्जीमा कुछ ही हफ्तों में अदृश्य हो जाता है जबकि चिरकारी एक्जीमा बरसों, यहां तक कि जीवन भर पीछा नहीं छोड़ता। यह रोग सभी आयु वर्ग में हो सकता है। तीन वर्ष से कम उम्र के बच्चों में यह अनुचित आहार, गाय के दूध या अंड़े की सफेदी के प्रति संवेदिता और कब्ज तथा उल्टी जैसी जठरांत्र गड़बड़ियों से होता है। आकार और लक्षणों के आधार पर इसे चकत्ता, मुहांसा, फफोला, छाला आदि नामों से पुकारते हैं। एक्जीमा शब्द यूनानी भाषा से आया है और इसका अर्थ 'उबल पड़ना' है।

एक्जीमा एरीथिमेटोसम : त्वचा पर लाल पैबंद जैसी विकृति। इस ललछौंह सतह पर छोटी-छोटी फुन्सियां उभर सकती हैं। थोड़ी सूजन भी होगी। कुछ समय बाद सतह रूखी और कड़ी तथा तहदार हो जाती है। किसी-किसी को हल्की खुजली भी होती है। चकत्तों की शिकायत प्रायः अधेड़ और वृद्धों में पायी जाती है।

एक्जीमा पैपुलोसम : त्वचा अपेक्षाकृत सूखी रहती है और आकार में प्रायः सुई की नोक जैसी फुंसियां हाथ-पैर और जोड़ों पर उभर आती हैं, जिनमें खुजली रहती है। खुजलाने पर ये फुंसियां फूट जाती हैं जिससे थोड़ा सा मवाद निकल आता है जो सूखकर सूक्ष्म पपड़ियों का रूप ले लेता है।

एक्जीमा प्युस्ट्युलोसम : फफोले वास्तव में छोटे-छोटे मवाद भरे फोड़े होते हैं। इस प्रकार का एक्जीमा चकत्तों और मुहासों की अगली अवस्था हो सकती है। सपूय पुटिकाएं फूटती हैं जिनसे सपूय पदार्थ रिसता है जो सूखने पर पीला-हरा हो जाता है। अक्सर यह स्याह पपड़ी का रूप ले लेता है। सूजन और खुजली भी हो सकती है। जब यह एक्जिमा बालों के सिरे पर होता है तो बाल उलझ कर जटा बन जाते हैं और बड़ी-बड़ी कष्टदायक पपड़ियां बन जाती हैं। तपेदिक की प्रवृत्ति वाले बच्चों को एक्जिमा का यह प्रकार प्रायः हो जाता है।

एक्जीमा वेसिक्युलोसम : इस प्रकार की एक्जिमा में चकत्तेदार त्वचा पर छोटे-छोटे छाले पड़ जाते हैं जिनमें पारदर्शी लसीका तरल भरा होता है। खुजलाने पर ये फूटते हैं और इनसे एक क्षारीय स्राव निकलता है जो सूखने पर पतली पपड़ी का रूप लेता है। चिड़चिड़े और अधीर व्यक्तियों की हथेलियों और हाथों पर यह प्रायः पाया जाता है। जब यह रोग पुराना हो जाता है तो इसे एक्जीमा रुब्रम कहते हैं और जब पपड़ियां सूख कर खाल उतर जाती है तो इसे एक्जीमा स्क्वैमोसम कहते हैं।

एक्जीमा फिस्सम : इस प्रकार की एक्जीमा में दरार और छिद्र नजर आते हैं। दरार और छिद्र शोथज परिवर्तनों के कारण सूखी और कठोर स्थिति में त्वचा के आकुंचन से उत्पन्न होते हैं। कभी-कभी गहरी दरारों से रक्तस्राव भी हो आता है।

एक्जीमा रुब्रम : चिरकारी एक्जिमा का यह तीव्रतम रूप है। यह एक्जिमा ऊपर लिखे किसी भी प्रकार से हो सकता है। इसे गीला अपरस भी कहते हैं। सतह लाल और गर्म होती है और नीचे सीरम-सपूय निःस्राव होता है। बच्चों को यह प्रायः चेहरे, शिरोवल्क और अधः शाखा पर होता है। वयस्कों में यह अक्सर जोड़ों, वलियों, चूतड़, ऊरुसंधि आदि पर होता है।

निदान

रोगी इतिहास का अध्ययन करने से निदान आसान होता है। इससे कष्ट, पपड़ी और प्रगति पर ध्यान देने से ठीक निदान हो पाता है। प्रायः इसकी उत्पत्ति खुजली के एक घेरे के रूप में होती है। दाद, बलतोड़, विसर्प आदि चर्मरोगों से यह एक अलग व्याधि है।

उपचार

होमियोपैथी एक्जीमा को चर्मरोग या सतही ऊतकों की व्याधि नहीं मानती। मूलतः इसमें शरीर रचना का भी योग है। मस्तिष्क, हृदय, फेफड़े आदि मर्मांगों की सुरक्षा के लिए त्वचा पर छाजनीय विस्फोटन उभर आते हैं। अतः सभी तीव्र लेप पूर्णतः वर्जनीय है। जिन रोगियों को उचित आभ्यंतर औषध दिये बगैर तीव्र स्थानिक लेपों द्वारा रोग दबा दिया जाता है उन्हें भविष्य में दमा, हृदय की विकृतियाँ और मस्तिष्क रोग तक हो सकते हैं। खान-पान और व्यवहार नियंत्रित करना पड़ता है। बोतल से दूध पीते बच्चों की रोगावस्था में आहार परिवर्तन से आश्चर्यजनक परिणाम हुए हैं। धुलाई हमेशा लाभदायक है लेकिन सभी चर्मरोगों में अत्यधिक धुलाई हानिकारक है।

एक्जीमा में विशेष रूप से व्यवहृत होमियोपैथिक औषधियां - एगेरिकस मस्केरियस, क्लमेटिस इरेक्टा, ग्रेफाइट्स, हेपर सल्फ, लाइकोपोडियम, मोजेरियम, सेपिया और सल्फर हैं।

उपयुक्त औषधि का चयन, समस्त लक्षणों पर विचार करते हुए रोगी की प्रकृति के अनुसार किया जाता है।

शुभ कामनाओं सहित

लखनऊ पेपर डिस्ट्रीब्यूटर्स

१०-ए, कैपर रोड,
लालबाग, लखनऊ - २२६ ००१
फोन : कार्यालय - २४९९०२, २३७४१६
निवास - ७४१५१

थोक विक्रेता :

जे. के. पेपर मिल्स, रायगढ़
रोहित पल्प एडं पेपर मिल्स लि., बंबई
हिन्दुस्तान पेपर कार्पोरेशन लि., कलकत्ता

कुछ सौन्दर्यवर्धक वनौषधियां

वैद्य वी.पी. उपाध्याय, हरिद्वार

संसार के समस्त पौधों में कोई न कोई गुण अवश्य है। हम जिन पौधों को हानिकारक समझ कर नष्ट कर देते है। उनमें भी गुण अवश्य होता है। भले ही हम उस गुण से अनभिज्ञ हों। आयुर्वेद में प्रत्येक शाक का गुण बताया गया है। और कहा गया है कि जिन वनस्पतियों के वर्णन छूट गये हैं। उनके गुणों की जानकारी स्थानीय लोगों से गोपालकों से, भेड़ चराने वालों से, वनचरों से पूछ कर मालूम की जाए।

कुछ पौधे ऐसे भी हैं जिनमें नीरोग करने के साथ साथ सौंदर्य बढ़ाने का भी गुण होता है। उनका प्रयोग अनादिकाल से हो रहा है। उनके कोई पार्श्व दुष्प्रभाव नहीं पाये गये हैं उल्टे पार्श्व लाभ पाये गये हैं। ऐसी कुछ वनस्पतियां निम्न हैं–

शिकाकाई (*एकेसिया कोनसिन्ना*) : इसे बालों को धोने के काम में लाते हैं अतः साबुन में या शैंपू में रीठे के साथ मिलाते हैं। यह बालों का झड़ना रोकता है, बाल बढ़ाता है और रूसी मिटाता है।

घीकुआर (*ऐलो वेरा*) : इसकी पत्तियों का बाह्य एवं आभ्यंतर प्रयोग अनेक विकारों में किया जाता है। बालों के झड़ने, धूप से झुलसने और त्वग्विकारों में यह अत्यंत असरकारी है।

शतावरी (*ऐसपरेगस रेस्मोसस*) : इसकीजडें मालिश के तेलों और झुरियां मिटाने वाली क्रीमों में मिलायी जाती है।

नीम (*ऐज़ाडिरेक्टा इंडिका*) : इस वृक्ष का प्रत्येक अंग औषध और प्रसाधनिक महत्व का है। यह त्वचा, बाल तथा नेत्र की देखभाल मे अत्यंत कारगर है। कवक रोगों में भी यह लाभकर है।

लटकन (*बिक्सा ओरेलाना*) : इस के बीजों से लाल रंग प्राप्त होता है जिससे अंजन बनाते हैं और ओठ रंगे जाते हैं तथा इसे शैंपू मे भी मिलाया जाता है।

आंबा हल्दी (*करक्यूमा आमाडा*) : कील मुहासों और धब्बों को मिटाने के लिए इस्तेमाल किये जाने वाले मुख उपचार की पट्टियों में इसका प्रयोग होता है।

हल्दी (*करक्यूमा लौंगा*) : हल्दी का कंद त्वचा के रूप–रंग के संरक्षण संवर्धन में प्रयुक्त होता है। विवाह से पूर्व दूल्हा–दुलहिन को हल्दी और पीली सरसों का उबटन लगाने का रिवाज भारत में पुराने जमाने से आज तक चला आ रहा है।

भृंगराज (*ऐक्लिप्टा ऐल्बा*) : यह बालों को काला रखने और बढ़ाने के लिए प्रसिद्ध बूटी है।

आंवला (*ऐम्ब्लिका आफिसिनेलिस*) : आंवले का फल बलवर्धक, बुद्धिवर्धक, और पुनर्यौवन प्रदान करने वाला होता है तथा बालों की देख भाल के लिए भी प्रयुक्त होता है।

मुश्क दाना (*हिबिस्कास एबेलमोसकस*) : इसके सुदर लालफल ओठों की देख भाल में काम आते हैं। इसका औषधीय महत्व भी है।

मजीठ (*रुबिया कार्डिफोलिया*) : त्वचा और होठों पर लगाने के लिए श्रेष्ठ यह कील–मुंहासों और त्वचा के धब्बों को मिटाने के लिए लगाने और खाने को दिया जाता है।

इनमें से अधिकतर द्रव्य अकेले प्रयुक्त होते है। इन्हें विविध प्रकार से मिलाने से योगवाहिता भी हो जाती है।

स्वास्थ्य का रहस्य : अपक्वाहार

डा. बी.एस. बेदी, दिल्ली

पुराने युग में मानव अपक्वाहार लेकर अपना जीवन निर्वाह करता था। क्योंकि उस काल में विज्ञान ने उन्नति नही की थी। ज्यों-ज्यों विज्ञान ने उन्नति की त्यों-त्यों प्राणी तले भुने पदार्थों को अधिक स्वादिष्ट बनाकर खाने लगा और फिर रोग ग्रस्त होने लगा। वर्तमान युग में विभिन्न प्रकार के खाद्य उपलब्ध हैं। सब्जी को उबालकर पुनः चिकनाई में छौंक लगाकर उस समय तक पकाते हैं जब तक वह बिल्कुल खुश्क न हो जाए जबकि ऐसा करने से उसके पौष्टिक गुण नष्ट जाते हैं। सब्जी जिस पानी में उबाली जाती है वह पानी फेंक दिया जाता है। उसमें जीवनोपयोगी तत्व एवं प्राकृतिक लवण नष्ट हो जाते है। ताजे फल, हरी सब्जियां, मेवे इत्यादि में प्राकृतिक लवण, विटामिन, प्रोटीन, तथा चिकनाई आदि तत्व बड़ी मात्रा में पाये जाते है और उसके उपयोग से शारीरिक, मानसिक एवं आध्यत्मिक स्वास्थ्य की ही रक्षा नहीं होती बल्कि मन में प्रसन्नता और शरीर में शक्ति भी पैदा होती है। पकाने की क्रिया द्वारा खाद्य को सुपाच्य बनाने का दावा किया जाता है पर प्रकृति तो उसे वृक्ष या पृथ्वी पर ही पका देती है। आग पर पकाने से उसके सब विटामिन नष्ट हो जाते हैं और कच्चा खाने पर वह फल या सब्जी विटामिनों से भरपूर रहती है।

अपक्वाहार की अर्थनीति

कच्ची सब्जी या फल खाने से श्रम एवं धन की बचत होती है और पकाने से ईंधन, आँच एवं धुएँ से तलते भुनते खाद्य के विटामिन नष्ट हो जाते है। जिससे खाने वाले को कोई लाभ नही होता है। यहां कुछ लाभकारी उपाय भी बताए जा रहे हैं।

मुख, गला, दाँतः पित्त प्रकोप के कारण मुख में छाले पड़ गए हों या मुखपाक हो तो आँवले की छाल को घिसकर शहद से लेप करने से लाभ होता है। पत्तों के कषाय से गरारे करने से भी आराम मिलता है। आँवले में खाद्योज सी प्रचुर परिमाण में होता है। इसलिए स्कर्वी में यह बहुत उपयोगी होता है। जिन बच्चों के दाँत कमजोर हों, ठीक तरह से न निकलते हों, बहुत भंगुर हो या शीघ्र ही कीड़े से लग जाते हों तो उन्हें रोज ताजा आँवला खाना चाहिए। आँवले को चबाने या दाँतो पर घिसने से दन्त रोगों में लाभ होता है।

आँवला विटामिन सी का प्रचुर स्रोत

जितना विटामिन सी आँवला में रहता है उतना सम्भवतः किसी अन्य फल में नहीं होता है। ताजे आँवले के रस में नारंगी की अपेक्षा बीस गुना अधिक विटामिन सी रहता है। फलों और सब्जियों को गर्म करने, पकाने या सुखाने से उनके विटामिन का अधिकांश या सम्पूर्ण अंश नष्ट हो जाता है परन्तु आँवला इस नियम का अपवाद है। पकाने पर भी इसका विटामिन नष्ट नहीं होता है। इसके तीन कारण हैं एक तो आँवले में इतना विटामिन होता है कि कुछ नष्ट होने पर भी काफी बच जाता है। दूसरे आँवले में खटास होती है और खटास विटामिन की रक्षा करती है और उसे नष्ट नहीं होने देती। तीसरे आँवले में कुछ अन्य पदार्थ भी हैं जो विटामिन सी की रक्षा करते है। इसलिए आँवले के मुरब्बे में भी कुछ विटामिन सी रह जाता है। इनको सुखाकर खाने से भी विटामिन नष्ट नहीं होता।

जिगर के रोग

आँवले का चूर्ण यकृत और आमाशय के लिए बहुत गुणकारी है। सूखे आँवले का चूर्ण पाण्डुरोग, कामला और अजीर्ण के लिए उपयोगी है। श्वास संस्थान के लिए उपयोगी यह फल अति गुणकारी है। इसका विधि पूर्वक बनाया हुआ च्यवनप्राश बहुत ही गुणकारी होता है जो कफ, पित्त, जुकाम, खाँसी में लाभकारी है। क्षय की प्रवृत्ति वाले प्राणी को प्रतिदिन च्यवनप्राश के सेवन से लाभ होता है। कैल्शियम, लौह, लवण तथा अनेक शक्तिप्रद औषधियों का मिश्रण होने से च्यवनप्राश सब अंगों की पुष्टि करता है और इसका नियमित सेवन शरीर में रोग प्रतिरोधक शक्ति पैदा करता है। मस्तिष्क के रक्त संचार में कुछ बाधा हो, सिर व नेत्रों में जलन हो या सिरदर्द, आँवले का शुद्ध तेल सिर पर मलने से लाभ होता है। ऑवले के जल से सिर धोना भी गुणकारी है। आँवले को आम की गुठली के साथ पीसकर सिर पर लेप करने से बाल घने एवं लम्बे होते हैं। आँवले का रस मधुमेह में भी लाभकारी है। मधुमेह की पिपासा शान्त करने के लिए ताजा फलों को चूसना उत्तम है। बीजों का फाण्ट भी मधुमेह में दिया जाता है।

गृह उद्यानः थोड़ी सी भूमि भी हमारे स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है। गर्मी या जाड़ा, शहर या गाँव आप थोड़े से साधनों से अपने लिए पूरे साल क्लोरोफिल युक्त उपयोगी खाद्य पैदा कर सकते हैं। खिड़की की खाली जगह में गमले एवं छोटी-छोटी क्यारियों में शाक पैदा कर सकते हैं। शहरों में छत के ऊपर गमले में मूली, गाजर, खीरा, ककड़ी, पत्ता गोभी, मेथी, भिण्डी, टमाटर, हरे पत्ते वाले शाक आदि उगाए जा सकते हैं जिनके उगाने से प्राणिमात्र को अनेक लाभ प्राप्त हो सकते हैं।

अपक्वाहार खाने की कला

इस विज्ञान के युग में पक्वाहार ने ऐसी जड़ जमा ली है कि लोग उसको त्यागने का नाम ही नहीं लेते हैं। यदि आप पक्वाहार नहीं छोड़ सकते तो अपने भोजन में ६० प्रतिशत अपक्वाहार लें ताकि आपको सब प्रकार के खनिज लवण प्राप्त हो सकें।

समाज रोगी क्यों

रोग का मुख्य कारण तली-भुनी चीजों का अधिक प्रयोग करना, मेवे के बने पदार्थ, मिठाइयाँ, चाय, कॉफी और दुष्पाच्य भोजन का प्रयोग है, पकाने और तलने से अनेक तत्व नष्ट हो जाते हैं जिससे उसका स्वाद कम हो जाता है और उसकी पूर्ति कृत्रिम साधनों से पूरी की जाती है जिसके कारण भूख से अधिक खाया जाता है जो रोगों का कारण बनता है।

इस विज्ञान के युग में अनेक व्यसन प्रचलित है। मांस, मदिरा, सिगरेट, बीड़ी, तम्बाकू, चाय, कॉफी आदि-आदि। अगर आप स्वस्थ जीवन व्यतीत करना चाहते हों तो अपने जीवन में अपक्वाहार लाएँ और प्रकृति के नियमों का पालन करें।

वैद्य अरविन्द कुमार चन्दूलाल मेहता

वैद्य अरविन्द कुमार चन्दूलाल मेहता उन विभूतियों में से एक हैं जिन्होंने एक दशक से अधिक समय से आयुर्वेद के जादू से लोगों का उपचार किया है। अत्यन्त साधारण और विनम्र स्वभाव के वैद्य जी महाराष्ट्र के पुणे जिले के छोटे से गांव 'वडगांव निम्बालकर' में चिकित्सा करते हैं। आपका बाल्यकाल बहुत कष्ट में गुजरा। चार वर्ष की आयु में ही आपके पिताजी का देहावसान हो गया और आपकी माताजी ने बहुत कष्ट उठाकर आपका लालन पालन किया। १५ वर्ष की आयु में आपके ऊपर परिवार का भार आ पड़ा, परिवार का व्यवसाय कृषि होने के कारण युवा अरविन्द कुमार को यही व्यवसाय अपनाना पड़ा। अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति और लगन से आपने सभी बाधाओं पर विजय पाई और दिन बीतने के साथ समुचित आर्थिक स्थायित्व को प्राप्त किया।

आज ५४ वर्ष की अवस्था में आपको लोगों की विभिन्न बीमारियों की आयुर्वेद द्वारा मुफ्त चिकित्सा कर के शांति और संतुष्टि का अनुभव होता है। आधुनिक भौतिकवादी विश्व में ऐसे बहुत कम व्यक्ति मिलते हैं जो अपनी संपत्ति और समय का समाज के लाभ के लिये उपयोग करते हैं। इन्होंने इस महान कार्य का प्रारम्भ आठ वर्ष पहने अपनी गुरु अजीतमती माताजी की सलाह पर किया जो दिगम्बर जैन सम्प्रदाय के महान आचार्य शान्तिसागर महाराज के शिष्यों में से एक हैं। इन्होंने अपने गुरु से २००० विभिन्न आयुर्वेदिक औषधियों की जानकारी प्राप्त की। आप की विशेषता है कि आप केवल वानस्पतिक औषधियों का ही उपयोग करते हैं। आप धार्मिक रूप से दिगम्बर जैन होने के कारण विशुद्ध शाकाहारी हैं और आपका दृढ़ विश्वास है कि मनुष्यों को दवाओं के लिये जानवरों का वध करने का कोई अधिकार नहीं है।

सामान्य बीमारियों जैसे सर्दी, ज्वर, सिरदर्द, मोच, आँख की बीमारियों, बिच्छू का डंक आदि के साथ-साथ आप गम्भीर रोगों जैसे मधुमेह, फालिज (लकवा), पीलिया, वृक्क रोग, बन्ध्यत्व, मानसिक रोगों और जन्म से विकलांग आदि के हजारों रोगियों की चिकित्सा कर चुके हैं। उनके पास देश के सभी भागों से रोगी आते हैं। इस छोटे से गांव में वह रोगियों हेतु कैम्प का आयोजन करते हैं। वैद्य जी ने गंजेपन की चिकित्सा में विशेषज्ञता प्राप्त की है। गंजेपन की चिकित्सा बहुत सरल है क्योंकि इसमें मुंह से कोई औषधि नहीं लेनी होती है। चिकित्सा की अवधि १५-२० दिन की है। पहले रोगी के सिर के सभी बाल मूंड दिये जाते हैं। इसके पश्चात एक आयुर्वेदिक मलहम मुंडित सतह पर लगा दिया जाता है यह धूप में सूख जाता है इसे चार दिन तक लगा रहने दिया जाता है। इस दौरान रोगी को यह निर्देश दिया जाता है कि उसके सिर पर पानी न लगने पाये। इसके पश्चात एक चूर्ण से विशेष प्रकार के तेल में घोलकर सिर पर लगा दिया जात है। यह मिश्रण सिर पर १० दिन तक लगा रहता है इसके पश्चात रोगी सिर का ठंडे पानी से अच्छी तरह से धोता है। इस प्रकार लगभग १५ दिन के बाद सिर के सतह पर काले बाल उगने लगते हैं।

गुर्दे की खराबी वाले रोगियों की चिकित्सा सफलतापूर्वक की जाती है। वैद्य जी ने सात ऐसे रोगियों की चिकित्सा की है जिनकी डायलिसिस के पश्चात डाक्टरों ने आशा त्याग दी थी, आश्चर्यजनक रूप से इन्हें वैद्य जी की चिकित्सा से लाभ हुआ।

अधिक शराब पीने के कारण हुई यकृत की सूजन में वैद्य जी की आश्चर्यजनक चिकित्सा पद्धति है। इस प्रकार के रोगी को कोई खाने वाली दवा नहीं दी जाती है बल्कि एक तेल बाहर से लगा दिया जाता है जो त्वचा के अन्दर जा कर चार पांच दिन में लाभ पहुंचाता है।

वैद्य जी एक प्रकार का चूर्ण रोगियों को देते हैं जिससे किसी प्रकार का फोड़ा पांच दिन में ही ठीक हो जाता है। रक्त में हीमोग्लोबिन की कमी पान के पौधे की ऊपर की पत्तियों से ठीक हो जाती है। इनके अनुसार जामुन के बीज और फल मधुमेह का नियन्त्रण करने में सहायक हैं। वैद्य जी को एक महत्वपूर्ण सफलता अस्सी वर्ष के लकवाग्रस्त व्यक्ति की चिकित्सा से मिली थी जो ६ महीने की चिकित्सा के बाद चलने फिरने लगा। वैद्य जी ने ल्यूकोडर्मा (त्वचा पर सफेद दाग) के १० रोगियों की चिकित्सा की जिसमें से ३ शत प्रतिशत ठीक को गये और ७ रोगियों में अच्छे परिणाम मिल रहे हैं।

वैद्य श्री मेहता यह नहीं चाहते कि उनको प्राप्त आयुर्वेद का ज्ञान उनकी मृत्यु के साथ खो जाय, वे उसे किसी ऐसे योग्य व्यक्ति को देना चाहते हैं जो सामान्य जनता की निःस्वार्थ भाव से सेवा कर सके। आज कल की भौतिकवादी दुनिया में उनके लिये क्या ऐसा व्यक्ति ढूंढ पाना सम्भव होगा ?

भेंटकर्ता - डॉ. के. सदाशिवन पिल्लई, प्रोफेसर एस. जी. साठे, तिरुवल्ला बारामती

स्वास्थ पत्रिका

जीवनीय

के पाठक बनिए

अतिथि संपादकीय

वैद्य देवेन्द्र नाथ मिश्र, लखनऊ

अतीत में भारतवर्ष में स्त्रियों को समाज में विशेष मान व स्थान प्राप्त था। इस देश की तो मान्यताएं ही इस प्रकार थीं– 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः।'

अर्थात देवताओं की उपस्थिति के लिए नारी की पूजा महत्वपूर्ण थी। ऐसे राष्ट्र में आज नारी का शोषण, उस पर अत्याचार, उसके स्वास्थ्य की उपेक्षा आदि विचारणीय प्रश्न है।

सामान्यतया भी स्वास्थ्य की स्थिति देश में अच्छी नहीं है। बच्चों की बढ़ी मृत्युदर से लेकर लगभग सभी उष्णकटिबंधीय बीमारियों जैसे टीबी., कुष्ठ, मलेरिया, फाइलेरिया, कालाजार आदि के अतिरिक्त पीलिया, मानसिक, हृदय रोग, कैंसर व कुपोषण में भी हमारा देश काफी आगे है। इन सबमें भी महिलाओं के स्वास्थ्य की समस्याएं न केवल विशिष्ट हैं वरन् गंभीर भी हैं पर उनके प्रति उपेक्षा गांव के चिकित्सा केन्द्रों और शहरों में, सभी जगह पाई जाती है।

प्राचीन भारतीय साहित्य एवं आयुर्वेद में स्त्री स्वास्थ्य पर काफी विस्तार से ध्यान दिया जाता रहा है। प्राचीन संहिता ग्रंथों में स्त्री रोगों पर 'योनिव्यापद' शीर्षक के अंतर्गत विभिन्न स्त्री रोगों का विवेचन किया गया है। यह क्रम बाद के ग्रंथों में और बढ़ता गया है। इसका अनुभव आज तक भारत के ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में पाया जा सकता है।

आज के आधुनिक परिवेश में भौतिक सुविधाओं एवं नित्यप्रति के नए अविष्कारों की चकाचौंध के बावजूद भी इस देश में इन प्राचीन चिकित्सा के आयामों के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। इसी कड़ी में आपकी सुपरिचित जीवनीय का यह प्रयास है कि उस पूज्या नारी के स्वास्थ्य विषयक कुछ मोतियों को पिरो कर आपके समक्ष प्रस्तुत किया जाए।

जीवनीय संपादक मंडल के इस अंक को संपादित करने का अनुरोध मैं टाल नहीं सका पर कतिपय व्यक्तिगत कारणों से मैं समुचित समय न दे सका। इस अंक को संवारने में संपादक मंडल की सहायता मेरी सहयोगी डा. पुष्पा असवाल ने की है। वे सभी इस उपयोगी जानकारी के लिए बधाई के पात्र हैं।

अगले अंक के प्रमुख आकर्षण

मानसिक रोग विशेषाँक

मन क्या है?
शरीर-मन संबंध
स्किजोफ्रीनिया
भूलना एक आदत या रोग
अनिद्रा कारण एवं निवारण
मानसिक तनाव का उपचार
मानसिक द्वन्द्व

एवं अन्य सभी स्थायी स्तंभों सहित

महिलाओं का आहार और स्वास्थ्य

वैद्य पूर्णचन्द्र जैन, लखनऊ

स्वास्थ्य की दृष्टि से आहार का अत्यंत महत्व है। आहार से ही हमें शक्ति प्राप्त होती है, शरीर का संवर्द्धन होता है व शरीर के अंग-प्रत्यंग जीवनोपयोगी स्थिति आहार पर ही निर्भर करती है। आहार के कार्य और उसके द्वारा शरीर की वृद्धि जिस प्रकार पुरुषों में होती है उसी प्रकार स्त्रियों में होती है। स्त्री एवं पुरुषों की रचना में अनेकविध साम्यता होते हुए भी कुछ विभिन्नता पायी जाती है जिससे उनके शरीर में अनेक क्रियाएं पुरुषों से पृथक पायी जाती हैं। इन विविधताओं की आपूर्ति भी आहार से होती है।

विभिन्न अवस्थाएं- महिला के जीवन को तीन भागों में विभाजित करते हैं।

बाल्यावस्था: यह अवस्था जन्म से रजोदर्शन के पूर्व की अवस्था है जो १२ वर्ष तक रहती है।

युवावस्था या प्रजननावस्था: जो १२ से लेकर ५० वर्ष तक रहती है।

रजोनिवृत्ति की अवस्था जो ४०-५० वर्ष के बाद से प्रारंभ होती है। प्रथम अवस्था विकास की है द्वितीय परिपक्व जीवन की और अंतिम ह्रास की अवस्था है।

सामान्यतः आहार द्रव्यों के दो भेद किये जाते हैं। **१-शक्ति उत्पादक २-शक्ति अनुत्पादक** दोनों प्रकार के आहार द्रव्य शरीर की वृद्धि एवं स्थिति को आवश्यक हैं। बाल्यावस्था में शरीर कोशिकाओं की वृद्धि एवं उनमें दृढ़ता प्रदान करने के लिये समुचित मात्रा में प्रोटीन युक्त आहार, द्रव्यों की आवश्यकता होती है। प्रोटीन की मात्रा शरीर वृद्धि के लिये २.५ ग्राम प्रति किलो वजन के अनुपात में देना चाहिये। प्रोटीन मांस, दूध, अंडा, मछली, चना, अरहर, उड़द, मूंग, मसूर आदि की दालें, राजमा, मूंगफली, सोयाबीन, गेहूं, मक्का, बाजरा, लोबिया आदि आहार द्रव्यों में रहता है। एक दाल के स्थान पर विभिन्न दालों के मिश्रण का सेवन अधिक हितकारी होता है। बाल्यावस्था में वसा को पचाने वाले इन्जाइम कम मात्रा में होने से वसा युक्त द्रव्य कम मात्रा में सेवन करना चाहिये। वसायुक्त द्रव्य घी, अंडा, दूध, मछली का तेल एवं तिल, सरसों, मूंगफली, सूरजमुखी आदि वानस्पतिज तेल होते हैं। इनका प्रयोग शक्ति उत्पादक होते हुए भी इनके पाचन एवं अवशोषण की क्रिया में मंदता होने से इन्हें अल्पमात्रा में दिया जाता है। वसा युक्त द्रव्यों में विटामिन ए एवं डी उपस्थित रहने से इनका उपयोग आवश्यक होता है। विटामिन ए विभिन्न रोगों के प्रति प्रतिकारक क्षमता बढ़ाता है रतौंधी नहीं होने देता तथा नेत्र की ज्योति में वृद्धि करता है। विटामिन डी अस्थियों की वृद्धि एवं विकास के लिए आवश्यक है साथ ही रिकेट एवं सूखा रोग से रक्षा करता है।

ऊष्मा की उत्पत्ति मुख्य रूप से कार्बोज द्रव्यों से होती है। ये सुपाच्य, सस्ते और सरलता से प्राप्त हो जाते हैं। कार्बोज द्रव्यों में चावल, चना, मक्का, बाजरा, आलू, शकरकंद, केला और विभिन्न शर्करा होती है।

युवावस्था अथवा प्रजननावस्था महिलाओं में रजोदर्शन में प्रारम्भ हो जाती है परंतु प्रजनन अंगों का विकास १८ वर्ष की आयु के पूर्व नहीं हो पाता है। यह स्थिति ४०-५० वर्ष की आयु तक, जब तक रजोदर्शन रहता है विद्यमान रहती है। इस अवस्था में प्रत्येक मास रजोदर्शन के साथ स्त्री के गर्भाशय से काफी मात्रा में रक्त निकल जाता है। महिला के शरीर पृष्ठ का क्षेत्रफल पुरुष की अपेक्षा कम होता है इससे उसके रक्त में लाल रक्तकणों की संख्या भी पुरुष की अपेक्षा कम पायी जाती है। अधिकतर भारतीय महिलाएं आहार पर ध्यान नहीं देती और कुटुम्ब में बचा हुआ आहार ही उनकी आपूर्ति करता है। आहार संतुलित नहीं होता और प्रोटीन, वसा, कार्बोज शक्ति उत्पादक द्रव्य तथा लवण जल एवं विटामिन्स शक्ति अनुत्पादक द्रव्य संतुलित मात्रा में न लेने से उसके शरीर में रक्त की उत्पत्ति कम होती है। सामान्यतः कार्य करने वाले पुरुष को २५०० कैलोरी शक्ति उत्पादक आहार चाहिये जबकि महिला के शरीर पृष्ठ क्षेत्रफल के कम होने से २१०० कैलोरी ऊर्जा उत्पादक आहार चाहिये इसमें प्रोटीन १०० ग्राम, वसा ५० से १०० ग्राम तथा कार्बोज ४०० ग्राम होना चाहिये, साथ ही खनिज लवण एवं विटामिन्स की पूर्ति हेतु समुचित मात्रा में हरी शाक तरकारियां एवं फलों की आपूर्ति भी चाहिये। महंगे फलों की अपेक्षा सस्ते फलों का उपयोग अधिक लाभकारी होता है। गर्भावस्था में महिला के आहार में ५०० कैलोरी ऊर्जा उत्पादक आहार अधिक चाहिये जिसमें २० ग्राम प्रोटीन का आधिक्य हो। बच्चे के जन्मोपरांत दूध पिलाने वाली महिला के आहार में १००० कैलोरी अधिक ऊर्जा उत्पादक आहार चाहिये जिसमें प्रोटीन का आधिक्य (४० ग्राम) हो। उक्त प्रोटीन दुग्ध दाल एवं अन्य वानस्पतिज के रूप में लेना अधिक लाभकारी है। महिला में रक्त की अल्पता, कुपोषण, मानसिक श्रम, प्रतिकारक क्षमता की कमी से उत्पन्न रोग जिनमें खूनी पेचिश, फोड़ा फुंसी निकलना, तपेदिक आदि के द्वारा एवं बार-बार गर्भ धारण करने, गर्भपात होने, नकसीर फूटने, मासिक स्राव की अनियमितता, मलेरिया आदि कीटाणुओं के उपसर्ग से हो जाती है। रक्त की अल्पता से स्त्रियों में काम करने में अनिच्छा, थकावट, बेचैनी, कमजोरी, सिरदर्द, चक्कर आना आदि लक्षण रहते हैं।

पांडु अथवा एनीमिया: रक्त की कमी को रक्त क्षय, पांडु अथवा एनीमिया कहते हैं। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में रक्तक्षय के अनुकूल वातावरण होने से उनमें इसका प्रतिशत अधिक होता है। सामान्यतः महिला के रक्त में ४० से ४५ लाख लाल रक्तकण प्रति घन मि.ली. होते हैं। लाल रक्त कणों में हीमोग्लोबिन १४ ग्राम प्रति १०० मि.ली. रक्त में पाया जाता है। श्वास प्रश्वास के द्वारा ग्रहण की गई वायु से आक्सीजन पृथक होकर रक्तगत हीमोग्लोबिन से मिल जाता है और रक्त के माध्यम से ऊतकों में पहुंचकर आक्सीजन ऊतकों में आक्सीकरण करता है

इससे आहार द्रव्यों की धातु पाक क्रिया से विभिन्न कार्यों को करने को ऊष्मा उत्पन्न होती है और वे आहार द्रव्य शरीर की वृद्धि करने में समर्थ होते हैं।

महिला के रक्तगत हीमोग्लोबिन की मात्रा ११ ग्राम से कम होने को पांडु अथवा एनीमिया कहते हैं और पांडु रोग में आहार का वृद्धि के लिये उपयोग नहीं हो पाता। पांडु के कारण स्त्रियों में रोगों की प्रतिकारक क्षमता कम हो जाती है और उनकी प्रजनन क्षमता में विविध उपद्रव उपस्थित होते हैं। स्वस्थ महिला में बच्चे के प्रजनन में एक लीटर अथवा उससे अधिक रक्तस्राव होने पर भी विशेष घातक प्रभाव नहीं होता परंतु रक्तक्षय से पीड़ित महिला में गर्भकाल में २५० मि.ली. रक्तस्राव भी घातक हो सकता है। हीमोग्लोबिन की मात्रा ७ ग्राम होने पर उत्पन्न संतान कम वजन की एवं विविध व्याधियों से आक्रान्त होने वाली होती है। हीमोग्लोबिन की मात्रा इससे भी कम ४ ग्राम तक होने पर हृदय की मांस पेशी में धातु पाक विकृत होने से घातक प्रभाव देखा गया है।

पांडु से बचावः रक्त क्षय, एनीमिया अथवा पांडु से बचाव के लिये स्त्रियों को संतुलित भोजन करना चाहिये। संतुलित भोजन में प्रोटीन एवं कार्बोज उपयुक्त मात्रा में तथा वसा अल्प मात्रा में सेवन करें। जल यथेष्ट लेवें तथा लवण एवं विटामिन्स के लिये हरी सब्जियां मटर, शलजम, गाजर, मूली, गोभी, बथुवा, पालक, पोदीना, धनिया, सरसों, मेथी लौकी, परवल, एवं पत्तेदार सब्जियों का सेवन करें। फलों में पपीता, अमरूद, सेव, संतरा, मोसमी, आंवला, अंगूर, आम, अनार आदि का सेवन करें। नियमित रूप से व्यायाम करें, सुबह उठने पर एक-आध घंटे खुली हवा में घूमा करें तथा नशा एवं व्यसन से दूर रहें।

हीमोग्लोबिन के ठीक निर्माण के लिए उच्चवर्ग की प्रोटीन दूध अथवा अंडे से एवं लौह तत्व हरी शाक तरकारियों से लेवें। पांडु अथवा एनीमिया न होने के लिये स्त्रियों में लौह तत्व की मात्रा पुरुषों की अपेक्षा दुगनी, लगभग २२ मि.ग्रा. प्रतिदिन आवश्यक होती है। गर्भावस्था में लौह की आवश्यकता अत्यधिक बढ़ जाती है और गर्भावस्था में लौह की आवश्यकता १००० मिग्रा. तक हो जाती है जिसकी पूर्ति को कुछ मात्रा आहार द्रव्यों से तथा कुछ मात्रा लौह की गोलियों, लौहभस्म, मंडूर भस्म आदि के प्रयोग से की जाती है।

महिलाओं को अक्सर अनियमित मासिक धर्म की शिकायत होती है। मासिक धर्म होने पर रक्त अधिक मात्रा में निकल जाता है जिससे खून की कमी से चक्कर आना पिंडलियों, कमर एवं जंघा में पीड़ा, सिरदर्द, काम में मन न लगना अदि लक्षण होते हैं। इन को रोकने के लिए संतुलित आहार, नियमित व्यायाम एवं लौह की आपूर्ति द्वारा रक्त की कमी रोककर उक्त शिकायतों को दूर किया जा सकता है।

इसी प्रकार स्त्रियों में गर्भावस्था में खून की कमी न होने के लिये आहार पर विशेष ध्यान देना चाहिये। इस अवस्था में आहार स्वयं एवं बच्चे के पोषण के लिये उपयुक्त मात्रा में लेना चाहिये। आहार पौष्टिक, संतुलित एवं लौह, केल्शियम मैंग्नीज युक्त, विटामिन सी, बीकम्पलेक्स, बी १२, फालिकअम्ल आदि की विशेषता युक्त होना चाहिये। आहार दो बार के स्थान पर अल्पमात्रा में चार बार करके लेंवे। गर्भावस्था में सात मांह तक हल्का व्यायाम करें इससे संतानोत्पत्ति में आसानी रहती है गर्भ का विकास पूर्णतया होता है और माता को प्रजनन में अधिक रक्तस्राव नहीं होता।

संतुलित परिवारः महिलाओं को स्वस्थ रहने और स्वास्थ्य को संरक्षित करने के लिये अधिक बच्चों के जन्म से परिवार का आर्थिक ढांचा गड़बड़ा जाता है और बच्चे का सम्यक् विकास न होने से उसका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। बार-बार गर्भ धारण करने और गर्भपात होने से अथवा कराने से माता का स्वास्थ्य गिर जाता है और रक्ताल्पता के कारण अनेक रोग आक्रान्त करके पेचीदगियां पैदा कर देते हैं। इन कारणों से कई बार माता की मृत्यु भी हो जाती है। अतः कम बच्चे पैदा हों और दो बच्चों के मध्य कम से कम पांच वर्ष का अंतर हो।

महिलाओं के स्वास्थ्य के संरक्षण से ही समाज एवं राष्ट्र उत्तम निरोग एवं प्रबुद्ध समाज की संरचना कर सकता है।

रजोनिवृत्ति की अवस्थाः रजोनिवृत्ति के उपरांत महिलाओं का आहार सुपाच्य पौष्टिक, शाकाहारी एवं कार्बोज युक्त होना चाहिये, खनिज लवण एवं विटामिन उपयुक्त मात्रा में तथा रेशा प्रधान आहार द्रव्यों वाला होना चाहिये जिससे प्रतिदिन के कार्य ठीक प्रकार से सम्पन्न होते रहें। रजोनिवृत्ति के उपरांत आहार की मात्रा कम होने पर भी उसकी पौष्टिकता में कोई अंतर नहीं पड़ता। रजोनिवृत्ति के उपरांत सामान्यतः आहार में पचास वर्ष की आयु तक ३ प्र.श. कैलोरी, ५० से ७० वर्ष की आयु तक १०.५ प्र.श. कैलोरी और इसे ऊपर की आयु में ९० प्र.श. कैलोरी ऊर्जा उत्पादक आहार कम कर देना चाहिये। इस अवस्था में दुग्ध के रूप में प्रोटीन सेवन करना अधिक लाभकारी है।

रजोनिवृत्ति से महिलाओं में अनेक शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन होते हैं। स्तनग्रन्थियों का संकोच उनमें मृदुता, बाह्य जननांगों का संकोच, शारीरिक लज्जा, संकोच आदि में कमी हो जाती हैं। इन्हें प्राकृतिक स्थिति मानकर धैर्य एवं संयम का व्यवहार करें। मानसिक चिन्ता एवं शोक आदि से दूर रहे और रजोनिवृत्ति को अनिवार्य स्वाभाविक घटना समझकर व्यवहार करें।

रस तथा दोष प्रभाव

रस	दोष प्रभाव	
	कोप	प्रशमन
मधुर, अम्ल, लवण	कफ	वात
कटु, तिक्त, कषाय	वात	कफ
कटु, अम्ल, लवण	पित्त	--
मधुर, तिक्त, कषाय	--	पित्त

कुछ सरल सौंदयवर्धक व्यायाम

– उमेश पाण्डे, इंदौर

मोटे तौर पर जब हम सुन्दरता का आकलन करते हैं, तब चेहरे की सुन्दरता ही विशेष रूप से हमारी दृष्टि में होती है। तीखे नाक नक्श पतले–पतले होंठ, खूबसूरत आँखें, लम्बे बाल, गोरा रंग आदि बातों को हम सुन्दरता का आधार मान लेते हैं। जबकि ऐसा है नहीं। सुन्दरता का सीधा संबंध हमारे सुगठित शरीर से है। शरीर का सौंदर्य जब कम हो जाता है तब मन भी खुश नहीं रहता। चेहरे पर उदासी सी छायी रहती है और ऐसी स्थिति में सब कुछ "ठीक" होने के बावजूद हम जिन्दगी का पूरा–पूरा आनन्द नहीं उठा पाते। आज की आपा–धापी में एक साधारण आदमी जिस तरह से शारीरिक और मानसिक तनावों को झेल रहा है, उसके बीच भी ऐसे बहुत कम मौके हैं, जहां शारीरिक सौंदर्य की रक्षा की जा सके। लेकिन ऐसे मौके नहीं हैं, यह नहीं कहा जा सकता। शरीर को सुगठित बनाने के लिए यदि आप एक बार निर्णय कर लेते हैं तो मौके अपने आप निकलने लगते हैं। यह नहीं भूलना चाहिए कि सारी जिंदगी की हंसी खुशी स्वस्थ शरीर के सौंदर्य पर ही टिकी हुई है। अतः शारीरिक सौंदर्य जिंदगी को सही ढंग से जीने की बुनियाद है।

आजकल देश और विदेश दोनों ही जगहों पर शरीर को सुगठित बनाने के लिए योग की वैज्ञानिकता और उसके प्रभावों को न केवल स्वीकार किया जा रहा है बल्कि बहुत पैमाने पर लोग अब इसे अमल में भी ला रहे हैं। योग के अलावा भी तमाम ऐसे व्यायाम हैं, जो थोड़ी–सी सतर्कता और थोड़े से परिश्रम से ही शरीर के सुगठित सौंदर्य को पैदा कर देते हैं। इन व्यायामों को नियमित रूप से करने पर चेहरे पर चमक आती है और मन खुश रहता है। नियमित व्यायाम आपके मन में जीवन के प्रति आस्था पैदा करता है और आत्मविश्वास को भी बढ़ाता है। इसे करने की नियमितता आपकी कुल आयु में मोटे तौर पर १० वर्ष का इज़ाफा तो कर ही देती है। यहाँ हम कुछ व्यायामों की चर्चा करेंगे। सावधानी यह बरती जानी चाहिए कि शुरुआती दौर में आप इसे कम अवधि तक करें और उसके बाद इसके समय को अपनी क्षमता के अनुसार बढ़ाते जाएँ। तो शुरू कीजिए :–

- चेहरे के आकर्षण को बढ़ाने और शरीर को लोचदार बनाने के लिए
  पंजों के बल सीधें खड़े होइए और अपने एक हाथ को धीरे–धीरे ऊपर की ओर उठाइए, कुछ इस तरह से मानों आप छत को छूने की कोशिश कर रहे हों। इस प्रक्रिया के दौरान सांस को धीरे–धीरे खींचिए। दूसरा हाथ इस स्थिति में आप नीचे ही रखें। अब ऊपर उठाए हुए हाथ को धीरे–धीरे नीचे लाइए और सांस को छोड़ए। साथ–साथ एड़ी को भी जमीन की तरफ लाइए। यह प्रक्रिया इसी तरह दूसरे हाथ को छत की ओर उठाते समय चलेगी।
  यही प्रक्रिया लगभग १२ बार की जानी चाहिए। (चित्र १)
- वक्ष सौंदर्य वृद्धि और फेफड़ों के स्वास्थ्य के व्यायामः
  किसी बड़ी खुली हुई खिड़की अथवा दरवाजे के सामने खड़े हो जाइए। चित्र २ के अनुसार दोनों हाथों को पीछे रखते हुए पंजों के बल खड़े हो जाइए। धीरे–धीरे सांस अंदर खींचिए। जब पूरी तरह सांस ले चुकें तब धीरे–धीरे एड़ी को जमीन की तरफ लाते हुए दोनो हाथों को सामान्य

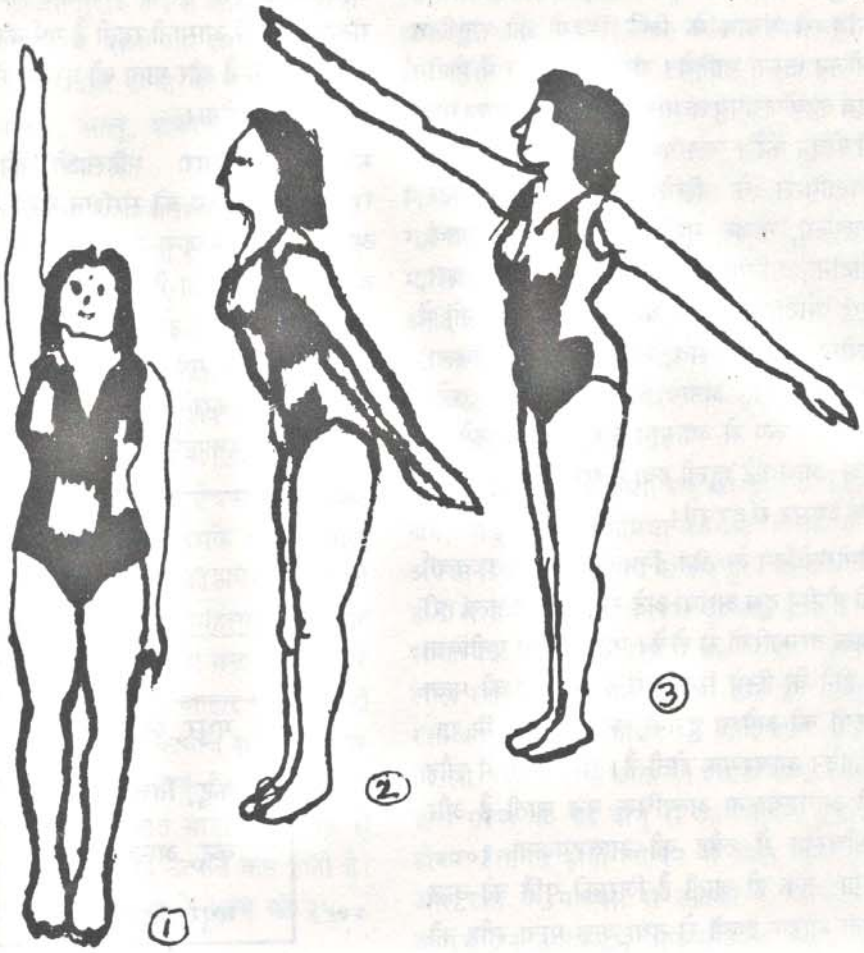

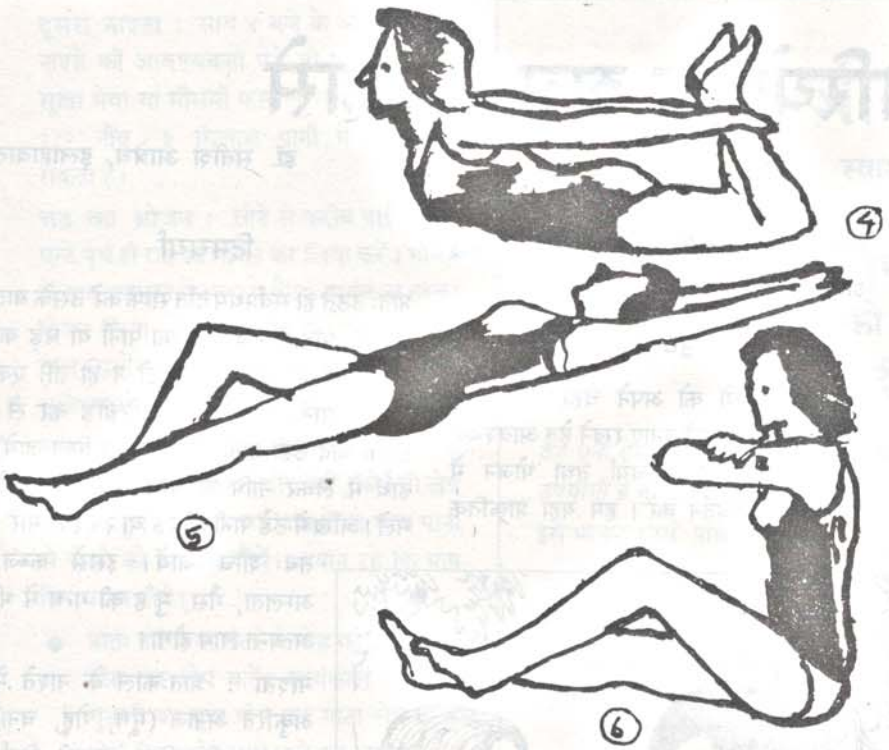

अवस्था में ले आएँ और इसी के साथ-साथ सांस को बाहर निकाल दें। इस अभ्यास को १०-१२ बार करें।

- धड़ को सुडौल बनाने के लिये व्यायामः
पंजों के बल सीधे खड़े होइए और अपने दोनों हाथों को एक-दूसरे के विपरीत दिशा में इस प्रकार खोलिए मानों आप गोल चक्कर में घूमने वाले हो। अब, अपने शरीर को बाएं घुमाइए, कुछ इस प्रकार से कि पूरा घुमाव पेट को केन्द्र में रखकर हो। फिर इसी प्रकार दाहिनी ओर घूमिए। यह व्यायाम थोड़ा थकाने वाला है। अतः पहले इसे चार से छः बार कीजिए, फिर धीरे-धीरे इस प्रक्रिया को बढ़ा कर बारह बार तक कीजिए। (चित्र ३)
- वक्ष व कटि सौंदर्य के लिए व्यायामः
पेट के बल लेटकर, दोनों हाथों से अपने टखनों के जोड़ों को पकड़िए और उन्हें अपने सिर की तरफ लाइए तब तक, जब तक कि पेट और छाती पर आप हल्का तनाव महसूस न करने लगें। यह महसूस होते ही आप पुनः सामान्य स्थिति में लौट जाएँ। यह प्रक्रिया शुरू में दो-तीन बार से ज्यादा न करें, फिर क्षमता के अनुसार इसे बढ़ा सकते हैं। लेकिन यह १२ बार से अधिक नहीं होना चाहिए। (चित्र ४)
- शरीर के मध्य भाग की सुडौलता के लिए व्यायामः
पेट के बल सीधा लेट जाइए। अपने हाथों को ऊपर की ओर करके सीधा तानिए। हथेलियों को खुला रखिए। अब हाथों को अर्द्ध चक्रकार घुमाते हुए दोनों ओर सीधा बिछा दीजिए। कुछ क्षण बाद उन्हें फिर उसी स्थिति में लाइए। इस प्रक्रिया को साथ-साथ घुटनों को भी एक के बाद एक मोड़कर ऊपर तथा नीचे की ओर लाइए। इस प्रक्रिया को १२ से २० बार आप कर सकते हैं। (चित्र ५)
- कमर तथा नितम्ब के सौंदर्य के लिए व्यायामः
जमीन पर हाथ बांधकर बैठिए तथा टांगों को सामने की ओर फैला दीजिए। अब हाथों को बंधी हुई स्थिति में सामने लाइए। साथ ही साथ घुटनों को भी मोड़ते हुए एक के बाद एक पैरों को सिकोड़िए और फिर से फैलाइए। यह प्रक्रिया १५ से २० बार करने से काफी लाभ होता है। २ (चित्र ६)

हमारे कुछ प्रमुख वितरक

नकबी न्यूज एजेंसी
घंटाघर के नीचे, कुतुबखाना
बरेली

सर्वोदय बुक स्टाल
चक्रधरपुर, बिहार

मनराल न्यूजपेपर एजेंसी
नारायणबगढ़, चमोली

बोधनलाल एण्ड कंपनी
शिवाजी स्टेडियम, कनाट प्लेस
नई दिल्ली

राजू बुक डिपो
अजमेरी गेट, नई दिल्ली

एस.के. न्यूज एजेंसी
घंटाघर, कानपुर

कान्ती प्रसाद गुप्ता
रोडवेज बस स्टैंड,
गाजियाबाद

सर्वोदय बुक स्टाल
गोमो, बिहार

आर.ए. दुबे
सिविल लाइन्स, इलाहाबाद

सर्वोदय बुक स्टाल
रेलवे स्टेशन, कानपुर

विद्या मंदिर,
चौक, वाराणसी

दरबार बुक स्टाल
रेलवे स्टेशन, ललितपुर

एम.पी. पब्लीशर्स
फ्रीगंज का चौराहा, उज्जैन

सर्वोदय बुक स्टाल
इलाहाबाद

सर्वोदय बुक स्टाल
चारबाग, लखनऊ

किशोरियों के शत्रु : मुहासे

डॉ. सतीश आत्रेय, इलाहाबाद

किशोरियों को विशेष कष्ट प्रदान करने वाले ये मुहांसे सौन्दर्य की घोर शत्रु हैं। यौवन की दहलीज पर चरण रखते ही चंद्रमा के समान कान्तियुक्त कपोलों पर ग्रहण के समान उभर आई ये पिड़िकायें व झाईंयाँ कभी–कभी तो पूरा चेहरा ही खराब कर देती है।

मुहासों का कारण

शरीर की अन्तःस्रावी ग्रन्थियों से किशोरावस्था के प्रारम्भ में ही यौवन रस का स्राव प्रारम्भ होता है। इस समय यदि पहले से ही शरीर में कुछ विजातीय द्रव्य इकट्ठे हों तब, यौन रस के प्रभाव से शरीर में जो मानसिक व शारीरिक असन्तुलन पैदा होता है वही मुहासों का कारण बनता है। इसका मुख्य कारण शरीर की अपर्याप्त सफाई है। क्योंकि हमारे शरीर में असंख्य रोमकूप होते हैं जिनका काम पसीने को बाहर निकालना होता है। जब हम सौन्दर्य को बढ़ाने की लालच में किसी प्रसाधन का प्रयोग अपने चेहरे पर कर लेते हैं तब इनके छिद्र बन्द हो जाते हैं। इसका कारण मानसिक भी होता है लगातार कई माह तक कब्ज रहने, अधिक गरम मसाला, लाल मिर्च, चाट, अधिक चाय–काफी लेने, मैदे के पदार्थों, तले भुने भोजन का सेवन करने वालों को इस रोग होने की सम्भावना अधिक रहती है। यदि उपरोक्त कारण विद्यमान है तो मुहाँसों पर आप बाहर से चाहे जितना लेप लगाये ये जाएंगे नहीं।

इनके प्रभाव से कभी–कभी तो पूरे शरीर का रक्त दूषित हो जाता है। कुछ किशोरियों को तो शादी के बाद स्वतः इस रोग से मुक्ति मिल जाती है। परन्तु कुछ किशोरियाँ इससे काफी दिनों तक परेशान रहती हैं। कुछ को तो यह वंशानुगत विरासत में भी मिलता हैं। परन्तु हर स्थिति से निपटने हेतु शरीर की पर्याप्त सफाई आवश्यक है।

उपचार

अतः किशोरियों को अपने चेहरे की धवल कान्ति व लावण्य को बनाए रखने हेतु आवश्यक है कि अपनी दैनिक चर्या तथा भोजन में आवश्यक परिवर्तन करें। हम यहां प्राकृतिक चिकित्सा, जलचिकित्सा, भोजन व आयुर्वेद की सम्मिलित चिकित्सा पद्धति लिख रहे हैं यदि आपने इसका पालन किया तो अवश्य इस रोग से मुक्ति होगी।

मुहाँसों से छुटकारा पाने के लिए जीवनीय उपचार करें।

कब्ज की शिकायत वाले भोजन के एक घंटे बाद दोनों समय त्रिफला चूर्ण १ चम्मच की मात्रा गरम जल से लें। इसके बाद भी कब्ज रहे तो रात में सोते समय १ चम्मच पंचसकार चूर्ण गरम पानी से कुछ दिन तक लें। यदि सुबह पानी जैसे दस्त होने लगे तब पंचसकार न लें। इसके बाद सोते समय १० ग्राम गुलकन्द गरम पानी या गरम दूध से करीब १ या दो माह तक ले सकते हैं।

दिनचर्या

प्रातः उठते ही सर्वप्रथम दाँत साफ करें उसके बाद ताँबे के पात्र में रखा रात का पानी या घड़े का ठंडा पानी या (यदि एसिडिटी न हो तो) एक गिलास पानी में आधा नीबू निचोड़ कर लें। इसके बाद ठंडा पानी (जितना ठंडा मिल जाये) हाथ में लेकर नाभि के चारों ओर धीरे–धीरे मलें। आँख में ठंडे पानी की २० या २५ छींटें मारें। तब शौच जायें। इससे कब्ज, अम्लता, गैस, मुँह की गन्ध में भी अत्यन्त लाभ होगा।

नाश्ता : प्रातःकाल के नाश्ते में अंकुरित अनाज (मूंग, गेहूं, चना) अदरख, किशमिश, काली मिर्च, मूली आदि सेंधा नमक के साथ सेवन करें। भुना जीरा सेंधा नमक मिलाकर प्रातः एक गिलास मट्ठे में ले सकते हैं। मूँग का चिल्ला, मौसम के फल तथा गेहूँ का दलिया भी नाश्ते में ले सकते हैं।

दोपहर : दोपहर के भोजन में कम मसाले की मौसमी सब्जियाँ व पूरा भोजन (दाल, चावल, रोटी आदि) और सलाद प्रचुर मात्रा में लें। सलाद में मूली, हरी मिर्च, अदरख, टमाटर, पात गोभी, ककड़ी, खीरा, प्याज, कच्चा लहसुन, गाजर, चुकन्दर, हरी धनिया आँवला आदि लें। दोपहर के भोजन के कुछ देर बाद मौसमी फल, पपीता, अमरूद, संतरा, आम, सेब, केला, गन्ने का रस, अंगूर, अनार, जामुन आदि जो भी उपलब्ध हो अवश्य सेवन करें। दोपहर के भोजन के साथ दही लिया करें। परन्तु रात में दही, खीरा, अमरूद, मूली आदि नहीं लेना चाहिए। ध्यान रखें कि गरम भोजन के साथ फ्रिज का ठंडा पानी कदापि न लें। भोजन चबा–चबाकर लें तथा भोजन के साथ कम से कम पानी पिया करें।

दूसरा नाश्ता : सायं ४ बजे के आसपास यदि नाश्ते की आवश्यकता पड़े तो फलों का रस, सूखा मेवा या मौसमी फल ले सकते हैं अन्यथा १/२ नींबू, १ गिलास पानी में लिया जा सकता है।

रात का भोजन : सोने से करीब ढाई से तीन घन्टे पूर्व ही रात का भोजन कर लिया करें। भोजन के बाद वज्रासन में अवश्य बैंठे। सायंकाल हल्का भोजन लिया करें। गेहूं का दलिया व मूंग की दाल सर्वोत्तम भोजन है। परन्तु आप अपनी सुविधानुसार कुछ भी हल्का भोजन ले सकती हैं।

अब कुछ बाह्य प्रयोग दिये जा रहे हैं। आप को जो भी उपलब्ध हो उसी का प्रयोग करें, कोई भी लेप करने से पूर्व चेहरे पर गर्म भाप दें या गरम पानी से चेहरे को अवश्य धोयें। ध्यान रहे कि भाप सिर पर न लगे।

- प्रातः नारंगी या संतरे के पेड़ की ताजी छाल पीस कर लेप करें। सायंकाल आम की गुठली का गूदा पीस कर मोटा लेप करें। दोनों लेप करीब आधे घन्टे तक लगाये रखें।
- संतरे का छिलका चने के बेसन के साथ पीस कर सुबह शाम लेप करें। यह लेप झाईयों पर भी लाभप्रद है।
- नीम की निंबौली (बीज) मट्ठे (छाछ) में पीस कर सुबह शाम लेप करें।
- मसूर की दाल घी में भून कर पीस लें। इसको दूध के साथ मिलाकर चेहरे पर दिन में दो बार लेप किया करें।
- पीली कौड़ी को गन्ने के सिरके में तीन दिन भिगो कर छाया में सुखा कर रख लें। इसे पानी में घिस कर मुहासों पर लेप करें।
- समुद्रफेन व हल्दी समभाग पीस कर या घिसकर लेप करें।
- यदि मुहासे मवाद वाले हों, तब जायफल पानी में घिसकर लेप करें।
- गाय के दूध में अर्जुन की छाल घिस कर लेप करें।
- सफेद जीरा १० ग्राम, काला जीरा ५ ग्राम पीली सरसों १० ग्राम इसी अनुपात में पीस कर प्रातः सायं लेप करें। यह प्रयोग मुहासों तथा झाईं यों पर भी लाभप्रद है।

जीवनीय

स्वास्थ्य पत्रिका

किसी भी शुभ अवसर पर अपने प्रियजनों को जीवनीय उपहार में दीजिये।

यह एक ऐसी स्वास्थ्य पत्रिका है जो परिवार व समाज के हर सदस्य के लिये न केवल उपयोगी है बल्कि आवश्यक भी है।

इसे भरकर हमारे पास भेजिये

महोदय,

निम्नलिखित व्यक्ति / व्यक्तियों को मेरी ओर से "जीवनीय" एक वर्ष/दो वर्ष/तीन वर्ष के लिये भेजिये। पत्रिका का चंदा मनीऑर्डर/ ड्राफ्ट द्धारा भेज रहा हूं।

हस्ताक्षर

नाम : .....

पूरा पता : .....

.....

.....

नाम : .....

पूरा पता : .....

.....

.....

नाम : .....

पूरा पता : .....

.....

.....

चंदा

एक वर्ष	५० रु.
दो वर्ष	९० रु.
तीन वर्ष	१३० रु.
आजीवन	५०० रु.

कृपया सभी मनीऑर्डर/ड्राफ्ट जीवनीय सोसायटी, लखनऊ के नाम से निम्न पते पर भेजें:

वितरण व्यवस्थापक

जीवनीय,

ई-III/२४९, सेक्टर एच,

अलीगंज, लखनऊ - २२६०२०

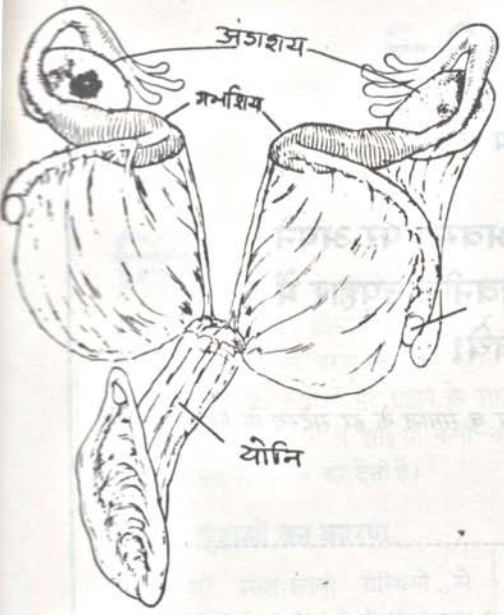

मातृत्व के अंग

वैद्य पूर्ण चन्द्र जैन, लखनऊ

नारी का मातृत्व स्वरूप उसे गौरवपूर्ण एवं सम्माननीय स्थान देता है। मातृत्व को प्राप्त किये बिना नारी संपूर्ण नहीं हो पाती और उसके निज के गुण विकसित नहीं हो पाते। मां बनना नारी का विशेषाधिकार है जिससे वह समाज में विशिष्ट स्थान प्राप्त करती है। वंध्या नारी स्वयं में हीन भावना से ग्रसित रहती है और क्योंकि दुर्भाग्यवश आज के पुरुष प्रधान समाज में उसकी नारी के रूप में प्रतिष्ठा नहीं हो पाती।

नारी के मातृत्व अंगों का संक्षिप्त विवरण यहां प्रस्तुत है।

बाह्य जननांग– नारी के बाह्य जननांगों में निम्न प्रमुख हैं:

१. *भगपीठ* यह भगास्थि के सामने वाला मांसल भाग है। जिस पर बाल निकलते हैं।

२. *बृहत्भगोष्ठ* इसका बाह्य स्तर भी बालों से आच्छादित रहता है। भगपीठ के नीचे दोनों ओर दो मोटे पर्त होते हैं।

३. *लघु भगोष्ठ* वृहत्भगोष्ठ के ऊपरी भाग के पीछे त्वचा के दो छोटे पर्त के रूप में स्थित है।

४. *भगालिन्द* दोनों ओर के लघु भगोष्ठ के बीच में आने वाली त्रिकोणाकार रचना है।

५. *भगशिश्निका* यह भगालिंद के शीर्ष में है। इसके स्पर्श से काम संवेदना होती है।

६. *बार्थोलिन ग्रन्थियां* ये बृहत् भगोष्ठ के पीछे स्थित रहती हैं।

७. *मूत्रद्वार* योनि द्वार से आधा इंच ऊपर छिद्र के रूप में होता है।

८. *योनिद्वार* भगालिन्द में सबसे नीचे की ओर छिद्र के रूप में स्थित है।

९. *योनिच्छदाकला* कौमार्यावस्था में योनिद्वार को ढकने वाली कला है जो प्रथम संभोग में विदीर्ण हो जाती है।

आभ्यंतर जननांग : इससे निम्न अंग आते हैं।

योनि : यह मांसपेशी एवं कला से निर्मित नली है जो बाह्य पृष्ठ से गर्भाशय तक तीन स्तरों में निर्मित है। इसके सामने मूत्रछिद्र एवं पीछे मलछिद्र होता है। प्राकृतावस्था में इसकी भित्तियां मिली रहती हैं। मातृत्व प्राप्ति के लिये पुरुष का शिश्न योनि मार्ग से प्रविष्ट होता है।

गर्भाशयः नासपाती के आकार का मोटी दीवाल का मांसपेशी से निर्मित खोखला अंग है जो श्रोणि अस्थि से निर्मित श्रोणिगुहा में अवस्थित है। इसका ऊपरी भाग चौड़ा है जिसके दोनों किनारों पर डिंबवाहिनी खुलती है। गर्भाशय की दीवाल स्निग्ध सूत्रों से निर्मित् है जिनके संकोच पर पीयूष ग्रन्थि के हार्मोन आक्सीटोसिन का प्रभाव होता है। गर्भाशय के भीतर की श्लेष्मल कला को इन्डोमेट्रियम कहते हैं जिसमें प्रसवोपरांत अथवा गर्भपात में जीवाणु संक्रमण होने पर शोथ हो जाता है। कुमारी में गर्भाशय की लंबाई ०५ सेमी. ऊपरी भाग की चौड़ाई ५ सेमी. और मोटाई २–५ सेमी. होती है। गर्भावस्था में इसकी ६–८ गुना वृद्धि होती है। यहां गर्भ विकसित होकर वृद्धि को प्राप्त करता है और गर्भ के पौषण के लिये इसी में अपरा का निर्माण होता है।

डिंबवाहिनीः यह संख्या में दो होती है और गर्भाशय के ऊपरी भाग के वाम एवं दक्षिण पार्श्व से जुड़ी रहती है। यह श्लेष्मल कला से आवृत मांसपेशी से निर्मित १० सेमी. लंबी दो प्रान्त वाली नलिका है जिसका एक पार्श्व गर्भाशय से जुड़ा रहता है और दूसरा प्रान्त झालरदार सिरे के रूप में उदर की कला में खुला रहता है जो डिंबग्रन्थि के समीप होता है। इसका कार्य डिंबग्रन्थि से प्राप्त डिंब को गर्भाशय में भेजना है। इसकी कला में रोमश कोष होते है जिनकी गति गर्भाशय की ओर होने से डिंब गर्भाशय को जाता है। डिंबग्रन्थि से निकला डिंब पूर्ण परिपक्व नहीं होता। इसी वाहिनी में वह परिपक्वता प्राप्त करता है और शुकाणु के उपस्थित रहने पर शुकाणु और डिंब मिल जाते हैं जिसे निषेचन कहते हैं। निषेचित डिंब ही इस नली के रोमश कोषों की सहायता से गर्भाशय में पहुंचकर उसके अंतरस्तर रूप शैय्या से चिपक जाती है और वहीं पूर्ण वृद्धि को प्राप्त करता है। डिंबवाहिनी में शोथ से उसका खोखलापन नष्ट हो जाता है और डिंब गर्भाशय को नहीं जाने पाता इससे नारी मातृत्व प्राप्त नहीं कर पाती। नारी में डिंबग्रन्थि पुरुष के वृषण की प्रतिनिधि होती है और इसके आन्तरिक स्राव नारी के नारीत्व एवं मातृत्व को परिपक्वता प्रदान करते हैं। डिंबग्रन्थि संख्या में दो बादाम के आकार की भूरे रंग की गर्भाशय के दोनों ओर उससे जुड़े स्नायु से सम्बन्धित रहती है। इसकी रचना में नारी की बाल्य, यौवन, गर्भ एवं रजोनिवृत्ति की अवस्था के अनुरूप अत्यधिक विभिन्नता पायी जाती है। इसके बाह्य स्तर को बीज उपकला कहते हैं जिससे प्राथमिक फालीकल विकसित होते हैं। इनके संयोजी ऊतक में कोषों के छोटे–छोटे द्वीप फैले रहते हैं जिनसे डिंब विकसित होता है।

डिंबग्रन्थि नारीत्व एवं मातृत्व के विकास का प्रधान अंग है। इसके दो प्रकार के कार्य होते हैं। प्रथम बाह्य कार्य जिसके द्वारा परिपक्व डिंब का निर्माण एवं क्षरण होता है। इसका पृष्ठ स्तर बीज उपकला है जिससे प्राथमिक फालीकल का निर्माण होता है। इस प्रकार के प्राथमिक फालीकल नवजात कन्या में ढाई से पांच लाख एवं यौवनावस्था में १० से २० लाख पाये जाते हैं।

रजोनिवृत्ति के उपरांत ये समाप्त हो जाते हैं। प्रत्येक रजोचक्र में एक फालीफल परिपक्व होता है और प्रत्येक डिंब ग्रन्थि में एक मास के क्रम से एक फालीकल परिपक्व होकर डिंब का रूप धारण करता है। इसकी परिपक्वता में पीयूषग्रन्थि का हार्मोन कार्य करता है। मासिक धर्म से सामान्यतः १४ दिन में डिंब परिपक्व हो जाता है और ग्रेफाइन फालीकल से डिंब निर्मित हो जाता है इसे डिंब क्षरण कहते हैं। डिंबक्षरण के उपरांत डिंब डिंबवाहिनी में खींच लिया जाता है। डिंबक्षरण के उपरांत डिंब डिंबवाहिनी के माध्यम से गर्भाशय में जाता है। इस कार्य में ७२ घंटे लगते हैं। डिंब कुछ दिनों तक जीवित रहता है और इस काल में शुकाणु से संपर्क होने पर निषेचित हो जाता है। संपर्क न होने पर मृत्यु को प्राप्त हो जाता है और मासिक धर्म के साथ नारी के गर्भाशय से निकल जाता है। नारी में मासिक स्राव इसी अनिषेचित डिंब को बाहर निकालने को होता है। डिंबक्षरण सामान्यतः मासिक चक्र (आर्त्तवचक) के मध्य में होता है। विभिन्न मास में डिंबक्षरण के समय में भी अंतर होते हैं। डिंब क्षरण के दो दिन के भीतर यदि शुकाणु से निषेचन होता है तभी गर्भधारण के अवसर अधिक होते हैं। डिंबक्षरण के समय स्त्रियों का तापमान ०.३ से ०.५ सेंटीग्रेड तक बढ़ जाता है जो डिंबक्षरण के उपरांत रजोदर्शन के पूर्व तक रहता है इसका उपयोग परिवार नियोजन में भी किया जाता है।

आन्तरिक कार्य– डिंबग्रन्थि के आन्तरिक कार्यों में चार प्रकार के हार्मोन स्रवित होते हैं। जिनका नारी जीवन से अत्यधिक संबंध है।

१. ईस्ट्रोजन
२. प्रोजेस्टेरोन
३. एन्ड्रोजन
४. रिलेक्सिन

इनके द्वारा नारी के प्रजनन जीवन का नियंत्रण होता है। इनके द्वारा नारी के यौवनगत परिवर्तन जैसे गर्भाशय, डिंबवाहिनी एवं योनि की वृद्धि एवं विकास, रजोचक्र का नियंत्रण, द्वितीय लैंगिक चिन्ह जिसमें गुह्यांगों में बालों का होना, आवाज का पतला होना स्तनों में वृद्धि, आर्त्तव की प्रवृत्ति आदि होते हैं, प्रगट करते हैं। इनके द्वारा डिंब का निषेचन होने पर गर्भोत्पत्ति, गर्भ का स्थिरीकरण, अपरानिर्माण एवं स्तन्यग्रन्थि की वृद्धि होती है। रिलेक्सिन प्रसव में सहायक होता है। गर्भावस्था का नियंत्रण भी इन्हीं हार्मोन द्वारा होता है तथा इन हार्मोन के स्राव का नियंत्रण पीयूषग्रन्थि के हार्मोन करते हैं।

प्रजनन– अपने समान अन्य संतान को उत्पन्न करने को प्रजनन कहते हैं। नारी की पूर्णता प्रजनन अथवा मातृत्व से ही होती है। प्रजनन चक्र के प्रारम्भ को ही यौवन कहते हैं। इस काल में लैंगिक ग्रन्थियां विकसित होकर लैंगिक कार्य प्रारंभ कर देती हैं। पुरुषों की अपेक्षा नारी में लैंगिक कार्यावस्था शीघ्र आती है। सुश्रुत एवं वाग्भट्ट में संतानोपत्ति का काल पुरुषों में २५ एवं नारी में १६ वर्ष के उपरांत स्वीकार किया है। यद्यपि नारी में रजोदर्शन बारह वर्ष से प्रारंभ हो जाता है और पचास वर्ष तक चलता है। इसे ही नारी में प्रजनन काल या मातृत्व काल कहा है। रजोनिवृत्ति के उपरांत नारी में प्राथमिक एवं द्वितीय लैंगिक अवयव अपचयित होने लगते हैं।

'वाटर तकनीक' से सामान्य प्रसव सुनिश्चित

आधुनिक प्रसूति तंत्र के अंतर्गत गर्भवती महिलाओं का सहज सामान्य प्रसव समाप्त होता जा रहा है, यह बड़े कष्ट का विषय है। आज 'नार्मल डेलीवरी' अति कठिन हो गयी है। नारी को आधुनिक प्रसूति तंत्र की इस विभीषिका से बचाने के लिए डा. संतोष साही विदेश से एक नई तकनीक लेकर भारत आयी हैं। इसे 'जल–प्रसव' अर्थात् पानी में जचकी कह सकते हैं। विदेशों मे आजकल नार्मल डेलीवरी के लिए लोग इसी तकनीक का सहारा ले रहे हैं। इस तकनीक का आविष्कार रूस में हुआ। इस तकनीक का व्यापक रूप से पहले–पहले सफलता–पूर्वक सन् १९७० में डाक्टर मिशेल ओडेंट ने फ्रांस में किया। डाक्टर ओडेंट के प्रयोगों व आंकड़ों से स्पष्ट है कि जलीय प्रसव से किसी भी जच्चा या बच्चा को कोई कष्ट नहीं हुआ। किसी भी महिला को आपरेशन कराने की कोई आवश्यकता नहीं हुई और न प्रसव के समय किसी की मृत्यु ही हुई। इन आंकड़ों से डाक्टर ओडेंट ने सिद्ध किया कि पानी के भीतर प्रसव होने से जच्चा–बच्चा को कोई जोखिम नहीं है।

डाक्टर साही ने लंदन में इस तकनीक को सीखकर उसका प्रयोग किया। इन्होंने ३२ वर्षों तक अनेक देशों में जलीय प्रसव कराया। संप्रति इन्होंने दिल्ली में एक अस्पताल खोला है। उनके अनुसार सीजेरियन डेलीवरी से बचने के लिए वाटर तकनीक की जरूरत होती है। वाटर बर्थ के लिए पानी का एक ऐसा टब लिया जाता है, जिसमें गर्भवती आराम से चाहे जिस मुद्रा में बैठ सके। टब में कम से कम ढ़ाई फुट तक पानी होना चाहिए। इससे महिला का कमर से नीचे का भाग जलमग्न रहता है। जल का ताप शरीर के ताप के बराबर रखा जाता है जो कि ३७° से. होता है।

पानी में बैठने से उदरीय दबाव कम होता है। पानी पीड़ा और प्रसवकाल को घटाता है साथ ही हारमोन के स्वाभाविक प्रवाह को भी बढ़ाता है। निर्जलीकरण को रोकने के साथ ही यह प्रसव के समय योनि के खुलने में भी मदद करता है। जल प्रसव के समय एक असाधारण और आनंददायक अनुभूति भी होती है। बच्चे के जनम लेते ही बगैर नाल काटे ही बच्चा मां को दे दिया जाता है।

स्त्रियों में मासिक धर्म

डा. सविता चौधरी, लखनऊ

आर्तव उस रक्त को कहते हैं, जो यौवनारम्भ काल में स्त्रियों के योनिमार्ग से प्रतिमास प्रायः तीन चार दिनों तक आता रहता है। इसी को रज, आर्तव, शोणित, पुष्प, असृक, मासिक धर्म, माहवारी, ऋतु आदि संज्ञायें भी दी गयी हैं। अंग्रेजी में इसे मेन्स्ट्रुएशन कहते हैं। प्रत्येक ऋतु में पुनःपुनः आने के कारण इसे आर्तव और रक्त या शोणित के सदृश होने के कारण इसे आर्तव शोणित कहा गया है। जिस प्रकार वृक्षों में फूल आने के बाद ही फल आते हैं, उसी प्रकार रजोदर्शन के बाद ही स्त्री माता बनती है। इसलिये इसे पुष्प कहा गया है। इस क्रिया को प्रतिमास होने के कारण इसे मासिक धर्म या माहवारी की संज्ञा दी गई। कुछ जीवों में काम की चेतना एवं सन्तानोत्पादन की क्रिया ऋतु के अनुरूप भी होती है। इसीलिये इसे ऋतु की संज्ञा भी दी गई है।

एक स्त्री वर्ष में प्रायः ४३ दिन मासिक रजस्राव काल से गुजरती है तथा अपने संतानोत्पत्ति काल में लगभग ४०० बार उसे मासिक रज स्राव होता है। आर्तवदर्शन इस बात का प्रमाण है। कि गर्भाधान नहीं हुआ है। यदि शुक्र-शोणित संयोग हुआ भी हो तो गर्भ रुका नहीं। आर्तव निर्माण एवं स्राव की सम्पूर्ण प्रक्रिया शरीर में स्थित अतःस्रावी ग्रन्थियों (हाइपोथैलेमस-पिट्यूटरी-ओवरी) के विकास एवं निर्माण पर पूर्णरूपेण आश्रित है।

प्रथम आर्तव-दर्शन की आयु

प्रथम आर्तवदर्शन की औसत आयु १२ वर्ष मानी गई है, यह प्रायः ११ वर्ष से लेकर १४ वर्ष की आयु के बीच होता है। ठंडे देशों में १४ वर्ष के बाद १८ वर्ष की आयु तक भी लड़कियों को ऋतुमती होते देखा जाता है। यदि कन्या को १८ वर्ष की अवस्था तक आर्तवदर्शन न हो तो चिकित्सक की सलाह लेना आवश्यक है। ऐसी अवस्था को प्राथमिक अनार्तव के नाम से जाना जाता है।

लड़कियों के सामान्य स्वास्थ्य, अन्तःस्रावी ग्रंथियों की अन्योन्य क्रिया, खानपान, रहन-सहन, देशकाल, आचार-विचार आदि का इससे गहरा सम्बन्ध है। सम्पन्न घरों की राजसी भोजन करने वाली, आरामतलब जीवन बिताने वाली, यौन सम्बन्धी साहित्य, चलचित्र, चर्चा आदि में विशेष रुचि रखने वाली, स्वतन्त्र एवं स्वच्छन्द जीवन बिताने वाली लड़कियां अपेक्षाकृत शीघ्र रजस्वला हो जाती हैं। ठीक इसके विपरीत सादा, सरल और सक्रिय जीवन बिताने वाली ग्रामीण क्षेत्रों की लड़कियां देर से रजस्वला होती हैं। यौन-ग्रन्थियों की समय के पूर्व अथवा अतिसक्रियता भी लड़कियों में समय से पूर्व रजस्वला हो जाने में सहायक होती है।

अवधिः रजःस्राव की औसत अवधि यद्यपि तीन दिन मानी गई है, फिर भी यह तीन से पांच दिनों तक होते देखा जाता है। इसकी निम्नतम सीमा दो दिन और अधिकतम सीमा छह दिन भी हो सकती है। इन स्थितियों में भी यदि स्त्री के स्वास्थ्य पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता और वह किसी प्रकार की पीड़ा का अनुभव नहीं करती तो उसे सामान्य मानना चाहिये।

स्रावों के बीच अन्तरालः औसतन इसे २८ दिन माना जाता है परन्तु इसमें भी २-४ दिन के हेर-फेर को सामान्य ही माना जाता है। कुछ स्त्रियों में इसकी न्यूनतम अवधि २१ दिन और अधिकतम अवधि ३५ दिन भी पायी गयी है। इन स्थितियों में यदि स्त्री के स्वास्थ्य पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता तो इसे भी सामान्य माना जा सकता है।

मात्राः स्राव की औसत मात्रा २ आउन्स है।

वर्णः शुद्ध आर्तव का वर्ण खरगोश के रक्त, लाक्षारस या वीरबहूटी के समान लाल बतलाया गया है।

गन्धः आर्तव की गन्ध गेंदे की गन्ध के समान होती है।

संगठनः आर्तव का संगठन निम्नवत् है :-

- विसंगठित अन्तर्गर्भाशय कला
- फाइब्रिन को छोड़कर रक्त के प्रायः अन्य सभी घटक
- गर्भाशय ग्रीवाजन्य श्लेष्मा
- योनिगत स्राव

रक्त और आर्तव में भेदः रक्त का कपड़े पर दाग धोने पर आसानी से नहीं छूटता, जबकि आर्तव का दाग गर्म पानी से धोने पर छूट जाता है।

रक्त वायु के सम्पर्क में शीघ्र ही जमने लगता है, जबकि आर्तव रक्त जल्दी नहीं जमता।

सामान्य रक्त की अपेक्षा आर्तवरक्त में चूने की मात्रा अधिक पायी जाती है।

६० से ७० प्रतिशत स्त्रियों को इस अवधि में कुछ न कुछ रोग लक्षण अवश्य प्रकट होते हैं। इनमें से निम्न प्रमुख हैं-

- पेट के निचले भाग, पेडू और जंघाओं में भारीपन, तनाव और कभी-कभी दर्द भी।
- छातियों में भारीपन तथा चुनचुनाहट।
- मूत्रबहुलता
- अरुचि, आलस्य, दौर्बल्य, चिड़चिड़ाहट, मानसिक अवसाद, सिरदर्द आदि।

चिह्नः इन लक्षणों के अतिरिक्त इस अवधि में स्त्रियों में कुछ आर्तव प्रवृत्ति सूचक चिह्न भी प्रकट होते हैं। जिनमें से निम्न प्रमुख हैं।

- शारीरिक ताप का अचानक एक डिग्री नीचे गिर जाना।
- नाड़ी की गति, रक्तचाप एवं रक्त में लाल रक्तकणों की मात्रा का घट जाना।

स्राव की पूर्वावस्था में शारीरिक भार का लगभग सात आठ सौ ग्राम बढ़ जाना और आर्तवकाल की समाप्ति पर पुनः सामान्य स्थिति में आ जाना। यह स्थिति शरीर में अतिरिक्त लवण एवं जलीय अंश के एकत्रित हो जाने के कारण उत्पन्न होती है।

शेष पृष्ठ २७ पर

आधुनिक मत

आर्त्तव चक्र

डा. प्रमोद मालवीय, लखनऊ

आर्त्तव स्त्रियों में प्रत्येक मास तीन से पांच दिन योनिमार्ग से निकलने वाले रक्त को कहा जाता है। अन्यत्र आर्त्तवशब्द से डिंबग्रन्थि से निकलने वाले परिपक्व डिंब एवं डिंबग्रन्थि तथा अपरा से निर्गत आन्तरिक स्राव हार्मोन्स का भी बोध होता है।

आर्त्तव का संगठन

आर्त्तव में निम्न द्रव्य उपस्थित रहते हैं:-

- रक्त
- गर्भाशय की श्लेष्मल कला, अन्तःकला, योनि कोशिका के अंश
- श्लेष्मा
- रक्त के श्वेत कण
- अनिषेचित डिंब
- आहार द्रव्यों – प्रोटीन, वसा एवं कार्बोज के कण
- विटामिन्स, एन्जाइम्स एवं हार्मोन्स
- कैल्सियम आदि लवण

आर्त्तव चक्र

स्त्रियों में प्रजनन काल को बतलाने वाले चक्र को कहा जाता है। जब तक मासिक धर्म होता है महिलाएं प्रजनन के योग्य मानी जाती हैं। गर्भधारणा होने पर मासिक स्राव बंद हो जाता है तथा बच्चा होने के बाद भी जब तक मां बच्चे को दूध पिलाती रहती है मासिक स्राव प्रायः बंद रहता है। मासिक स्राव पुनः प्रारंभ होने पर यह ज्ञात होता है कि स्त्री की डिंब ग्रन्थि में डिंब का निर्माण एवं क्षरण प्रारंभ हो गया है और उसके क्षरण के उपरांत यदि अनुकूल परिस्थिति के साथ सशक्त शुक्राणु मिलता है तो क्षरित डिंब एवं शुक्राणु के मिलन (निषेचन) से गर्भोत्पत्ति हो सकती है।

आर्त्तव चक्र की अवस्थाएं

डिंब का यदि शुक्राणु से निषेचन नहीं हो पाता तब वह मृत हो जाता है और उसे विजातीय द्रव्य मानकर गर्भाशय से योनिमार्ग द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है। अगले मास पुनः डिंबग्रन्थि में एक डिंब का निर्माण होता है जिसके निषेचित न होने पर गर्भाशय से योनिमार्ग द्वारा बाहर निकालने की प्रक्रिया आर्त्तव प्रवृत्ति कहलाती है, यह क्रम प्रजनन काल पर्यंत चलता रहता है। आधुनिक मतानुसार आर्त्तव चक्र को चार अवस्थाओं में विभाजित करते हैं:

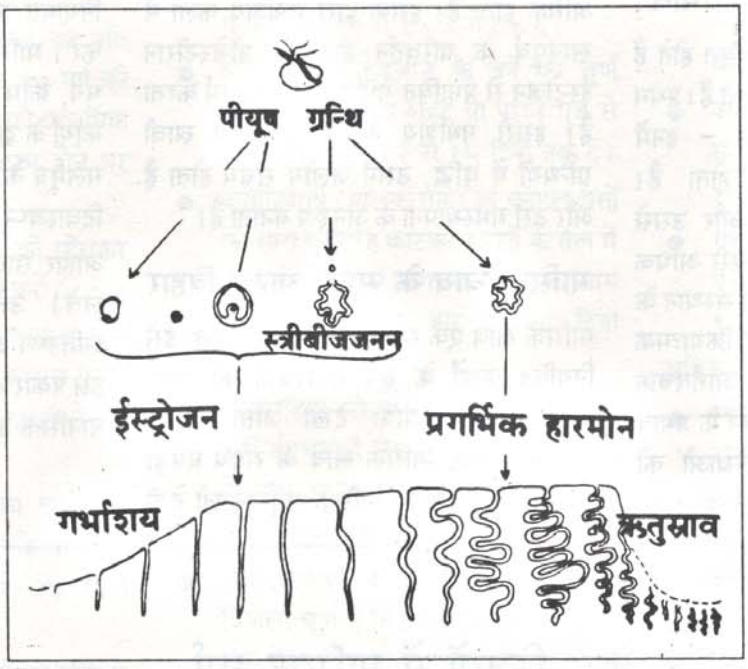

प्रथम एवं द्वितीय काल को फालीकुलर काल भी कहते हैं क्योंकि इस समय डिंबग्रन्थि में फालीकल का निर्माण होता है जिससे डिंब विकसित होता है। डिंबग्रन्थि एवं गर्भाशय में विभिन्न परिवर्तन होते हैं। यह काल १४ दिन का होता है। तृतीय एवं चतुर्थ काल इसके उपरांत होते हैं और डिंबग्रन्थि एवं गर्भाशय में पुनः परिवर्तन लाते हैं। यह अवस्था भी १४ दिन की होती है।

विश्रान्ति काल- यह लगभग ६ दिन का होता है। इसमें मासिक स्राव के उपरांत गर्भाशय की अन्तःकला स्वाभाविक रूप में आने लगती है और उसकी नष्ट हुई श्लेष्मल कला भरने लगती है। इस अवस्था में डिंबग्रन्थि में फालीकल का डिंब के रूप में विकास होता है इसे स्रावोत्तरकाल भी कहा जाता है।

वृद्धि काल- यह भी लगभग ७ दिन का होता है। इसमें गर्भाशय की श्लेष्मल कला की मोटाई बढ़ती है। अन्तस्तर में एकरूपता आ जाती है, इसी से इसे पुनः निर्माण की अवस्था भी कहते हैं। डिंबग्रन्थि में डिंब का परिपाक होता है और उसका क्षरण भी इसी काल में होता है।

स्राव पूर्व काल- यह लगभग १० दिन का होता है। इसमें गर्भाशय की श्लेष्मल कला में और भी वृद्धि होती है उसकी रक्त वाहिनियाँ चक्करदार हो जाती है, धर्मानकाओं की संख्या में वृद्धि होती है। गर्भाशय में अधिक रक्त का संचार होता है और गर्भाशय नव गर्भ को स्थापित करने की क्षमता वाला हो जाता है। गर्भाशय ग्रन्थियों से स्रवित श्लेष्मा अधिक क्षारीय हो जाता है। डिंबक्षरण के समय उसकी श्यानता सबसे कम रहती है जिससे शुक्राणु की यात्रा में और उसके अधिक समय तक जीवित रहने में मदद मिलती है। योनि की उपकला की वृद्धि होती है और उपकला स्तरीकृत हो जाती है। इस अवस्था में परिपक्व डिंब का शुक्राणु से समागम अधिक संभावित रहता है और यदि समागम या निषेचन हो जाय तो निषेचित डिंब गर्भाशय में अवस्थान

कर बढ़ता है और आगे की चतुर्थ अवस्था अथवा मासिक स्राव नही होता।

स्राव काल– यह लगभग ३ से ५ दिन का होता है। गर्भोत्पत्ति न होने से गर्भाशय की श्लेष्मल कला एवं आन्तरिक भित्ति विदीर्ण हो जाती है। उसकी चक्करदार धमनियां संकुचन करती हैं उन पर दबाव बढ़ जाता है। दबाव से धमनी भित्ति चौड़ी होकर विदीर्ण हो जाती है और उनसे रक्तस्राव होकर बाहर आने लगता है। गर्भाशय की श्लेष्मल कला भी विदीर्ण होकर छोटे–छोटे टुकड़ों में विभाजित हो रक्त के साथ वाहर आने लगती है। गर्भाशय के आभ्यंतर स्तर का ऊपरी भाग भी विदीर्ण होकर छोटे–छोटे टुकड़ों के रूप में रक्त के साथ निकलता है।

मासिक स्राव पर हार्मोन का प्रभाव

डिंबग्रन्थि से दो प्रकार के हार्मोन स्रवित होते हैं जो स्त्री प्रजनन पर महत्व पूर्ण कार्य करते हैं। प्रथम एवं द्वितीय ईस्ट्रोजन, प्रोजेस्टेरान – इनमें ईस्ट्रोजन डिंबग्रन्थि से स्रवित होता है। फालीकल के परिपक्व होने पर और उससे डिंबक्षरण होने पर इसका स्राव सबसे अधिक होता है। इसके द्वारा स्त्रियों में प्रजनन संस्थान के विकास एवं उनकी रचनात्मक और क्रियात्मक अवस्था का अनुरक्षण किया जाता है। आर्त्तवचक्र की प्रथम एवं द्वितीय अवस्था ईस्ट्रोजन के प्रभाव के कारण होती है इसी से इन अवस्थाओं को फालीकुलर फेज कहते हैं। फालीकल वृद्धि एवं डिंबक्षरण पर इसका सीधा प्रभाव है। इससे गर्भाशय के भार एवं आकार में वृद्धि होती है उसके कोषों की संख्या बढ़ जाती है उसका अन्तस्तर मोटा होने लगता है, ग्रन्थियों की वृद्धि होती है। गर्भाशय में रक्त एवं जल की मात्रा में वृद्धि होती है, ग्रन्थियों से स्राव बढ़ जाता है, योनि के आकार में भी वृद्धि होती है। स्तन ग्रन्थियों की वृद्धि होती है और स्त्रियों में युवावस्था के चिह्न प्रगट होते है। प्रोजेस्टेरान हार्मोन डिंबग्रन्थि में स्थित पीतपिंड से स्रवित होता है। डिंबग्रन्थि के फालीकल से डिंबक्षरण के उपरांत स्कन्दित रक्त के थक्के से पीतपिंड का निर्माण होता है जिससे प्रोजेस्टेरान स्रवित होता है। गर्भावस्था में पीतपिंड के आकार में अत्यधिक वृद्धि होकर प्रोजेस्टीरान का स्राव अधिक होता है। इसके द्वारा गर्भाशय कला में स्रावपूर्व के परिवर्तन होते हैं। प्रोजेस्टीरान ईस्ट्रोजन से प्रभावित गर्भाशय पर ही कार्य करता है। इससे गर्भाशय के अन्तस्तर की स्रावी ग्रन्थियों में वृद्धि, उसमें जलीय संचय होता है और उसे गर्भस्थापना के अनुरूप बनाता है।

मासिक स्राव के समय आहार विहार

मासिक स्राव एक स्वाभाविक क्रिया है अतः इसे नियमित कार्यों के रूप में स्त्रियों को ग्रहण करना चाहिये। प्रायः देखा जाता है कि लड़कियां प्रथम मासिक स्राव के समय घबड़ा जाती हैं और अपना मानसिक संतुलन खो देती हैं। माताओं को अपनी संतानों को इन परिवर्तनों से अवगत कराते रहना चाहिये कि ये परिवर्तन उनके जीवन के अनिवार्य और स्वाभाविक अंग हैं, इनसे घबड़ाना या डरना उचित नहीं है। जैसे हम भूख लगने पर खाना खाते हैं, मलमूत्र का विसर्जन करते हैं उसी प्रकार मासिक स्राव भी एक स्वाभाविक क्रिया है जिसके द्वारा प्रतिमाह स्त्रियों के गर्भाशय की शुद्धि होती है अतः नित्यप्रति और उस अवस्था में विशेषकर बाह्य जननेन्द्रियों की सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिये। संयम से काम लेवे। बाह्य जननेन्द्रिय का पीड़न मर्दन आदि न करें और मानसिक रूप से अपने को शांत, निश्चल, भयरहित अनुभव करें। कपड़े साफ सुथरे कुछ ढीले पहने, अत्यंत तंग कपड़ों का व्यवहार न करें और अपने नियमित प्रतिदिन के कार्यों को करना बंद न करें। मासिक स्राव के समय ब्रह्मचर्य से शोक, भय, क्रोध का परित्याग कर शान्ति से रहे। जिन कार्यों के द्वारा उत्तेजना होती है ऐसे कार्य बंद करें, मलमूत्र के वेग को न रोकें तथा अत्यधिक श्रम, दिवास्वप्न एवं रात्रि जागरण का त्याग करें।

आहार सादा, पौष्टिक, एवं नियमित समय पर लेवें। उत्तेजक आहार विहार, अतिशीत, अतिउष्ण आहार, एवं पेय का त्याग करें और इस प्रकार अपना कार्य करें जिससे शारीरिक एवं मानसिक उत्तेजना न हो।

पृष्ठ २५ का शेष

स्त्रियों में मासिक धर्म

मासिक स्राव की अवधि में सावधानियाँ–

- सम्बद्ध अंगों की स्वच्छता का पूरा ध्यान रखना चाहिये। जो भी पैड या कपड़ा व्यवहार में लाया जाये उसे साफ और जीवाणुरहित होना चाहिये।
- भोजन सादा और सुपाच्य करना चाहिये।
- मलबन्ध (कब्ज) न होने पाये इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिये।
- कठोर परिश्रम और भारी बोझ उठाने से बचना चाहिये।
- सर्दी या गर्मी पहुंचाने वाली परिस्थितियों से बचना चाहिये।
- मन को यथासम्भव शान्त एवं उद्वेगरहित रखना चाहिये मन पर आघात पहुंचाने वाली संवेगात्मक परिस्थितियों द्वन्द्वों से बचना चाहिये।
- शरीर को यथासम्भव विश्राम देना चाहिये।

रजःस्राव विकार : काल वैषम्य प्रमाण वैषम्य वर्ण वैषम्य रजोदर्शन काल वैषम्य ऋतुकाल वैषम्य मात्राधिक्य हीनमात्रा सामान्य असामान्य कालवृद्धि कालह्रास कालनाश कालवृद्धि कालह्रास अनियमित रजःस्राव अर्थात् दो रजःस्रावों के बीच यदा–कदा पुनः रजःस्राव होना चिंताजनक है और ये कैंसर, टयूमर जैसे विशिष्ट रोगों के लक्षण भी हो सकते हैं। अतः रजःस्राव की अनियमितता में अच्छे चिकित्सक की सलाह तुरन्त लेना चाहिए। इसमें लापरवाही घातक सिद्ध हो सकती है।

मासिक धर्म विकारों में आदिवासी औषधियाँ

डॉ. पुष्पा असवाल, लखनऊ

मनुष्य के शरीर में जन्म से लेकर बुढ़ापे तक बराबर ही परिवर्तन होते रहते हैं। इसी परिवर्तन के अन्तर्गत बालिकाओं की एक अवस्था आती है जब उनके योनिद्वार से प्रत्येक माह रक्तस्राव होने लगता है। इस अवस्था को वयः संधि कहते हैं। मासिक स्राव से सम्बन्धित विकारों की चिकित्सा का अनुभव कई आदिवासी क्षेत्रों में है। उनमें से कुछ का संकलन करके यहां वर्णन किया जा रहा है–

प्राथमिक अनार्तव– यदि बालिका को प्रति माह होने वाला यह रक्त स्राव १६–१७ वर्ष की आयु तक न हो तो उस अवस्था को प्राथमिक अनार्तव कहते हैं। यह स्थिति उत्पन्न होने पर निम्न में से कोई उपचार करें–

- लांगली (कलिहारी) के गूदे को पीसकर सात रातों तक कपाल पर लेप करें।
- शोभांजन (सहिजन) के तने की छाल का चूर्ण दो–दो चुटकी आधा से एक चम्मच पुराने गुड़ या शहद के साथ सुबह खाली पेट में १५–२० दिनों तक दें।
- भाण्डीर (भटेस) की जड़ का चूर्ण एक चुटकी लेकर, एक कप चावल के धोवन के साथ दिन में दो बार २२–२४ दिनों तक दें।
- सरसों दाना व काला जीरा बराबर मात्रा में लेकर काढा तैयार कर लें। फिर पुराने गुड़ के साथ उबाल लें। दो चम्मच सुबह १२–१५ दिनों तक दें।
- श्वेत कूष्माण्ड (कुम्हड़ा) के गूदे को लेकर १२–१५ रात्रि योनि के अन्दर ऐसे रखें कि गर्भाशय द्वार से सटा रहे।

माध्यमिक अनार्तव : कभी–कभी मासिक धर्म नियमित न होना

- काले धतूरे के फूल का चूर्ण एक चुटकी पुराने गुड़ या शहद के साथ दिन में २ बार मासिक धर्म काल में दें।
- कपास की जड़ का चूर्ण एक चुटकी पुराने गुड़ या शहद के साथ दिन में २ बार मासिक धर्म काल में दें।
- नीम के बीजों को तिल के तेल में पीस लें। उसे गर्म करके २४ दिनों तक योनि का सेंक करें।

कष्टार्तव : यदि मासिक धर्म के दौरान दर्द, कष्ट हो तो

- काली मुसली के कंद का चूर्ण आधा से एक चम्मच शहद या पुराने गुड़ के साथ दिन में एक बार १२ से १५ दिनों तक दें।
- अस्थिश्रृंखला हड़जोड़ के तने का चूर्ण आधा–एक चम्मच शहद या पुराने गुड़ से दिन में एक बार १२ से १५ दिनों तक दें।
- ज्योतिष्मती (मालकांगनी) के कोमल पत्तों को साग की तरह काटकर सरसों के तेल में पका लें। ये तेल लगभग एक–एक चाय चम्मच दिन में २ बार १५-२० दिनों तक दें।
- मांसरोहिणी (रोहण) की तने की छाल का चूर्ण दो चुटकी लेकर शहद या पुराने गुड़ के साथ अथवा एक कप दूध में पकाकर, दिन में एक बार १५–२० दिनों तक दें।
- अर्क (अकवन) का चूर्ण एक भाग, चार भाग त्रिफला चूर्ण में मिलाकर, एक एक चुटकी दिन में २ बार थोड़ा शहद या पुराने गुड़ के साथ दें।

यदि स्राव अनियमित हो–

- दूब घास ताजा लेकर महीन पीस लें। एक गिलास पानी में मिश्री के साथ शर्बत बनाकर, दिन में २ बार १२–१५ दिन तक दें।
- सहजन के तने की छाल का चूर्ण एक चाय चम्मच, एक कप पानी में उबालकर, दिन में २ बार ५–७ दिन पीने को दें।
- पपीते का दूध दो से तीन बूंद एक चम्मच चीनी या एक बताशे में डालकर, दिन में दो बार ७–१० दिनों तक दें।
- घृतकुमारी (घीक्वार) के पत्ते का गूदा दो चाय चम्मच लेकर, एक चाय चम्मच चीनी के साथ दिन में २ बार, १०–१२ दिनों तक दें।

अल्प मासिक स्रावः जलन व काले थक्कों के साथ–

- ताजे आंवले के फल का रस दो चाय चम्मच, दिन में २ बार थोड़ी मिश्री के साथ १०–१२ दिन तक दें।
- सूखे आंवले के फल का चूर्ण एक चौथाई चाय का चम्मच, दिन में २ बार पुराने गुड़ या शहद के साथ १०–१२ दिन दें।
- ज्योतिष्मती (मालकांगनी) का तेल तीन–तीन बूंद दिन में एक बार शहद के साथ १५–२० दिन दें।
- गुलाब के ३ फूल (सूखे या ताजे) शहद या पुराने गुड़ के साथ दिन में एक बार ७–१० दिन तक दें।

अतिस्राव

- लोध्र के तने की छाल का चूर्ण दो चुटकी सुबह–शाम शहद या पुराने गुड़ के साथ ७–१० दिन तक दें।
- मांसरोहिणी के तने की छाल का चूर्ण दो चुटकी सुबह शाम शहद या पुराने गुड़ के साथ ७–१० दिन तक दें।
- गूलर के पके फल का चूर्ण आधा चाय चम्मच दिन में २ बार शहद या पुराने गुड़ के साथ ९–१० दिन तक दें।
- वट (बरगद) के पके फल का चूर्ण आधा चाय चम्मच दिन में २ बार शहद या पुराने गुड से ७–१० दिन तक दें।
- एक चुटकी धनियां चूर्ण एक कप चावल के धोवन के साथ दिन में २ बार ७–१० दिन तक दें।
- साल (साखू) का गोंद पीसकर उसका बीस गुना दही मिला दें। उसमें मिश्री डालकर लगभग १०० ग्राम की मात्रा में सुबह–शाम १०–१२ दिन तक दें।

मातृत्व की इच्छा

डा. मंजरी द्विवेदी, वाराणसी

एक बार गृहस्थ जीवन में प्रवेश करने के पश्चात् मातृत्व की इच्छा हर स्त्री को स्वाभाविक है। स्वस्थ शिशु हर माता का स्वप्न होता है। जहां एक तरफ यह सत्य है कि गर्भधारणा स्त्री के जीवन की एक सामान्य घटना है वहीं इसका दूसरा पक्ष भी घरों में प्रायः बड़े-बूढ़ों के शब्दों द्वारा उजागर होता है कि प्रसव स्त्री का एक प्रकार से पुनः जन्म है। इसका कारण यह है कि गर्भ धारण से लेकर प्रसव पर्यंत कभी-कभी स्त्री को अनेकों बार जानलेवा खतरों का सामना करना पड़ सकता है।

भारत वर्ष में आज भी अधिकांशतः प्रसव घरों में ही सम्पन्न होते हैं। वैज्ञानिकों, चिकित्सकों तथा सरकार के अथक प्रयासों के पश्चात् भी हम जन-साधारण को वांछित चिकित्सकीय सुविधाएं उपलब्ध कराने में असमर्थ हैं। रूढ़िवादिता, अर्थाभाव, साधनहीनता तथा अशिक्षा आदि कितने ही कारण बनते हैं जो गर्भिणी को उचित चिकित्सकीय परामर्श से वंचित रखते हैं।

यदि गर्भावस्था वास्तव में सामान्य है तब तो प्रसव घर पर सहज ही कुशल एवं शिक्षित दाइयों द्वारा सम्पन्न कराया जा सकता है, परन्तु कुछ स्थितियां ऐसी होती हैं जिनके उपस्थित होने पर माता अथवा गर्भस्थ शिशु की जान को खतरा हो सकता है। यहां पर हम कुछ ऐसी ही स्थितियों का वर्णन कर रहे हैं जिनकी उपस्थिति यदि गर्भिणी में है तो उसे शीघ्र ही निकटतम मातृ शिशु कल्याण केन्द्र अथवा अन्य किसी योग्य चिकित्सक के पास परामर्श के लिए ले जाना चाहिये। ये स्थितियां निम्न हैं-

- यदि गर्भिणी को पूर्व प्रसव काल में कुछ उपद्रव रहे हों।
- यदि गर्भधारण विवाह के कई वर्ष पश्चात् वन्ध्यत्व की चिकित्सा लेने के पश्चात् हुआ हो।
- यदि पूर्व में गर्भपात का इतिहास रहा हो।
- यदि पहले कभी गर्भाशय में ही गर्भ मृत हो गया हो, प्रसव के समय मृत हुआ हो अथवा प्रसव के एक सप्ताह के अन्दर ही शिशु मृत हो गया हो।
- यदि पूर्व प्रसव औजार द्वारा अथवा आपरेशन द्वारा हुआ हो।
- यदि पूर्व उत्पन्न शिशु का वजन २.० किलो से कम हो।
- यदि गर्भिणी को, शकर की बीमारी, हृदय रोग, श्वास रोग या अन्य कोई दीर्घकालिक रोग हो।
- यदि माता का रक्त ग्रुप आर एच ऋणात्मक हो तथा पिता का रक्त ग्रुप आर एच धनात्मक हो।
- यदि गर्भिणी को योनिमार्ग से रक्त स्राव हुआ हो।
- यदि गर्भाशय में दो अथवा उससे अधिक गर्भ की संभावना हो।
- यदि गर्भाशय में गर्भ की स्थिति असामान्य लगे।
- यदि गर्भाशय में गर्भ का चलन कम अथवा अथव बिल्कुल नहीं महसूस हो।
- यदि गर्भिणी के पैरों पर अथवा सम्पूर्ण शरीर में सूजन आ गई हो।

आप बतायें
आपको यह अंक कैसा लगा?

'जीवनीय' पत्रिका आपके स्वास्थ्य को ध्यान में रखकर ही प्रकाशित की जाती है। हम पूरी-पूरी कोशिश करते हैं कि इसका प्रत्येक अंक आपके लिए रुचिकर और लाभकारी हो जिससे वह आपके स्वस्थ जीवन का एक अंग बन सके।

कृपया हर अंक पर अपनी राय, सुझाव या आलोचना के रूप में भेजें। आपको कौन सा लेख सबसे अधिक पसन्द आया?

सम्पादक, जीवनीय,
ई-III/२४९, सेक्टर एच,
अलीगंज लखनऊ - २२६ ०२०

गर्भिणी के रोगों की आदिवासी चिकित्सा

गर्भावस्था में उल्टी

- धनिया व मिश्री पीसकर चावल के धोवन वाले पानी में शर्बत बनाकर पीने को दें।
- वट (बरगद) वृक्ष की कोमल जटाओं को जलाकर राख बना दें। राख को थोड़ा पानी के साथ पीने को दें।
- गेरू पत्थर को आग में लाल होने तक गर्म करें फिर उसे पीने के जल में बुझा दें। वही जल छानकर पीने को दें।
- नारियल की जटा की राख पानी के साथ पीने को दें।

गर्भावस्था में अतिसार

- केले के कच्चे फल का चूर्ण आधा चाय चम्मच दिन में दो बार पानी के साथ दें।
- लोध्र वृक्ष की छाल का चूर्ण एक चाय चम्मच दिन में तीन बार दें।
- गूलर के पके फल का चूर्ण एक चाय चम्मच दिन में तीन बार दें।

गर्भावस्था में बुखार

- हरसिंगार के ताजे पत्तों का काढ़ा शहद से सुबह-शाम पीने को दें।
- साधारण बुखार या मलेरिया बुखार में काकजंघा की छाल या पत्तों को उबालकर चाय जैसा रंग आने पर चीनी या मिश्री के साथ दिन में दो बार एक कप पीने को दें।
- यदि बुखार के साथ हाथ तथा पैरों में दर्द हो तथा सूजन भी आने लगे तो शाल्मली (सेमल) का कंद चीनी या मिश्री के साथ काढ़ा बनाकर दिन में दो बार दें।

स्तनों में दूध की कमी

- शतावर का कंद लगभग ४ अंगुल कूटकर एक कप गाय के दूध में पकाकर, सुबह-शाम १५-२० दिन तक दें।
- एरण्ड के पत्तों का रस एक चाय चम्मच शहद या पुराने गुड़ के साथ दिन में दो बार १०-१२ दिन तक दें।
- उड़द की दाल सुबह-शाम खाने को दें।
- एरण्ड की जड़ व शतावर का कंद समभाग में मिलाकर दो मटर के दाने के बराबर दिन में दो बार मिश्री के साथ १०-१२ दिन दें।
- काला जीरा रात्रि में पानी में भिगोकर सुबह गुड़ व थोड़ा घी मिलाकर हलुवा बनाकर प्रतिदिन १०-१२ दिनों तक दें।

स्तनों में दर्द के साथ अधिक दूध आने पर

- एरण्ड या सरसों तेल सहने भर गरम कर लगा दें। फिर कपड़े से बांध कर रखें।
- हल्दी व धतूरे की जड़ को मिलाकर पीसें तथा लेप करें।
- इन्द्रायण की जड़ को पानी के साथ पीसकर लेप करें।

स्तनों में गिल्टी

- एरण्ड के पत्तों के रस से आधा-आधा घंटे पर करें।
- सहजन के पत्तों को पीसकर लेप करें।
- एरण्ड पत्रों को पीसकर लेप करें और उसी के पत्ते से लपेट कर बांध दें।

दुग्धस्राव

- एरण्ड का पत्ता पीसकर दिन में २ बार लेप करें। लेप बदलने के पहले धो लें।

स्तनों में सूजन

- कचनार की छाल महीन पीसकर लेप करें। यदि बकरी का दूध मिले तो दूध लगाने के बाद दिन में दो बार लेप करें।
- एरण्ड के बीज पीसकर उसे गर्मकर लेप करें।

दूध सुखाने के लिए

- इमली के पत्ते ताजा पीसकर दिन में दो बार लगायें।
- हल के नीचे लगी मिट्टी से लेप करें।
- मसूर की दाल पानी में भिगोकर पीस लें और लेप करें।
- जीरा व मसूर दाल उबालकर पीस लें व लेप करें।

(पी. पी. हेम्बराम के मोनोग्राफ "आदिवासी औषधि" से साभार)

दायीं ओर से स्तनपान पहले करायें

लाड़ले को स्तनपान कराइये

डां. अनामिका प्रकाश, मथुरा

मां शब्द का जिक्र आते ही एक ऐसी नारी की छवि आंखों में उभर आती है जो नवजात शिशु को अपने स्नेह और त्याग से रंग कर उसका भविष्य बनाती और संवारती है। गर्भ में शिशु के अगड़ाईयाँ लेते ही नारी का उस अजन्मे शिशु से भावात्मक सम्बन्ध जुड़ जाता है और वह बड़ी व्यग्रता से प्रसव काल की प्रतीक्षा करती है। नारी जब मां बन जाती है तब खुशी से भर उठती हैं। बड़े ही स्नेह से अपने शिशु को दुलराती–सहलाती है। माँ के सीने से चिपटा बच्चा अपने नन्हें–नन्हें हाथ चला कर मां का वक्ष टटोलने लगता है, और मां आत्म–विर्भर होकर अपना स्तन बच्चे के मुंह में देकर पुलकित हो उठती है। और स्वयं ही बच्चे के होंठ चलने लगते हैं।

मां का दूध बच्चे के मानसिक और शारीरिक विकास में सहायक होने के साथ–साथ उसे निरोग भी रखता है व उसमें इतनी क्षमता पैदा कर देता है कि रोगों से उसका बचाव हो सके। डिब्बे का दूध पीने वाले बच्चों की तुलना यदि मां का दूध पीने वाले बच्चों से की जाये तो मां का दूध पीने वाले श्रेष्ठ सिद्ध होंगे। हमारे देश में बच्चों को पेचिश, डायरिया, उल्टी आदि की बीमारियां अधिक होती हैं। जो बच्चे मां के दूध से वंचित रह जाते है उन्हें खसरा, निमोनिया, सांस फूलने, पोलियो, आदि रोग सहज ही लग जाते हैं। छह माह तक मां का दूध पीने से बच्चों को पोलियो जैसा भयानक रोग नहीं होता। बच्चों में बढ़ते हुए पोलियो और अन्य रोगों का मुख्य कारण उन्हें मां का दूध न मिलना है।

विकसित देशों में, जहां माएं बच्चों को अपना दूध नहीं पिलाती और ज्यादातर कृत्रिम दूध पर आश्रित हैं, वहां मातृ दुग्ध बैंक खोले गये हैं, जहां ऐसे बच्चों के लिए मां के दूध की व्यवस्था की जाती है, जिन्हें अपनी मां का दूध नसीब नहीं हो पाता या जो मां–बाप का साया खो बैठते हैं। ऐसी कई संस्थाएं हैं जो माताओं को उनके अपने दूध और उसका बच्चों के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव का महत्व समझाती हैं। इन दुग्ध बैंकों में ऐसी स्त्रियों का दूध जमा किया जाता है जो किसी कारणवश अपने बच्चों को दुग्धपान कराने में असमर्थ होती है अथवा ऐसी स्त्रियाँ जो अनाथ बच्चों के लिए अपना दूध उपलब्ध कराती है, और दुग्ध बैंक में भेज देती हैं। जहां दूध रेफ्रीजरेटर में सुरक्षित रख लिया जाता है।

इस व्यवस्था का लाभ हमारे यहां भी स्त्रियां उठाने लगी है। कई स्त्रियां, जो प्रसव के बाद अत्यधिक कमजोरी के कारण अथवा आप्रेशन के बाद, यदि स्तनपान कराने से वंचित रह जाती है तो वह अपना दूध निचोड़ कर बच्चों को देने के लिए डाक्टर को भेजती है। डाक्टर ड्रापर की मदद से यह दूध बच्चों को पिला देते हैं।

स्वस्थ और पौष्टिक पदार्थ और आहार खाने वाली स्त्रियां इस भ्रांतिकी शिकार होती हैं कि बच्चों को अपना दूध पिलाने से उनके स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ सकता है। उनका वक्ष ढल सकता है। लेकिन यह प्रमाणित हो चुका है कि बच्चे को अपना दूध देने से मां का शरीर सुडौल ही बना रहता है और उसके स्वास्थ्य पर किसी प्रकार का कुप्रभाव नहीं पड़ता। हां, वे स्त्रियां अवश्य अपना स्वास्थ्य खो बैठती हैं जो प्रसव के बाद, यह सोचकर कि उनका पेट न बढ़ जाये फाँके करने लगती हैं। बच्चा मां का दूध पीता है। स्तनपान के दौरान अपने आहार और पोषण के प्रति सतर्क रहनी वाली माताएं निर्बल नहीं होती। स्तनपान मां के शरीर में उत्पन्न हुई रक्त की कमी को पूरा ही नहीं करता बल्कि प्रसव के बाद होने वाला रक्त स्राव भी नियमित हो जाता है। गर्भाशय की मांस पेशियां, जो प्रसव के दौरान फैल जाती हैं, वे भी सिकुड़ने लगती हैं।

स्त्रियां प्रायः परपुरुषों की उपस्थिति में बच्चों को अपना दूध पिलाने में शर्म महसूस करती हैं। कामकाजी महिलाएँ समयाभाव के कारण ऐसा करने के लिए बाध्य हो जाती है। बच्चे को दूध पिलाने से बदन में ढीलापन आ जाने का वहम पालने वाली स्त्रियों को यह समझ लेना चाहिए कि प्रसव के बाद जब स्तनों में दूध भरा होता है–स्तन लटक अवश्य जाते है और बच्चे द्वारा स्तनपान कर लेने पर पुनः उठ आते हैं। जो स्त्रियां प्रसव के बाद मोटी हो जाती हैं, अथवा जो अपनी सुस्ती गंवा बैठती हैं उनके लिए वे स्वयं दोषी होती हैं। क्योंकि वे गर्भवती होते ही अपने शिशु और अपने स्वास्थ्य के नाम पर आवश्यकता से अधिक आहार लेने लगती हैं। जो स्त्रियां गर्भवती होने के बाद भी व्यायाम नहीं छोड़ती उनका शारीरिक आकर्षण और सौंदर्य बना रहता हैं।

ऐसा भी देखने को मिलता है कि माँ को सर्दी, जुकाम, खांसी लगते ही वह अपने बच्चे का स्तनपान बंद कर देती हैं। दूध छूड़ाने से पहले कुशल वैद्य से परामर्श कर लेना चाहिए क्योंकि माँ के बहुत से रोग स्तनपान से बच्चों को नहीं होते।

माँ का दूध छुड़ा कर कृत्रिम दूध पर आ जाने से बच्चा उसे हजम नहीं कर पाता आर पेचिश का शिकार हो सकता है। जिन माताओं को किसी कारणवश, बच्चे को दुग्धपान कराने में असुविधा हो वे अपना दुध निचुड़वा कर बच्चे को दे सकती हैं।

तपेदिक या खून की कमी की शिकार माताओं को बच्चों से दूर रहना ही चाहिए।

छोटे स्तनों वाली स्त्रियों को कुर्सी पर बैठ कर दूध पिलाना चाहिए। इसी तरह जिन्हें बच्चा सिजेरियन आप्रेशन द्वारा हुआ हो उन्हें भी कुर्सी पर बैठकर ही बच्चों को दूध पिलाना चाहिए। जिन स्त्रियों के स्तनों का आकार बड़ा हो, वे

स्तनरोग निवारण एवं स्तन सौंदर्य

उमेश पाण्डे, इंदौर

स्त्रियों के स्तनों की वृद्धि आयु के अनुसार युवावस्था तक होती है अर्थात ज्यों-ज्यों अधिक अवस्था होती जाती है त्यों-त्यों स्तनों का आकार और उठाव भी बढ़ता जाता है। इनका अधिक विस्तार गर्भधारण के पश्चात ही होता है और गर्भावस्था के बाद ही स्तनों में दूध आता है। बड़े व कड़े स्तन श्रेष्ठ होते हैं। स्तनों का लटका रहना नारी सौंदर्य में कमी करता है।

गाँठें पड़ना, लटक जाना या प्रसूता में दुग्ध का स्राव बंद हो जाना ऐसी समस्याएं हैं जो एक ओर स्वास्थ्य का हनन करती हैं और दूसरी ओर सौंदर्य ह्रास करती हैं। अनेक स्त्रियों के स्तन यौवन में छोटे या दबे-दबे से होते हैं। ऐसी स्त्रियों को नित्य ५-७ मिनटों तक अपने स्तनों की तिल के तेल से हल्की-हल्की मालिश करनी चाहिए। इस साधारण से प्रयोग से वे शीघ्र ही वृद्धि को प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार चन्द्रशूर की खीर कुछ दिनों तक सेवन करने से भी स्तनों में पर्याप्त वृद्धि होती है। चंद्रशूर को हालिम या हालो भी कहते हैं। इसकी खीर बनाने के लिये आधा किलो उबलते दूध में मात्र ४ माशे चन्दूशूर मिलायें। गल जाने पर उसमें शक्कर मिलाकर ठंडा होने पर लें।इसके १५ दिन सेवन से कमजोरी भी दूर होती है तथा कमर के दर्द में भी आराम होता है।

यदि स्त्री गर्भवती न हो और फिर भी उसके स्तन लटके हों तब उन्हें पुष्ट एवं उन्नत बनाने हेतु उन पर अरण्ड के तेल की हल्के-हल्के मालिश कर पान के पत्ते बाँधे। साथ ही लगभग २ माशा कमल के बीजों को पीसकर उसमें खांड मिलाकर एक महीने तक सेवन करें। अथवा थोड़े से तिल या बादाम के तेल में कटैली के फल और अनार के छिलकों को उबालें और इस तेल से नित्य स्तनों पर मालिश एवं मर्दन करें।

स्तनों में जलन अथवा दूध के रुक जाने से दर्द होने पर अरण्ड के पत्तों को पीसकर उसकी चटनी बनाकर स्तनों पर लेप कर पुल्टिस बाँध लें। दो बार के प्रयोग से ही व्याधि चली जाती है। इस प्रयोग से स्तन की गाँठ भी पूरी तरह गलती है।

कभी-कभी स्तनों में सूजन आ जाती है और तेज दर्द होता है। ऐसी स्थिति में उस पर नागरबेल पान के पत्ते पीसकर बाँधने से सूजन उतर जाती है।

कभी-कभी माताओं को दूध कम उतरता है अथवा बनता ही कम है। इसके निवारणार्थ एक-एक तोला बिनौले (कपास के बीज) की गिरी की खीर रोज दोपहर भोजन के साथ लेना चाहिए। अथवा नित्य ३-४ रोज तक सुबह-सबेरे दो चम्मच सफेद जीरा चबाकर ऊपर से पानी पी लेने से भी यह व्याधि जाती रहती है।

दूध सुखा देने के लिए कपूर का लेप अथवा कपूर के तेल की मालिश करना हितकर है। कपूर की अति अल्प मात्रा भी ग्रहण की जाए तो लाभ और जल्दी होता है।

स्तन-पान
गर्भ निरोधक भी

जो प्रकृति का कहना मानते हैं, प्रकृति उनकी सहायता करती है। उदाहरणार्थ नवजात शिशु को उसके मां का दूध निर्बाध गति से प्राप्त होता रहे, इसके लिए प्रकृति रूपी माता ने अपना स्तनपान कराने वाली पुत्रियों में गर्भधारण न हो सके इसकी स्वतः व्यवस्था की है।

इस प्रकृति प्रदत्त वरदान के महत्व की पुष्टि विश्व स्वास्थ्य संगठन एवं यूनीसेफ द्वारा इन्टरनेशनल चाइल्ड हेल्थ के १९८८ के अंक में प्रकाशित शोध पत्र में की गयी। यह शोध अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर १३ देशों में किया गया। और अंत में परिणाम यह निकला कि माता द्वारा अपने शिशु को स्तन पान से तृप्त रखना दो बच्चों के जन्म में अन्तर रखने का सबसे अच्छा और अचूक उपाय है।

पूर्ण स्तनपान का तात्पर्य यह है कि शिशु को अन्य कोई भोजन न दिया जाय, केवल माता के दूध एवं जल पर रखा जाय। इस उपाय से प्रसवोपरान्त प्रथम ६ मास में ९८% माताओं में दुबारा गर्भ धारण नहीं होता।

परन्तु यह एक सुरक्षित गर्भरोधक उपाय नहीं है। अतः प्रत्येक इच्छुक माता को यह सलाह दी जाती है कि प्रसवोपरान्त जब उसे पहली बार मासिक रजःस्राव प्रारम्भ हो, उसे तभी से अन्य गर्भ निरोधक अपनाने चाहिए।

लाड़ले को स्तनपान

बच्चे को बिस्तर पर लेट कर दूध पिलाते समय मां को इतना ख्याल रखना चाहिए कि बच्चे को सांस लेने में कष्ट न हो। जन्म के बाद जब बच्चे को दूध दिया जाता है कई बच्चे स्तन को ढंग से चबा नहीं पाते। अतः मां का यह कर्तव्य है कि बच्चे को दुलार-पुचकार कर स्तनपान कराए पहले अपने स्तन को दबा कर थोड़ा-सा दूध निकाल कर उसके ओठों से चूचुक छुलाए तो बच्चा सहज ही दूध पीने लगता है।

दुग्धपान कराने वाली माताओं को अक्सर स्तन के अग्र भाग में पीड़ा होने की शिकायत रहती है। शहरों में बसी स्त्रियों को इस पीड़ा का अधिक सामना करना पड़ता है। क्योंकि वह अपने स्तनों को कसे रहती हैं। जहां तक संभव हो दुग्धपान के समय स्तन खुले रखें ताकि उन्हें शुद्ध हवा मिलती रहे। वस्त्रों से रगड़ खाकर भी स्तनों के अग्रभाग पर खुजली अथवा जलन की शिकायत होती हैं। इससे छुटकारा पाने का उचित तरीका स्तनों की सफाई और ढीली पोशाक है।

कसी चोली पहनने वाली माताओं को स्तन रोग भी हो सकता है। इसे दूध का बुखार भी कहते हैं। और इसके लक्षण स्तनों पर उभर आते हैं। स्तन के किसी भाग में पीड़ा होना, गांठ निकल आना, जिसे दबाने से पीड़ा हो। ऐसे स्तनों में कहीं रुकावट होती है। इस समस्या से छुटकारा पाने के लिए उस स्थान को, जहां पीड़ा हो दबा कर दूध बाहर निकालते रहना चाहिए। बच्चों को स्तनपान कराने के बाद पीड़ाग्रस्त क्षेत्र को दबा कर दूध बाहर निकालने से बहुत हद तक पीड़ा से छुटकारा पाया जा सकता हैं। स्तनपान कराने वाली माताओं का सौंदर्य स्तनपान कराने से बढ़ता है। स्तनपान कराने वाली माताओं को वक्ष का कैंसर बिरले ही पाया जाता हैं।

स्वास्थ्य व सौंदर्य

कुछ सरल प्रयोग

उमेश पाण्डे, इन्दौर

यह एक निर्विवाद सत्य है कि आज भी अनेक ऐसी जड़ी बूटियां और पौधे मौजूद हैं जिनके द्वारा व्याधियों को ठीक किया जा सकता है, रूप सौंदर्य को संवारा जा सकता है। यहां ऐसे ही कुछ अति सरल स्वास्थ्य एवं सौंदर्यवर्द्धक औषधिक प्रयोगों का वर्णन किया जा रहा है:

टॉन्सिल

इनके बढ़ जाने से गला लगभग बंद हो जाता है, गाल व गले फूल जाते हैं, रोगी को बुखार भी आ जाता है, भोजन या पानी निगलना तक मुश्किल हो जाता है। टॉन्सिल्स के बढ़ जाने पर चिकित्सक आपरेशन कराने की सलाह देते हैं। किन्तु इस व्याधि को कटैली के अर्क से सहज ठीक किया जा सकता है। कटैली का पौधा जमीन पर छाया रहता है। इस संपूर्ण पौधे पर तीखे कांटे पाये जाते हैं। इसकी कांटेदार पत्तियां अनियमित आकारवाली होती हैं। इसके फूल बैंगनी रंग के तारे के आकार के होते हैं जिन पर पीले चावल की भांति परागकोष लगते हैं। फल गोल होते हैं। इसे भूरी रेंगनी या भटकटैया भी कहते हैं। वनस्पति शास्त्र में इसे सोलेनम झेंथोकारपम कहते हैं। कटेली के पंचांग को बिना औजार के उखाड़कर लावें और जल में उबालकर क्वाथ तैयार करें। इस क्वाथ से दिन में ३-४ बार गरारा करने से टॉन्सिल्स ठीक हो जाते हैं। यदि गरारा करते क्वाथ पेट में चला जावे तो भी हर्ज नहीं।

सफेद बाल

अनेक लोग समय से पूर्व ही बालों की सफेदी से दुखी रहते हैं। ऐसे लोग यदि लगभग १०० ग्राम बेर के पत्ते, १०० ग्राम भृंगराज के ताजे पत्ते, १०० ग्राम आँवले (गुठली निकला दें) तथा ५० ग्राम सीताफल की पत्तियों को चटनी की भांति पीस कर लगभग २५० मिलीलीटर सरसों के तेल में उबालें। जब सारा पानी उड़ जावे तब इस तेल को छान कर रख लें। इस तेल के नित्य लगाने से बाल काले होते हैं उनमें चमक आती है।

सुंदर चेहरा

थोड़ी सी मसूर की दाल लेकर उसे भली भांति पीस लें। तदुपरांत इसे नींबू के रस में अथवा कच्चे गाय के दूध में सान कर लेप बनावें। इस लेप को चेहरे पर लगावें तथा मसल-मसल कर झाड़ दें एवं बाद में चेहरे को गुनगुने जल से धोवें। इस प्रयोग से चेहरे का रंग निखर उठता है एवं चेहरे पर तिल, मस्सों आदि का निर्माण नहीं होता है।

रक्तचाप में कमी

अनेक लोग न्यून रक्तचाप से पीड़ित रहते हैं। इसके लिये भुट्टे के कुछ सूखे ठूंठ (जिनमें से दानों को निकाल लिया गया हो) लेकर उन्हें जलाकर राख बना लें। इस राख को शीशी में भरकर रख लें। इस राख की १ चुटकी मात्रा चाशनी या शहद के साथ उस समय लें जब इस बात का एहसास हो कि रक्तचाप कम हो गया है। इसके लेते ही तुरंत आराम आ जाता है। डिप्रेशन खत्म हो जाता है तथा उत्साह पुनः जागृत हो जाता है।

बाल बढ़ना

लगभग २०० मिलीलीटर खोपरे के तेल में ८ फूल गुड़हल के (लैटिनः *हिबिसकस रोजा सायनेन्सिस*) तथा लगभग १०० ग्राम अमरबेल को पीस कर मिलाकर इतना उबालें कि गारा पानी जल जावे। तेल को छान कर रख लें। इस तेल को लगाने से बाल चमकीले एवं लम्बे होते हैं-उनका झड़ना भी रुक जाता है।

श्वेत प्रदर

स्त्रियों में श्वेत प्रदर की व्याधि बहुत ही कष्टदायक होती है क्योंकि यह व्याधि उनकी ताकत और सौंदर्य दोनों का हनन करती है। इसके लिये स्त्री को तीन दिनों तक प्रतिदिन एक पाव छाछ में एक नींबू निचोड़ कर पीना चाहिए। तीन दिनों में यह व्याधि समाप्त हो जाती है।

उल्टी-घबराहट

किसी भी कारण से घबराहट होने पर एक-एक घण्टे पर इलायची का क्वाथ लेने से घबराहट खत्म हो जाती है। इलायची का क्वाथ बनाने के लिये एक तोला हरी इलायची को थोड़ा सा कूटकर उबालें। इसमें थोड़ी सी शक्कर घोल कर इस जल को छान कर एक कांच के गिलास में रख लेते हैं। यही इलायची का क्वाथ है। इलायची को जलाकर, जल के साथ लेने से उल्टी रुक जाती है।

कटिशूल या कमर का दर्द

डा. विमला अचल, गया

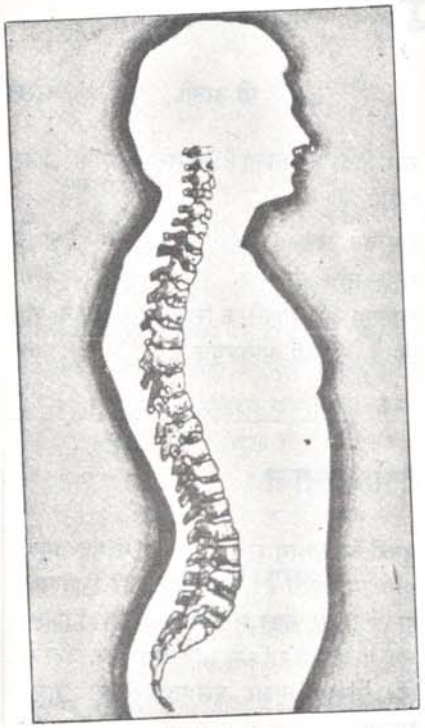

पीठ का निचला भाग, त्रिक प्रदेश, एक ऐसा स्थान है जहाँ रीढ़ की हड्डी की नीचे की कशेरुकाएँ, कशेरुकाओं के बीच की उपास्थियां, पेशियां और स्नायु मिलते हैं। यही वह स्थान है, जहाँ उठते-बैठते, चलते-फिरते, किसी चीज को उठाते-रखते तथा भार ढोने में अधिक जोर पड़ता है। स्त्रियों को घर के अधिकांश काम ऐसे करने होते हैं जिनमें कमर पर सबसे अधिक जोर पड़ता है। दूसरे, श्रोणि प्रदेश में स्थित प्रजनन अंगों का त्रिक-प्रदेश से सीधा सम्बन्ध है। प्रजनन अंगों से सम्बन्धित कोई भी रोग त्रिक-प्रदेश पर सीधे असर डालता है। इसीलिए स्त्रियां कमर के दर्द का सबसे अधिक शिकार होती हैं। उसकी व्यापकता को देखते हुए कुछ लोग यहां तक कहते सुने जाते हैं कि आधुनिकाओं में कटिशूल ने एक फैशन का रूप ले लिया है।

सामान्य कारण

स्त्रियों में कटिशूल सम्बन्धी कारणों को चार भागों में बाँटा जा सकता है- (१) सामान्य, (२) स्त्री-रोग सम्बन्धी, (३) प्रसव सम्बन्धी तथा (४) अस्थिविकृतियों से सम्बन्धित।

सामान्य कारणों में थकान और अस्वाभाविक शारीरिक मुद्राएँ प्रमुख हैं।

थकान- थकान का दर्द दिन भर के काम के बाद प्रायः शाम को होता है। जो महिलाएँ रात में काम करती हैं उन्हें प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में दर्द होता है। यह आराम से घटता है। इसमें दर्द और परिश्रम की मात्रा में कोई तालमेल नहीं होता। कभी तो थोड़ा परिश्रम करने के बाद ही होने लगता है और कभी अधिक परिश्रम करने के बाद भी कम होता है या कभी नहीं होता है। जिन स्त्रियों की पेशियों में शक्ति और तान कम होता है वे ही शूल का शीघ्र शिकार होती हैं। रजोनिवृत्तिकाल (मीनोपॉज़) के समीप आने पर, जबकि स्त्रियों का भार बढ़ने लगता है और पेशियों की क्रियाशीलता घटने लगती है, कटिशूल अधिक परेशान करता है। श्रमजनित कटिशूल के सम्बन्ध में प्रायः देखा जाता है कि वह किसी प्रभावी घटना- जैसे सर्दी, जुकाम, ज्वर, शल्यकर्म अथवा गर्भ ठहर जाने आदि के बाद एकाएक कम या शान्त हो जाता है। इससे लगता है कि यह शारीरिक कारणों की अपेक्षा मानसिक कारणों से ही अधिक पैदा होता है। इसीलिए कभी-कभी ऐसे केसों में वेदनाहर द्रव्यों की अपेक्षा चित्तशामक औषधियाँ अधिक कारगर होती देखी जाती हैं। इसका उपचार आराम और शिथिलीकरण की क्रियाएँ हैं।

अस्वाभाविक शारीरिक मुद्राएँ- गर्भावस्था, मोटापा, शारीरिक शिथिलता तथा ऊँची एड़ी के जूते पहनने आदि की हालत में स्त्री की शारीरिक मुद्राएँ अस्वाभाविक रूप धारण कर लेती हैं। किसी-किसी व्यवसाय में लगातार झुककर या बैठकर काम करने के कारण भी कमर पर अतिरिक्त भार पड़ता है। वृद्धावस्था में स्वतः कमर झुक जाती है। इन सब अवस्थाओं में कारणानुसार चिकित्सा की आवश्यकता पड़ती है। गर्भिणी को अधिकाधिक आराम पहुंचाकर, मोटी स्त्रियों का वजन औषधियों तथा व्यायाम द्वारा घटाकर ऊँची एड़ी के जूते-चप्पल पहनने वाली स्त्री को बिना एड़ी की और उसे भी कम से कम पहनने की राय देकर, कमर पर अत्यधिक कसे कपड़े पहनने वाली को ढीले कपड़े पहनने की राय देकर, शारीरिक एवं मानसिक शिथिलता में स्त्री को शारीरिक तथा मानसिक रूप से अधिक सक्रिय बनाकर-उसे शक्ति सम्पन्न कर उसके कटिशूल में कमी लाई जा सकती है। व्यवसाय में लगी स्त्रियों को काम के दौरान अपेक्षाकृत सही मुद्राएँ और बीच-बीच में आराम पहुंचाकर उन्हें लाभ पहुंचाया जा सकता है। निकट आती या बढ़ती हुई वृद्धावस्था में रसायन औषधियों द्वारा उसके दुष्परिणामों को बहुत हद तक रोका या कम किया जा सकता है। इस उम्र में उन्हें शारीरिक और मानसिक रूप से व्यस्त रखना, अकेलापन और असुरक्षा अनुभव न होने देना सबसे अधिक जरुरी है।

स्त्रीरोग सम्बन्धी कारण- स्त्रीरोग सम्बन्धी कारणों में प्रमुख है- (क) गर्भाशय-भ्रंश या उसका विस्थापन, (ख) गर्भाशय ग्रीवा शोथ, (ग) जननांगों में सुदम्य अथवा दुर्दम अर्बुद (ट्यूमर) (घ) शल्यक्रिया के बाद पीड़ा तथा (च) मासिक पूर्व तनाव। ये सभी स्थितियां कमर तथा पीठ के दर्द को जन्म देने वाली हैं।

(क) गर्भाशय का अपनी जगह से हट जाना या किसी ओर झुक जाना प्रायः गर्भस्राव, गर्भपात या प्रसव के उपरान्त देखा जाता है। इससे उत्पन्न दर्द का एहसास प्रायः त्रिक्-क्षेत्र में ही होता है और शाम को बढ़ जाता है। विश्राम करने से इस पीड़ा में भी कमी आती है।

(ख) गर्भाशयग्रीवा में जख्म या सूजन होने पर भी प्रायः त्रिक-प्रदेश में ही दर्द होता है। यह दर्द लगातार बना रहता है। इसमें प्रदर-द्रव और कभी-कभी रक्तस्राव भी होते देखा जाता है।

(ग) प्रजनन अंगों- जैसे गर्भाशय, डिम्बनलिका, डिम्बग्रन्थि आदि किसी में भी ट्यूमर के होने पर कटिशूल पाया जाता है। यदि कटिशूल के लक्षण पहले से वर्तमान हों और ट्यूमर बाद में उत्पन्न हुआ हो तो प्रायः वह आसानी

शेष पृष्ठ ३७ पर

श्वेतप्रदर

डॉ. पी.अली., पट्टांबि, केरल

यह स्त्रियों को होने वाला ऐसा रोग है जिसमें योनि से एक दूधिया स्राव निकलता है। चिरकालिक श्वेत प्रदर के परिणामस्वरूप रोगिणी को सार्वदैहिक अंगग्लानि, भार में कमी, रीढ़ तथा कूल्हे की हड्डियों में दर्द की शिकायत रहती है। योनि के अंदर गीलापन रहना स्वाभाविक और अनिवार्य है। गर्भाशयी ग्रंथियों से आनेवाला स्राव योनि की दीवारों में स्थित वाहिकाओं से रिसने वाले तरल पदार्थ से मिलकर आंतरिक सतह को तर करता है। यह स्राव हल्के दूधिये रंग का होता है जिसमें असंख्य जीवाणु होते हैं। ये जीवाणु लैक्टिक ऐसिड बनाते हैं और वहां अम्लीय माध्यम तैयार करते हैं जिससे रोगजनक स्थिति का निर्माण नहीं हो पाता। स्वस्थ स्थिति में योनि का स्राव गंधहीन होता है। रुग्ण अवस्था में यौन जीवाणुओं की संख्या घट जाती है। परिणामस्वरूप यौन माध्यम की अम्लता कम होती है और विविध रोगजनक रोगाणु वहां पनपने लगते हैं। योनि का स्राव इस स्थिति में रंग और गंध में बदलने लगता है। इसका उपचार आवश्यक हो जाता है।

नवजात कन्या की योनि शिथिल और फैली होती है जिससे उसमें जीवाणुओं का प्रवेश और वृद्धि सहज होती है। अतः उनके गुप्तांग हमेशा ढके होने चाहिए। सूजाक के जीवाणु विशेषरूप से खतरनाक होते हैं। कभी-कभी हस्तमैथुन भी श्वेतप्रदर का करण बन जाता है। अस्वस्थता और दीर्घकालिक रजोधर्म भी श्वेत प्रदर उत्पन्न कर सकते है। विवाहित स्त्रियों को गर्भ स्राव के कारण गर्भाशय और उसकी ग्रीवा के फटने से यह रोग हो सकता है।

उपचार

आयुर्वेदिक दृष्टि से श्वेतप्रदर कफ दोष के कारण होता है। बरगद और अंजीर की छाल के काढ़े से नियमित रूप से योनि का प्रक्षालन इसका सर्वोत्तम उपचार है। छालों को सुखा कर चूर्ण कर लें और एक लीटर पानी में एक-एक चम्मच दोनों चूर्ण डालें। उबाल कर आधा कर लें, छान लें और गुनगुने साफ काढ़े से धोयें।

साधारण श्वेत प्रदर में प्रदरान्तक लेह्यय ४ ग्रेन की मात्रा में शहद के साथ दिन में तीन बार लेने से एक सप्ताह में रोग से छुटकारा मिल जाता है। घृतकुमारी का स्वरस दिन में दो बार शहद के साथ दिया जा सकता है। इससे यौन अंगों का बल बढ़ता है।

समुचित उपचार और स्वास्थ्यकर चर्या के साथ-साथ पोषाहार, स्वच्छ वायु, समुचित व्यायाम और मानसिक स्थिति इस रोग के शीघ्र मिटने के लिए आवश्यक हैं।

श्वेत प्रदर के देशी इलाज

श्वेत प्रदर का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण कुपोषण है। इसके अतिरिक्त लगभग ६% महिलाओं में यह व्याधि मानसिक चिन्ता, या कष्टप्रद वैवाहिक जीवन या हारमोन्स की अनियमितता के कारण होती है। २०% रोगी गर्भाशय ग्रीवा व्रण के तथा १९% रोगी योनि शोथ के होते हैं। इसके कारणों पर वय की दृष्टि से विचार करें तो इनका निदान करना सरल हो जाता है। विवाह के पूर्व कुपोषण, व्यक्तिगत अस्वच्छता, योनि को न धोना, पाण्डु एवं हस्तमैथुन जैसे कारण प्रधान हैं।

शादीशुदा स्त्री में विभिन्न प्रकार के संक्रमण, योनिशोथ एवं गर्भाशय ग्रीवा शोथ मुख्य कारण है। वहीं संतान प्राप्ति के बाद गर्भाशय ग्रीवाव्रण, विशिष्ट है। प्रौढ़ावस्था में रजोनिवृत्ति काल आने से पूर्व गर्भाशय अर्बुद, योनिभ्रंश एवं कैंसर आदि और रजोनिवृत्ति काल के बाद कैंसर, योनिभ्रंश वृद्धावस्थाजन्य योनिशोथ, संक्रमण एवं गर्भाशय में संक्रमण जन्य स्राव कारण हो सकती हैं।

व्याधि लक्षण

योनि से स्राव पीतवर्ण का होना, चिपचिपा होना, रक्त मिश्रित साथ ही उसमें बदबू आना, कटिशूल, आलस्य, दुर्बलता अरुचि एवं क्षुधानाश जैसे लक्षण मिल सकते हैं।

उपचार

निदान यानी कारण का निवारण सही पोषण, व्यक्तिगत स्वच्छता रजःस्राव काल में स्वच्छ वस्त्रों का प्रयोग रोग चिकित्सा में महत्वपूर्ण योगदान करता है। यदि कब्ज की शिकायत हो तो सबसे पहले मृदु विरेचक जैसे त्रिफला चूर्ण पांच ग्राम रात्रि में सोते समय ठंडे जल से लें। पोषक आहार प्रसन्नता स्वच्छ वायु, समुचित व्यायाम व मानसिक शांति इस रोग के शीघ्र मिटने के लिए आवश्यक है। पांनी में फिटकरी घोलकर उस पानी से नहाना व योनि का प्रक्षालन करना चाहिए।

तण्डुलोदक का सेवन (४० ग्राम चावल कूटकर धो लें, उसे ८ गुने जल में डालकर ३-६ घंटे तक छोड़ दें। पुनः हाथ से मसलकर कपड़े से छान लें। इसे ४० मिली. की मात्रा में दिन में २ बार दें।

नागकेशर चूर्ण १ ग्राम, तण्डुलोदक या तक्र (मट्ठा) के साथ दें। पुष्यानुग चूर्ण ४ ग्राम प्रातः-सायं शहद व मिश्री युक्त ५० मिली. तण्डुलोदक के साथ दें।

प्रदरान्तक लौह १ ग्राम शहद के साथ दिन में ३ बार दें।

घृतकुमारी स्वरस १० मिली. दो बार शहद के साथ दें।

अपथ्य : मांस, मछली, अण्डा, पाक-पकवान, प्याज, लहसुन, गर्म मसाले, अचार, खटाई, गरिष्ट व वातकारक चीजों से बचना चाहिए।

महिलाओं के गुप्तरोग

वैद्य ब्रजबिहारी मिश्र, लखनऊ

लज्जालु स्वभाव के कारण महिलाएं अपने अनेक गुप्त रोगों का समय से उपचार नहीं करातीं। वे उन रोगों के उपचार के लिये तब प्रवृत्त होती हैं अथवा घरवालों को बताती हैं जब रोग काफी बढ़ चुका होता है। यही कारण है कि हमारे देश में महिलाओं का स्वास्थ्य काफी गिरा हुआ रहता है। महिलाएं जिन प्रमुख रोगों से ग्रस्त रहती हैं उनमें प्रदर (श्वेत एवं रक्त) योनि कण्डू, मासिक धर्म की विकृति आदि उल्लेखनीय है।

प्रदर रोग

पुरुषों में प्रमेह और स्त्रियों में प्रदर एक आम रोग हो गया है। साधारणरूप से यह श्वेत एवं रक्त प्रदर के नाम से जाना जाता है। इसकी उत्पत्ति में जो कारण बताए गए हैं उनमें छोटी आयु में अति पुरुष समागम तथा गर्भधारण, गुप्तांगों की सफाई का अभाव, गर्भावस्था में प्रसव के समय या उसके बाद योग्य उपचार का अभाव, विरुद्ध आहार विहार का सेवन, मद्यपान, अध्यशन (भोजन के ऊपर भोजन करना) अजीर्ण, गर्भपात, उपवास, अधिक पैदल चलना, अधिक शोक करना, आदि से स्त्रियों की योनि में विकृति पैदा होती है, गर्भाशय फूल जाता है तथा रक्त या श्वेत, नीला, काला, पीला योनिस्राव प्रारम्भ हो जाता है जिसे प्रदर कहते हैं। सभी प्रकार के प्रदर रोगों में अंगमर्द एवं वेदना होती हैं।

एलोपैथी के अनुसार प्रदर स्वतंत्र रोग न होकर कई रोगों के लक्षण स्वरूप स्त्रियों को होता है। यह प्रायः गर्भाशय, डिम्बग्रन्थियों, गर्भाशय मुख, योनिमार्ग की सूजन, मूत्राशय शोथ, सूजाक, मधुमेह, वृक्क रोग, अजीर्ण आदि के लक्षण के रूप में उत्पन्न होता है।

प्रदर रोग के कारण प्रायः स्त्रियों का स्वास्थ्य खराब रहता है। कमर, पीठ, गर्दन और सिर में दर्द रहना, हांथ पैरों में दर्द रहना, किसी काम में मन न लगना, चिन्ता और भ्रम बना रहना, आलस्य और अशक्तता के कारण शरीर कृश और मुरझाया हुआ सा और कान्तिहीन रहना आदि लक्षण रहते हैं। रोगिणी युवावस्था में ही वृद्धा जैसी दीखने लगती है।

चिकित्सा

बाह्य चिकित्सा एवं आभ्यन्तर चिकित्सा दोनों के प्रयोग से प्रदररोग शीघ्र अच्छा होता है।

बाह्य चिकित्सा– बरगद, गूलर व आम की छाल एक–एक बड़े चम्मच लेकर आधा लीटर पानी में उबालें जब आधा जल शेष रहे तब छान कर पिचकारी से योनि साफ करने से अच्छा लाभ होता है।

- आंवला, हर्र बड़ी, बहेड़ा समान मात्रा (त्रिफला) चूर्ण ५० ग्राम लेकर आधा लीटर जल में पकावें आधा शेष रहने पर उतार लें। इस क्वाथ में भुनी फिटकरी ६ ग्राम मिला कर योनि साफ करने से रक्तस्राव सहित समस्त विकार शान्त होते हैं।

आभ्यन्तर चिकित्सा– शास्त्रीय मतानुसार सभी प्रकार के प्रदररोगों में चिकित्सा के पूर्व रोगिणी को वमन कराना हितकर होता है। बिन्दकी के प्रख्यात चिकित्सक शतवर्षीय स्व. पं. मन्नूलाल वैद्य के श्वेत एवं रक्त प्रदर नाशक दो अत्यन्त अनुभूत प्रयोग निम्नलिखित हैं:–

- समुद्रसोख, मुलेठी, बबूल की सेगरी एवं मिश्री समान भाग लेकर सूक्ष्म चूर्ण करें। ६ ग्राम प्रातः व ६ ग्राम रात को गोदुग्ध या चावल के धोवन से लेने से श्वेत प्रदर शीघ्र नष्ट होता है।
- पीपल की लाख ५० ग्राम, नागकेसर २५ ग्राम, पेठा बीज की गिरी २५ ग्राम एवं मिश्री ५० ग्राम लेकर कूट छान कर रख लें। ६ ग्राम प्रातः व ६ ग्राम सायंकाल गोदुग्ध से लेने से रक्तप्रदर अच्छा होता है।
- शास्त्रीय प्रयोगों में कुश की जड़ को चावलों के धोवन के साथ पीस कर लेने से प्रदर अच्छा होता है।
- ३ ग्राम लोध पठानी के चूर्ण में २ रत्ती भुना सुहागा मिला कर प्रातः सायं मधु से लेने से प्रदर ठीक होता है। २ तोला घृतकुमारी स्वरस मधु मिलाकर पीने से प्रदर शीघ्र ठीक होता है।

समस्त प्रदर रोगों में निम्नलिखित औषध योग अत्यन्त लाभदायी सिद्ध हुआ है:–

- प्रदरान्तक लौह २ रत्ती ३ ग्राम पुष्यानुग चूर्ण में मिला कर मधु के साथ प्रातः सायं लें। भोजनोपरांत २ तोला अशोकारिष्ट, २ तोला पत्रांगासव, ४ तोला शीतल जल में मिला कर लें। रात में सोने के पूर्व २ गोली चन्द्रप्रभावटी मन्दोष्ण दुग्ध या जल से लें। इस प्रयोग से ४० दिन में अनेक दुस्साध्य रोगी अच्छे हुये।

पथ्यापथ्य– प्रदर के रोगियों को तली चीजें एवं मसालेदार पदार्थों का सेवन वर्जित है। लंघन नही करना चाहिए। रात्रि जागरण तथा दिन में सोना निषिद्ध है। प्रातः भ्रमण तथा भोजनोपरांत सुपाड़ी का सेवन लाभप्रद है। रोगी को चिन्ता मुक्त तथा स्वच्छ रहना चाहिए। सात्विक आहार विहार लाभदायक है।

योनि कण्डू या योनि में खुजली

स्त्रियों में कफ के विकास से, बस्तिगत अर्बुद होने पर, योनिस्थित शिराओं का प्रसार होने से, जरायु में विकृति होने से, अति प्रसंग से, ऋतु धर्म होने के समय, गर्भ के उत्पन्न होने के पूर्व योनि के मध्य में कण्डू रोग हो जाता है और यह रोग वृद्धावस्था में विशेष रूप से होता है।

चिकित्सा– योनि कण्डू ग्रस्त रोगिणी को पहले स्निग्ध विरेचन देकर बलकारक, रक्तदोषांतक तथा रसायन औषधियों का प्रयोग करना चाहिए। भुनी फिटकरी जल में मिला कर योनि प्रक्षालन करने से कण्डू शान्त होती है। हरीतकी, कुष्ट, पिप्पली, मरिच व सेंधानमक प्रत्येक समभाग पीस कर कपड़ छान चूर्ण कर जल के साथ खरल कर अंगुष्ठ के प्रमाण की वर्तिका बना लें। इसे नित्य योनि में धारण करने

से योनि कण्डू नष्ट हो जाती है। कपूर ४ ग्राम, सुहागा भस्म २ ग्राम तथा नारियल तैल २५ ग्राम इन्हें मिला कर दिन में २–३ बार लगाने से योनि कण्डू शांत होती है।

मासिक धर्म की विकृति

यह प्रायः १२ वर्ष की अवस्था से प्रारम्भ होकर ५०–५५ वर्ष की आयु तक चलता रहता है। इस आर्तव की विकृतियाँ नारी स्वास्थ्य के लिये सर्वाधिक घातक होती हैं। कई विकृतियों में जिसे कृच्छार्तव रजःकृच्छता, कष्टरज अथवा डिस्मेनोरिया भी कहते हैं अत्यन्त कष्टकर होती है।

कृच्छार्तव : इसमें मासिक आने के समय रोगिणी को तीव्र शूल होता है। शूल के कारण कभी–कभी रोगिणी बेहोश भी हो जाती है। स्राव कम हो या ज्यादा किन्तु रोगिणी दर्द से बेचैन हो जाती है। शूल पेडू से प्रारम्भ होकर अन्य स्थानों में फैल जाता है। ऋतुस्राव के साथ–साथ या पहले दर्द शुरू होता है।

रोग के कारण– कृच्छार्तव दो प्रकार के कारणों से उत्पन्न होता है आर्तववह स्रोत की रचनागत विकृति और क्रियागत विकृति। रचनागत विकृतियों में गर्भाशय या डिम्ब ग्रन्थियों का ठीक रूप से निर्माण न होना, गर्भाशय का विकृत विकास, गर्भाशय का मुड़ जाना आदि है, एवं क्रियागत विकृतियों में आर्तवस्राव की अस्वाभाविकता तथा गर्भाशय के संकोच विस्फार में अनियमितता है। इसके अतिरिक्त गर्भाशय में अर्बुद बन जाना, हिस्टीरिया, स्नायु दुर्बलता, पीलिया, जरायु रक्तसंचय, ऋतुकाल में मैथुन, मानसिक उद्वेग आदि कारणों से यह रोग हो जाता है जिसमें मासिकस्राव कष्ट के साथ आता है।

रोग के प्रमुख लक्षण– इसमें शिरःशूल, कटि, जंघा एवं श्रोणिप्रदेश में तीव्र, शूल, आलस्य आदि लक्षण होते हैं। दर्द मासिक धर्म प्रारम्भ होने से १–२ दिन पूर्व या ७–८ दिन पहले आरम्भ होता है और मासिक स्राव जारी होते ही बन्द हो जाता है। कभी–कभी दर्द माहवारी से तुरन्त पहले या उसके साथ शुरू होता है और थोड़ी देर में दौरे के रूप में दर्द उठता रहता है और शान्त भी हो जाता है।

चिकित्सा– गर्भाशय की क्रिया शिथिलता को ठीक करना ही मुख्य उपचार है। गर्म मिट्टी की पट्टी पेडू में बांधने तथा गर्म जल की बोतल से सेंक करने से शूल शान्त होता है। नष्टपुष्पांतक रस २५० मि.ग्रा. रजःप्रवर्तिनी वटी ५०० मि.ग्रा. चन्द्रप्रभा वटी ५०० मि.ग्रा. मिला कर प्रातः सायं महारास्नादि क्वाथ से देने से शीघ्र लाभ होता है। महारास्नादि क्वाथ १० मि.ली. समान जल मिला कर लेना चाहिए। भोजन के बाद रोगिणी को कुमार्यासव २० मि.ली., अशोकारिष्ट २० मि.ली. तथा ४० मि.ली. जल मिला कर दोनों समय दें। फलघृत २–२ चम्मच सुबह शाम देने से लाभ होता है। लहसुन का स्वरस प्रातःकाल पीने से लाभ मिलता है। महायोगगुग्गुलु २ गोली प्रातः २ गोली रात्रि को गरम दूध से लेने से कष्टार्तव में लाभ होता है।

पथ्यापथ्य– अम्ल, तिक्त, कटु, देर से पचने वाले पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए। इस रोग में प्रातः भ्रमण, गर्मजल से कटि स्नान, तिल, उड़द, दुग्ध आदि का सेवन हितकर रहता है।

पृष्ठ ३४ का शेष

...कटिशूल या कमर का दर्द

से ठीक हो जाता है। दुर्दम अर्बुद में कटिशूल ट्यूमर के पैदा होने के बाद उसके बढ़ जाने पर ही प्रारम्भ होता है और प्रायः रक्तस्राव की बहुतायत देखी जाती है।

(घ) उदर प्रदेश में विशेषरूप से प्रजनन अंगों से सम्बन्धित किसी भी तरह के **आपरेशन** किए जाने के बाद होने वाली पीड़ा में कमर भी अवश्य प्रभावित होती है।

(च) मासिक पूर्व तनाव की पीड़ा मासिक शुरू होने के २–१ दिन अथवा कुछ समय पहले शुरू होती है और काफी तेज होती है। यह कमर के अतिरिक्त त्रिक, जंघाओं और पेडू को भी प्रभावित करती है।

चिकित्सा

इस वर्ग की विकृतियों में भी कारण के अनुरूप चिकित्सा की जाती है। गर्भाशयभ्रंश के कारण उत्पन्न कटिशूल में गर्भाशय को अपनी जगह पर बैठा देने पर, गर्भाशय ग्रीवा की सूजन में घाव तथा सूजन का उपचार हो जाने पर, अर्बुदों में शल्य क्रिया द्वारा अर्बुदों के निकाल दिए जाने पर, शल्यपीड़ा से सम्बद्ध शल्यपीड़ा के समाप्त हो जाने पर तथा मासिक धर्म पूर्व तनाव के रूप में उत्पन्न कमर का दर्द मासिक के शुरू हो जाने पर अथवा तत्सम्बन्धी विकृति के दूर हो जाने पर अपने आप शान्त हो जाता है। आवश्यक होने पर साथ–साथ वेदनाहर–द्रव्यों का भी प्रयोग किया जा सकता है।

प्रसूति अवस्था से सम्बन्धित– इसमें प्रमुख है– (क) गर्भावस्था के अन्तिम महीनों में प्रतीत होने वाला स्नायविक तनाव तथा (ख) प्रसवोत्तर कमजोरी।

(क) गर्भावस्था के आखिरी महीनों में कमर पर पड़ने वाले अतिरिक्त भार और स्नायविक तनाव के फलस्वरूप उत्पन्न कटिशूल में भी आराम, और पीठ तथा त्रिक–प्रदेश पर हल्की मालिश से आराम मिलता है। बच्चा पैदा हो जाने के बाद यह पीड़ा स्वतः समाप्त हो जाती है।

(ख) बच्चा पैदा होने के बाद जिन स्त्रियों की उचित देखभाल नहीं होती, पौष्टिक भोजन और उचित आराम नहीं मिलता वे भी कमजोरी के कारण कटिशूल का अनुभव करने लगती है। प्रसूति–ज्वर भी कटिशूल को उत्पन्न कर सकता है। प्रसूति–ज्वर के उचित उपचार और प्रसव के बाद उपयुक्त देखभाल, सेवा–सुश्रूषा से ऐसी स्त्रियों का कटिशूल दूर हो जाता है।

अस्थि सम्बन्धी विकृतियाँ– इनमें प्रमुख हैं–कटित्रिक–तनाव, कशेरुका–चक्रिका (डिस्क में तनाव) गृध्रसी तथा जन्मजात विकृतियाँ। इन सभी स्थितियों में कटिशूल की कुछ न कुछ मात्रा अवश्य पाई जाती है। विकृति जितनी ही गम्भीर होती है, शूल की मात्रा भी उतनी ही अधिक होती है।

इन विकृतियों से उत्पन्न कटिशूल भी लाक्षणिक होता है और मूल रोग के ठीक हो जाने पर वह अपने आप शान्त हो जाता है।

हिस्टीरिया का होम्योपैथिक इलाज

डा. रवीन्द्र प्रकाश, कानपुर

मस्तिष्क पर अधिक मानसिक तनाव, अदम्य इच्छाओं का दमन, कुण्ठाग्रस्त स्थिति, हीन भावना से ग्रसित होने के कारण या अचानक प्रबल आघात के कारण मस्तिष्क का नियन्त्रण शरीर के स्नायविक तन्त्रों पर नहीं रह पाता और मरीज थोड़े समय के लिए अपनी सुध-बुध खो देता है यही हिस्टीरिया या फिट्स है।

हिस्टीरिया रोग अधिकतर स्त्रियों को होता है, जो कोमल, भावुक और संवेदनशील होती हैं। संवेदनशील, जल्दी नाराज होने वाली या मानसिक रूप से असन्तुष्ट और अतृप्त महिलाओं को यह रोग अधिक होता है। विशेषकर यौन अतृप्ति इस रोग का प्रमुख कारण है। ऐसी स्त्रियों को जब बच्चा हो जाता है, तो प्रायः यह रोग अपने आप ठीक हो जाता है।

हिस्टीरिया अधिकतर १२-१३ से लेकर ३५ वर्ष तक की स्त्रियों को होता है।

लक्षण

यह रोग किसी भी समय हो सकता है। इसका दौरा मिरगी की तरह एकान्त में सोते हुए नहीं पड़ता। आँखों की पलकें बन्द होने के साथ हाथ पैर और शरीर में ऐंठन होने लगती हैं। हिस्टीरिया और मिरगी को बहुत लोग एक मानते हैं जबकि दोनों में अन्तर होता है।

हिस्टीरिया का होम्योपैथिक उपचार

पल्सेटिला- नम्र, धीर और अभिमानी तथा सहज में हंसने या रोने वाली, अपना कष्ट बताते-बताते रो देनी वाली, अस्थिर मति, परिवर्तनशील विचारवाली होती स्त्रियों को पल्सेटिला देना चाहिए। रोगी हर वक्त खुली हवा में रहना चाहता है। अफरा और अजीर्ण की भी शिकायत होती है। यह औषधि उस हिस्टीरिया में दी जाती है जिसमें रोगी को प्रदर और कष्टदायक मासिक स्राव होता हो।

एकोनाइट और बेलेडोना- चेहरा लाल, नाड़ी की गति तेज और हल्का ज्वर, दिल की धड़कन अधिक, मासिक स्राव कष्टदायक और बहुत अधिक बहुत दिन से रुकी हुई आंखे लाल और पुतली फैली हुई होने पर देते हैं। हिस्टीरिया के साथ ये लक्षण नवयुवतियों में अधिक पाये जाते हैं।

कौलोफाइलम- अत्यधिक मासिक स्राव और गर्भाशय के अन्य रोग के कारण उत्पन्न हिस्टीरिया।

सिमिसिफ्यूगा- गर्भाशय के किसी रोग के कारण या मानसिक गड़बड़ी और दिल के किसी रोग के कारण शरीर में ऐंठन के साथ ही हिस्टीरिया के लक्षण होते हैं।

कोनियम- हिस्टीरिया का रोग जब गम्भीर अवस्था में हो। रोगी अधिक उम्र की अविवाहित हो और उसे मानसिक कष्ट रहता हो, कोनियम देना उचित रहता है। हिस्टीरिया के लक्षण के साथ डिम्बकोश की बीमारी, डिम्बकोष का बढ़ना, उसमें कड़ापन और दर्द, जरायु ग्रीवा का कड़ा हो जाना, पीड़ा, अधूरा गर्भ, ऋतु स्राव देर से होना, परिमाण में बहुत ज्यादा होना और २-१ दिन रह कर बन्द हो जाना ऐसे लक्षण होने पर कोनियम देते हैं।

औरम मेटालिकम- रोगी में, आत्महत्या की इच्छा अधिक होती है। वह अपने मन में समझने लगती है कि उसने अपने रिश्तेदारों का प्रेम खो दिया है। इसलिए उसे मर जाना चाहिए। हिस्टीरिया के फिट्स के साथ वह कभी हंसती है और कभी रोती है।

इग्नेशिया- रोगी बहुत अधिक उदास, दुःखित और शोकाकुल रहने के साथ गहरी सांस लिया करती है। कभी हंसती है कभी रोती है उसकी

शेष पृष्ठ ४० पर

मिरगी	हिस्टीरिया - (फिट्स)
इस रोग से स्त्री और पुरुष दोनों ग्रसित हो सकते हैं।	यह रोग प्रायः स्त्रियों को ही होता है।
इसका दौरा अचानक आता है। मरीज इसके आने की गति को समझ नहीं पाता और कटे हुए वृक्ष की तरह धड़ाम से गिर पड़ता है।	इसका दौरा अचानक नहीं आता और न ही इसमें अधिक तीव्रता होती है। मरीज अपने को सम्हालते हुए गिरता है।
चेतना अकस्मात लुप्त हो जाती है।	चेतना धीरे-धीरे लुप्त होती है।
मरीज की आँखों की पुतली ऊपर चढ़ जाती है, गर्दन टेढ़ी हो जाती है, जबड़े कस जाते हैं और दाँतों का किटकिटाना होता है। मलमूत्र अपने आप हो जाता है। रोगी बेसुध हो जाता है और बोल नहीं पाता व दौरे के बाद बहुत कमजोरी अनुभव करता है।	आँखें पूर्ण रूप से बन्द हो जाती हैं। गर्दन टेढ़ी नहीं होती, दांत लग जाते हैं। शरीर पर नियन्त्रण रहता है रोगी बेसुध नहीं होता, बड़बड़ाता रहता है। कमजोरी का अधिक अनुभव नहीं करता है।
मिरगी के दौरे में मुखमण्डल विकृत होता है।	हिस्टीरिया में मुखमण्डल वैसे का वैसा ही रहता है।
मुंह से झाग आते हैं।	झाग नहीं आता।
इसका दौरा बहुत कम समय के लिए आता है। इसका दौरा दस सेकेण्ड या अधिक से अधिक दो मिनट से पांच मिनट के लिए आता है।	इसका दौरा ज्यादा देर तक बना रह सकता है। कभी-कभी कई दिनों तक भी रहता है।

महिलाओं में मानसिक रोग

डा. अर्चना शुक्ला, लखनऊ

डिप्रेशन का अर्थ हम मोटे तौर पर उदासी या अवसाद से लेते हैं। अवसाद या उदासी बहुत ही सामान्य मनोवैज्ञानिक समस्या है। खास तौर पर यह समस्या अधिक पढ़े–लिखे बुद्धिजीवी वर्ग व स्त्रियों को परेशान करती है। यदा कदा हम सभी अवसाद की चपेट में आते ही रहते हैं। हमें निराशा, चिढ़, सिरदर्द और थकान घेर लेती है और हर वक्त अकेले में रहने की ही इच्छा होती है यहाँ तक की सुबह बिस्तर से भी उठने का मन नहीं करता है। आमतौर पर मानसिक रोग पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक होते हैं– जैसे डिप्रेशन (अवसाद) हिस्टीरिया, मनोदैहिक रोग आदि।

यदि हम कहें कि बीसवीं सदी तनाव का युग है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। पढ़ाई, कैरियर, व्यवसाय, परिवार में तालमेल की कोशिश हर तरफ तनाव ही तनाव है। मनोदैहिक रोग में अत्यधिक तनाव व संवेगात्मक असंतुलन के कारण अनेक शारीरिक लक्षण उत्पन्न होते हैं जैसे– अल्सर, माइग्रेन, हाइपरटेंशन इत्यादि।

हिस्टीरिया में रोगिणी शारीरिक अक्षमता का शिकार होती है किशोरावस्था में हिस्टीरिया ज्यादा होता है। प्रौढ़ व मध्य आयु में डिप्रेशन के ज्यादा केस देखने को मिलते हैं। हिस्टीरिया के वेगकाल में आयाम, मूर्च्छा, अर्धमूर्च्छा, गुल्म आदि लक्षण होते हैं। इन लक्षणों का मूल यह होता है कि रोगी किसी अतृप्त इच्छा को अपने अन्दर दबाये रहता है, यह इच्छा काम (सेक्सुअल डिजायर) की हो सकती है, अलंकार प्राप्ति की हो सकती है, किसी के प्रेम की प्राप्ति की हो सकती है या किसी अन्य प्रकार की हो सकती है।

अवसाद के लक्षण

- थका हुआ महसूस करना
- हर वक्त दुख की प्रतीति
- रोजमर्रा के कार्यों में अरुचि, निराशाजनक विचारों का मस्तिष्क में आना,
- वजन का कम होते जाना
- भूख न लगना या अधिक लगना
- यौन सम्बन्धों में अरुचि
- भोजन का न पचना, कब्ज की शिकायत
- सिरदर्द का बना रहना
- नींद का कम आना
- आत्महत्या की प्रवृत्ति
- आत्म सम्मान की कमी
- लगातार उदासीन बने रहना

अवसाद की स्थिति गंभीर होने पर सबसे बड़ा खतरा आत्महत्या का रहता है आत्महत्या के मामले में एक मुख्य कारण अवसाद होता है इसलिये आत्महत्या करने की धमकी विशेष रूप से जब बार–बार बिना किसी खास कारण के दी जाये तो उस पर गंभीरता से विचार करना चाहिये और डाक्टर की तुरन्त सलाह लेनी चाहिये।

अवसाद क्यों होता है ? इसके कई कारण हो सकते हैं संबंधों में समस्यायें भी इसका कारण हो सकती है। ये समस्यायें पारिवारिक या व्यवसाय से संबंधित हो सकती है। कभी–कभी किसी पारिवारिक दुर्घटना, बीमारी या आर्थिक समस्याओं से भी डिप्रेशन (अवसाद) शुरू हो जाता है या मासिक धर्म से भी इसका संबंध हो सकता है।

अवसाद बीमारी का रूप तभी लेती है, जब यह दौर बहुत लम्बे समय तक चले। यह अवसाद व्यक्ति की अन्य भावनाओं और विचारों को गौण और महत्वहीन बना देता है और व्यक्ति हताश हो कर उसके सामने आत्म समर्पण कर डालता है। इसके दो रूप हैं। पहला रूप तो वह है जब व्यक्ति पर किसी बाहरी कारण की गम्भीर प्रतिक्रिया होती है। दूसरे प्रकार का अवसाद शरीर जन्य होता है। इसका संबंध शारीरिक विकार या परिवर्तन से है। ये परिवर्तन अधिकतर मस्तिष्क में होते हैं और इनका संबंध किसी बाहरी कारण से नहीं होता है।

अवसाद किसी भी व्यक्ति को किसी भी उम्र में हो सकता है। लेकिन फिर भी इसकी ज्यादा सम्भावना जीवन के खास मोड़ों पर होती है। जैसे किशोरावस्था, माँ–बाप बनने के कुछ बरसों तक, रजोनिवृत्ति और अवकाश प्राप्त होने पर। अवसाद (डिप्रेशन) कम करने के लिये कुछ उपाय आप स्वयं कर सकती हैं–

- अपने आपको व्यस्त रखिये– किसी ऐसी चीज में रुचि लें जिससे आपको आनंद की प्राप्ति हो सके।
- आनंद उठाने के लिये कुछ खास योजना बनाएं। आप दोस्तों के साथ अपना समय बाहर बिता सकती हैं। अपने लिये उपहार स्वरूप कुछ खरीदें। संगीत का आनंद ले सकती हैं या अच्छी पुस्तक पढ़ सकती हैं। इससे आपका आत्मविश्वास ऊपर उठेगा।
- व्यायाम से आप शारीरिक और मानसिक दोनों रूप से बेहतर महसूस करेंगी।
- आप ध्यान या योग से बहुत जल्दी ही तनाव या दिमागी परेशानी से छुटकारा पा सकती हैं।

कुछ अवसाद तो अपने आप दूर हो सकते हैं और कुछ को थोड़ा सा प्रयास करके आप स्वयं भी दूर कर सकती हैं और फिर अपने डाक्टर से मिल कर उचित सलाह अवश्य ले लें। आजकल उपलब्ध नई–नई दवाइयाँ और उत्तम मानसिक उपचार के कारण आज अवसाद जैसे दानव का सामना करने की स्थिति में हम हैं। जब कभी भी अत्यधिक अवसाद बिना किसी कारण के हो तो अपने पारिवारिक डाक्टर से संपर्क करें।

भारतीय परिवेश में नारी–स्वास्थ्य

औरतों के स्वास्थ्य पर इसका बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है कि उनकी आर्थिक भूमिका के बारे में लोगों की क्या धारणा है। स्त्रियों की घरेलू भूमिका नापने की कसौटी यह है कि कोई स्त्री घरेलू दायरे में किस हद तक सीमित है। घर को चलाने की उसकी जिम्मेदारी कितनी है।

अधिकतर देशों में स्त्री की औसत आयु पुरुषों की तुलना में अधिक है। भारत में ३५ वर्ष की आयु के बाद पुरुष–मृत्यु की घटना अधिक होती है। ऐसा अनुमान है कि ३५ वर्ष के बाद पुरुषों में टी.बी. के कारण मृत्यु अधिक होती है। इसमें धूम्रपान की भी भूमिका हो सकती है। भारत में स्त्रियों के धूम्रपान पर विशेष प्रतिबंध है जिससे भारतीय नारी को स्वास्थ्यपरक लाभ मिल जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार भारत में ५२% वयस्क पुरुष धूम्रपान करते हैं जबकि स्त्रियां मात्र ३%। इसी प्रकार दिल का दौरा भी स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों को अधिक प्रभावित करता है। मद्यपान से होने वाली व्याधियाँ भी पुरुष वर्ग को अधिक प्रभावित करती है।

भारत में स्त्रियों की भूमिका घर से बाहर बहुत कम है। साथ ही वे मद्यपान और धूम्रपान जैसी 'मर्दाना' आदतों से बची रहती हैं जिसका लाभ उन्हें मिलता है। किंतु उनके आधुनिकीकरण से यह लाभ अब कम होने लगा है। पिछले ३० वर्षों में स्त्रियों में फेफड़े के कैंसर में ४०० प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

इसी तरह दुर्घटना व हिंसा के दौरान भी पुरुषों की मृत्यु अपेक्षाकृत अधिक होती है। ५–१४ वर्ष के उम्र के बच्चों के डूबकर, गिरकर या वाहन दुर्घटनाओं में मरने वाले लड़कों की संख्या लड़कियों की संख्या की प्रायः दोगुनी होती है। हां, जलकर मरने वालों में सबसे ज्यादा संख्या स्त्रियों की होती हैं।

बार–बार और कम अंतर पर होने वाली जचकी का असर स्त्री व बच्चों के स्वास्थ्य पर पड़ता है। उच्च प्रजननदर का संबंध उच्च मृत्युदर से है। प्रति लाख जीवित शिशु जन्म के साथ ३०० स्त्रियों की मृत्यु चिंताजनक है।

स्त्री–रोजगार का शारीरिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव अधिक पड़ता है। इससे उन पर काम का दुहरा भार पड़ता है। अन्य देशों की तरह भारतीय स्त्रियां भी ८० से ९० प्रतिशत घरेलू कार्य करती हैं। घर से बाहर जाकर कार्य करने से उसके कार्य–भार में अत्यधिक वृद्धि होती है।

घरों में स्त्रियां धुएं से भरी रसोई में घंटों काम करती हैं जिससे उन्हें ब्रोंकाइटिस और दमे का खतरा रहता है। इसी प्रकार घर पर मरीजों की देखभाल की जिम्मेदारी भी मुख्यतया स्त्री की होती है जो उसके स्वास्थ्य को प्रभावित करती है।

स्त्री के प्रजनन वाली भूमिका का प्रभाव भी उसके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल पड़ता है। प्रजनन में काफी ऊर्जा खर्च होती है और पोषण की कमी हो जाती है। गर्भावस्था, जचकी तथा स्तनपान के कारण स्त्री कुपोषण, एनीमिया आदि की शिकार हो जाती है।

स्त्री आर्थिक रूप से पराश्रित हों, घर से बंधी हों और मात्र संतानोत्पत्ति में सफलता से ही उनकी हैसियत तय होती है तो इसका कुप्रभाव उनके स्वास्थ्य पर पड़ता है।

(स्रोत में अलका मालवाडे बसु)

तुम्हारे जन्म या अपने स्वास्थ्य दोनों पर मेरा कोई बस नहीं चलता।

पृष्ठ ३८ का शेष

...हिस्टीरिया का होम्योपैथिक इलाज

पेशियां फड़कती हैं, कलेजा धड़कता है, रोग की नयी अवस्था में यह दवा अधिक फायदा करती है।

हायोसिमामस– फिट्स के समय हाथ पैर का कांपना, मांसपेशियों का ऐंठन, क्रोध से अथवा प्रेम से वंचित होने के दुष्परिणाम स्वरूप फिट्स के लक्षण आते हैं। रोगी शरीर पर कोई भी कपड़ा बरदाश्त नहीं करता। बदन पर कपड़ा हो तो उसे फेंक देता है।

कालीफास– अचानक बहुत उत्तेजित होने के कारण जब रोग की बारी आवे, रोगी हंसने या रोने लगे, गले की ओर गोला उठता हुआ जान पड़े, मरीज बकता हो, बेहोशी हो तो काली फास देना उचित रहता है।

नेट्रममुर– जब उदासी हो सुस्ती रहती हो और मासिक धर्म के विकार के साथ हिस्टीरिया के लक्षण हों।

हिस्टीरिया रोग में स्वास्थ्य लाभ के लिए पति और परिवार के सभी सदस्यों का रोगी के साथ बहुत अच्छा और मधुर व्यवहार होना चाहिए पति को अपना यौन–विकार एवं यौन दौर्बल्य दूर करना चाहिए और पत्नी का पूरा ख्याल रखना चाहिए।

रजोनिवृत्ति

डॉ. रीता काला एवं डॉ. पुष्पा असवाल, लखनऊ

स्त्री जीवन की अन्तिम परिवर्तनकारी घटना होती है रजोनिवृत्ति। इस काल में स्त्री शरीर में विशेष शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन प्रकट होते हैं। रजोदर्शन की भाँति यह भी स्त्री जीवन की अनिवार्य व स्वाभाविक घटना है। इस अवस्था में स्त्री के सन्तानोत्पादक जीवन का धीरे–धीरे अन्त हो जाता है।

ऋतुचक्र के अन्तिम चरण को आर्तवनिवृत्ति या रजोनिवृत्ति कहते हैं। सामान्यतया ४५ से ५० वर्ष की आयु में आर्तवप्रवृत्ति बंद हो जाती है। स्त्री की आयु ८० वर्ष मानी गई है, इस आयु का २/३ भाग रजः प्रवृत्ति काल में व १/३ भाग रजोनिवृत्ति काल के रूप में व्यतीत होता है।

रजोनिवृत्ति में बीजपुट पूर्णतया समाप्त हो जाते हैं। बीजों की संख्या भ्रूणकाल से ही कम होने लगती हे। रजोनिवृत्ति के समय कुछ ही बीज शेष रहते हैं, जो क्रियाशील नहीं होते हैं। कुछ बीज सन्तानोत्पत्ति काल में बीजोत्सर्ग में नष्ट होते हैं। अधिकांश बीजों व बीजपुटों का स्वतः पतन हो जाता है।

रजोनिवृत्ति के लक्षण

इसके लक्षणों को दो प्रकार से समझा जा सकता है।

(१) वे लक्षण जो कुछ ही समय बाद रक्त धमिनयों, अस्थि व जननांगों में परिलक्षित होते हैं।

(२) वे लक्षण जो अधिक समय बाद रक्त धमनियों, अस्थि एवं जननांगों में परिलक्षित होते हैं।

रजोधर्म की निवृत्ति तीन प्रकार से होती हैः

(क) सहसा आर्तवप्रवृति पूर्णरूप से बंद हो जाती है व आर्तव निवृत्ति के लक्षण शीघ्र प्रकट हो जाते हैं।

(ख) क्रमशः रजोनिवृत्ति के अंत तक प्रत्येक मासिक धर्म में आर्तव की मात्रा क्षीण होती जाती है।

(ग) एक आर्तवचक्र से दूसरे आर्तवचक्र के बीच का अन्तराल क्रमशः बढ़ते जाता है।

किसी–किसी महिला में छह माह के अन्तराल के बाद आर्तवस्राव होता है इसे आर्तवनिवृत्ति पश्चातकालीन रक्तस्राव समझकर चिकित्सा करनी चाहिए।

उष्णतरंगों एवं रात्रि स्वेद का उत्पन्न होना– यह लक्षण रजोनिवृत्ति को सबसे अधिक इंगित करता है। लगभग ७५% महिलाओं में अचानक उष्ण तरंगें उत्पन्न होकर चेहरे, गर्दन, वक्ष स्थल में व कभी–कभी पूरे शरीर में फैलकर, साथ ही कंपकपी एवं स्वेद की शिकायत उत्पन्न करती है। इस प्रकार की परेशानियां दिन, रात या किसी भी समय में हो सकती है, जो तीन मिनट तक रहती है। अत्यधिक रात्रि स्वेद के कारण रोगिणी को भली–भांति नींद नहीं आती है। यह मानसिक अवसाद से ग्रसित महिलाओं में अधिक होता है।

हृदय रोग– रजोनिवृत्ति से पूर्व महिलाओं में हृदयरोग की सम्भावनाऐं कम रहती हैं, इसका कारण इस्ट्रोजन का रक्त में पाये जाने वाले वसा पर प्रभाव से होता है जो अतिरिक्त कोलेस्ट्रॉल को रक्त से दूर करता है किंतु रजोनिवृत्ति के बाद यह बचावकारी प्रभाव समाप्त हो जाने से कोलेस्ट्रॉल धमनियों की दीवार पर एकत्र होकर धमनी को कड़ा व पतला कर देता है व इसी कारण हृदय रोगों की सम्भावनायें बढ़ जाती है। हृदय की कार्य प्रणाली में भी क्रियात्मक परिवर्तन से धड़कन व हृदय वेदना की शिकायत भी महिलाओं में बहुधा देखी जाती है।

तंत्रिकीय एवं भावनात्मक परिवर्तन– कभी–कभी हथेली व तलुओं में सुई चुभने जैसी वेदना का अनुभव होता है। शिरःशूल, उत्तेजनशीलता, निद्राल्पता, श्रम, क्लम, अवसाद, कानों में शब्दों का सुनाई देना आदि लक्षण मुख्य हैं। रजोनिवृत्ति के प्रारम्भ में अधिवृक्क वल्क से एन्ड्रोजन का स्राव अधिक मात्रा में होने के कारण कामेच्छा बढ़ जाती है। कभी–कभी रजोनिवृत्ति के दौरान मिथ्यागर्भ की अवस्था भी मिलती है। जो महिलाएं मानसिक विकास से ग्रसित होती है वे मासिक धर्म के रुकने को गर्भावस्था समझ बैठती हैं जबकि इसका कारण आमाशय में वसा के अधिक मात्रा में संचित होने के कारण पेट की परिधि का बढ़ जाना है। ऐसी महिलाओं को यह समझाना कठिन हो जाता है कि यह गर्भावस्था नहीं है वरन् रजोनिवृत्ति के लक्षण हैं।

पाचन संबंधी परिवर्तन– पाचन संबंधी विकार जैसे गैस के कारण पेट फूल जाने से रोगिणी समझती है कि उसके पेट में वृद्धि हो गई है। कब्ज की भी शिकायत रहती है। भूख बढ़ने के कारण, कार्बोहाइड्रेट से भरपूर पदार्थों का सेवन करने से मोटापा बढ़ जाने पर पेट संबंधी विकार भी रहते हैं।

परिचालन तंत्र संधियों में प्रायः वेदना, कमरदर्द, सन्धिवात आदि आम व्याधियां हैं।

प्रजनन तंत्र– स्थानिक लक्षणों में योनि का शुष्क होना, श्लैष्मिक स्राव का कम हो जाना, गर्भाशय का आकार छोटा एवं कठोर हो जाना, अन्तःकलाशोष, बीजग्रंथि का अत्यधिक मात्रा में गोनेडोट्रोफिन स्रावित करना, अन्ततः बीजोद्गम बंद हो जाना मुख्य लक्षण है।

चिकित्सा– ऐसी महिलाएं जो रजोनिवृत्ति के पश्चात् के लक्षणों से ग्रसित होती हैं उनके लिए चिकित्सक की सलाह एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। रजोनिवृत्ति उम्र वाली महिलाओं को पहले से इसके लक्षणों (शारीरिक व मानसिक) से अवगत करा देना चाहिए। कभी–कभी मनोवैज्ञानिक की सलाह भी मददगार साबित होती है। यदि रुग्णा पहले मानसिक रोग से ग्रस्त रही हो व साथ ही अन्य परेशानियों जैसे कोष्ठबद्धता, बवासीर या जोड़ दर्द भी हो, तो प्राकृतिक चिकित्सा सहायक होती है। प्रत्येक वर्ष श्रोणिगत परीक्षण भी कराना चाहिए।

थुलथुलापन कैसे दूर हो ?

हम में से आधे लोग मोटापे से परेशान रहते हैं। मोटापे का बढ़ना, वजन का बढ़ना अपने आप में कोई रोग नहीं है किंतु मोटापा उच्च रक्तदाब, दिल का दौरा, मधुमेह और गठिया जैसे रोगों का मार्ग प्रशस्त करता है इसलिए मोटापे से चिन्तित होना स्वाभाविक है।

यह भी मानी हुई बात है कि मोटे लोग दीर्घजीवी नहीं होते। मोटापे का कारण चिकनाई या अधिक वसा वाले भोजन का तथा हारमोन्स असन्तुलित होना है। हम स्वाद के वशीभूत होकर अपनी आवश्यकता से कहीं अधिक खा लेते हैं। शरीर में यह अतिरिक्त भोजन वसा के रूप में संचित होता रहता है। यह वसा रुधिर की धारा में होकर कोशिकाओं तक पहुंचता है। कोशिकाओं में वसा को पहुंचाने का कार्य एल डी एल (लो डेन्सिटी लाइपोप्रोटीन) करता हैं।

आजकल के युग में हम कुछ ही घंटों के अंतराल से खाते रहते हैं। और वर्तमान युग में पुराने जमाने की तरह कड़ी मेहनत के अवसर नहीं हैं। बटन दबाने मात्र की मेहनत करनी होती है। इसलिए शरीर को उतनी ऊर्जा की आवश्यकता ही आज नहीं है जितनी पहले पड़ती थी। लोग मोटापे का इलाज करने की तब सोचते हैं जब मर्ज बहुत बढ़ जाता है और कोई बीमारी शुरू हो जाती है। जब कि इस दिशा में बचपन से ही सावधान होने की जरूरत है आठ साल की उम्र से ही सतर्क हो जाना चाहिए।

भारत में मोटापे के शिकार लोगों का प्रतिशत संयुक्त राज्य अमरीका के बराबर अर्थात् २६ प्रतिशत है। दिल्ली में किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार वहां की आबादी का १७-३८ प्रतिशत मोटापा ग्रस्त है। वसा घटाने के लिए कोई सरल सीधा रास्ता नहीं है। अनशन करने मात्र से वजन नहीं घटता। यह सही है कि तली हुई चीजों से तथा घी, तेल और मिठाई से बचना चाहिए। लेकिन साथ ही खाने और व्यायाम करने की ऐसी युक्तियुक्त आदत डालनी चाहिए कि शरीर में फालतू वसा का संग्रह रोका जा सके। यदि हारमोन्स का असन्तुलन है तो चिकित्सक से राय लेनी चाहिए।

वजन घटाने के लिए उद्यत लोगों को व्यायाम की अति नहीं करनी चाहिए। यदि जल्दबाजी में वजन घटाने के लिए कठोर व्यायाम किया जाएगा तो उससे मृदु ऊतकों को क्षति पहुंच सकती है। स्त्रियों का वजन श्रोणि (पेडू) पर और पुरुषों का वजन पेट के आसपास बढ़ता है।

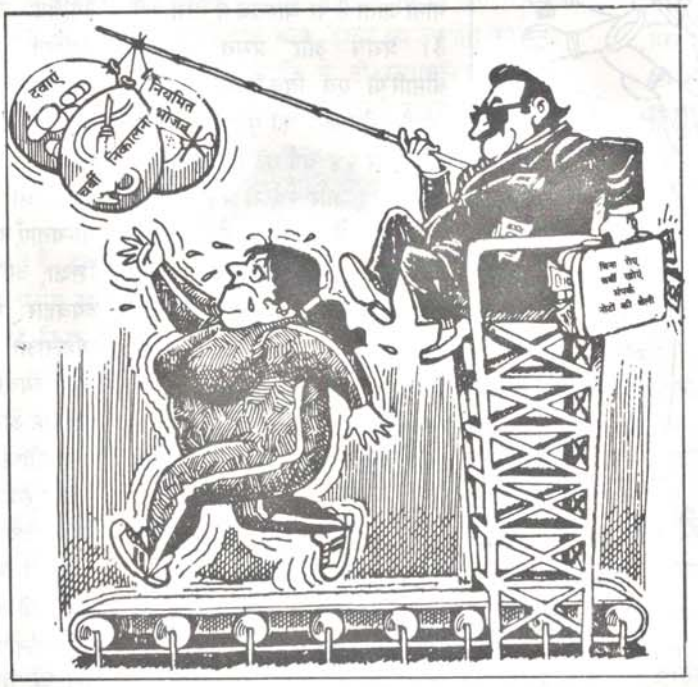

यदि कमर की नाप पुट्ठों की नाप के ८० प्रतिशत से अधिक हो तो स्त्री को अपना वजन घटाने की कोशिश करनी चाहिए। उदाहरण के लिए यदि नितंब पर व्यास ३५ इंच है तो कमर की नाप २८ इंच से अधिक नहीं होनी चाहिए। पुरुषों की कमर की नाप पुट्ठों के ९५ प्रतिशत हो सकती है अर्थात् पुट्ठों का व्यास ३५ इंच हो तो कमर ३३ इंच से अधिक नहीं होनी चाहिए।

जो चर्बी कमर के ऊपर जाती है वह सबसे हानिकारक सिद्ध होती है। क्योंकि उदरीय वसा वसीय अम्लों को सीधे ही यकृत में उलीच देती है जिससे उसकी ग्लुकोज और इन्सुलिन के स्तर को बनाये रखने की क्षमता गड़बड़ हो जाती है जिससे मधुमेह होने की संभावना रहती है। साथ ही उसे धमनी को जमा देने वाले कोलेस्टेराल को बनाने के लिए पर्याप्त कच्चा माल भी मिल जाता है।

ऐसी स्थिति में थुलथुलापन दूर करने का एक ही रास्ता रह जाता है और वह है संतुलित आहार और खाने की आदतों में सुधार, थोड़ी-थोड़ी देर पर खाने की प्रवृत्ति का त्याग और किसी चिकित्सक की राय से किये जाने वाले व्यायाम। इससे तत्काल लाभ की अनुभूति भले ही न हो मगर देर सबेर भला इन्हीं से संभव है।

...रजोनिवृत्ति

विशिष्ट चिकित्सा में अन्तःस्रावी चिकित्सा का विधान है इसमें इस्ट्रोजन हारमोन का प्रयोग किया जाता है। निम्न स्थितियों में इस हारमोन का प्रयोग वर्जित है-

(क) स्तन्यर्बुद
(ख) यकृत सम्बन्धी विकार
(ग) पित्ताशय सम्बन्धी विकार
(घ) अनैदानिक योनिस्राव
(ङ) हृदयरोग

- अश्वगंधा चूर्ण ५ ग्राम एक कप दूध से दिन में दो बार देने से अतिशय लाभ होता है।

आर्तवनिवृत्ति पश्चात्कालीन रक्तस्राव में नागकेशर चूर्ण ३ ग्राम शहद के साथ दिन में दो बार दें। भोजन के पश्चात दो चम्मच अशोकारिष्ट आधा कप जल के साथ दें।

महिला स्वास्थ्य की उपेक्षा

कु. यशश्री शुक्ला, लखनऊ

महिलाओं के काम कभी पूरे नहीं होते

महिलाएं विश्व का आधा भाग हैं

विश्व का लगभग दो तिहाई काम महिलाएं करती हैं पर आमदनी में उनका हिस्सा १०% है।

शिशु प्रजनन, प्रसव एवं मातृत्व काल में मरने वाली महिलाओं की मृत्युदर हमारे देश में बहुत अधिक है। प्रत्येक १००० प्रसव में ८ महिलाओं की मृत्यु हो जाती है। कनाडा जैसे देशों में यह केवल ०.१ है। भारतीय पुरुषों की तुलना में भारतीय महिलाओं का जीवनकाल भी छोटा है। विकसित देशों में ठीक इसका उल्टा है। भारत की कुल जनसंख्या में महिलाओं का अनुपात भी कम है, यानी १००० पुरुषों पर केवल ९३२ महिलाएं जबकि स्वास्थ्य एवं चिकित्सा शास्त्रों के अनुसार महिलाओं में जीवनीय शक्ति पुरुषों की अपेक्षा अधिक होती है और इस कारण उनका जीवन काल लम्बा होना चाहिए। हमारे देश में इसके विपरीत स्थिति होने का एक मात्र कारण यही है कि जन्म से लेकर मृत्यु तक महिलाओं के साथ हमारा व्यवहार घोर उपेक्षापूर्ण है, विशेष रूप से पुरुषों की तुलना में।

महिलाओं में मृत्युदर अधिक होने का सबसे बड़ा कारण बच्चा पैदा करने की जिम्मेदारी माना जाता है पर वास्तव में ऐसा नहीं है। प्रसव और प्रसव कालीन बीमारियों एवं विकृतियों से मरने वाली महिलाओं की मृत्यु दर भारत में १५ से २४ वर्ष की महिलाओं में १३.१५% और २५ से ४४ वर्ष की महिलाओं में ९.३८% है। जबकि उक्त आयु की महिलाओं में संक्रामक और परजीवी बीमारियों से मरने वाली महिलाओं की मृत्यु दर क्रमशः २३.११% और २७.७०% है।

भारत में गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन करने वालों की संख्या बहुत बड़ी है। बहुत थोड़े लोगों को भर पेट भोजन मिल पाता है। पौष्टिक आहार तो और भी कम लोगों को मिल पाता है। इस वर्ग की महिलाओं को प्रजनन, प्रसव और बच्चों का पालन-पोषण तो करना ही पड़ता है साथ ही साथ घर के अन्दर और बाहर भी शारीरिक कार्य करना पड़ता है। इसके लिए उन्हें अतिरिक्त पौष्टिक भोजन चाहिए। पर मिलता क्या है ? परिवार के पुरुष सदस्यों द्वारा खाने के बाद बचा खुचा खाना। ऐसी हालत में उनके स्वास्थ्य की क्या हालत होगी, कोई भी अंदाज लगा सकता है।

हमारे समाज में लड़का लड़की का भेद बच्चे के जन्म के साथ ही शुरू हो जाता है। एक सर्वेक्षण में पाया गया कि लड़कों को जन्म देने वाली निम्न आर्थिक वर्ग की माताओं में से लगभग ९०% को किसी तरह आवश्यक पौष्टिक आहार मिल जाता है, पर इसी वर्ग की, परंतु लड़कियों को जन्म देने वाली माताओं में केवल ७२.२% को ही पौष्टिक आहार मिल पाता है। चाहे लड़का हो या लड़की, माँ की आहार सम्बंधी जरूरतें एक जैसी होती हैं। परन्तु समाज का व्यवहार भेदभाव पूर्ण है। उच्च आर्थिक वर्ग की महिलाएं जो अधिकांश शिक्षित होती हैं तथा जिन्हें लड़के, लड़कियों को एक समान रूप से पालने का ज्ञान होता है, वे भी इस भेद भाव से अछूती नहीं हैं। कहने का तात्पर्य है कि लड़के, लड़कियों एवं महिलाओं तथा पुरुषों के लिए अलग-अलग मान्यताएँ हमारे समाज के हर वर्ग में चल रही हैं। शिक्षा, अशिक्षा अथवा गरीबी अमीरी से उनके व्यवहार में विशेष फर्क नहीं पड़ता है। महिलाओं के साथ दूसरे दर्जे के नागरिक जैसा व्यवहार करना हमारी सामाजिक मान्यता का एक अंग बन चुका है। इसलिए उनके लिए न तो पौष्टिक भोजन का प्रबंध किया जाता है, न उनके स्वास्थ्य और चिकित्सा पर समुचित ध्यान दिया जाता है। उत्तर प्रदेश, बंगाल और बम्बई में किये गये एक अध्ययन में पाया गया कि पुरुषों की अपेक्षा कम महिलाएँ अस्पताल में अपने इलाज के लिए जाती हैं। इसका कारण यह नहीं कि वे कम बीमार पड़ती हैं वरन इसका कारण यह है कि उनके स्वास्थ्य को व उनकी बीमारियों को अधिक गम्भीरता से नहीं लिया जाता। महिलाओं की मृत्यु दर अधिक होने का यही वास्तविक कारण है।

समान व्यवहार और समान सुविधाएं मिलें तो लड़कियाँ समाज में हर तरह का दायित्व लड़कों की तरह ही निभा सकती हैं पर हमारा समाज लड़की के लिए शादी करना और परिवार के लिए लड़का पैदा करने को ही उसका सबसे बड़ा दायित्व समझता है।

पहले की अपेक्षा महिलाओं के लिए अस्पतालों व महिला डाक्टरों की संख्या अवश्य बढ़ी है पर व्यवहार में महिला स्वास्थ्य की सामान्य स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया है, महिला स्वास्थ्य के प्रति उपेक्षा वास्तव में आने वाली भावी पीढ़ी की उपेक्षा है। जिसके लिए हमें समुचित प्रयास करने ही होंगें।

स्वस्थ व सुन्दर बाल

बाल मनुष्य, विशेषतः स्त्री के व्यक्तित्व का एक महत्वपूर्ण भाग हैं। अतः इनकी देख-भाल और स्वास्थ्य परम आवश्यक है। उचित पोषण और स्वास्थ्यवर्धक भोजन शरीर के साथ-साथ बालों के स्वास्थ्य का मूल है। आजकल कम आयु में बालों का सफेद होना, बालों का गिरना, गंजापन, रूसी आदि की समस्या लोगों को बहुत परेशान करती है। ठंडक लगने, साइनसाइटिस, क्रोध, चिन्ता या मानसिक तनाव की स्थितियां इसे और बढ़ा देती हैं।

बाल त्वचा की भीतरी सतह से निकलते हैं। इसके मूल में एक ग्रन्थि होती है जिससे तैलीय स्राव निकलता रहता है। इस ग्रन्थि की क्रिया में गड़बड़ी होने से बालों पर प्रभाव पड़ता है। यदि इसकी क्रिया में कमी आती है तो बाल रूखे हो जाते हैं। यदि इसकी क्रिया बढ़ जाती है तो अधिक स्राव होता है परिणाम स्वरूप बाल तैलीय हो जाते हैं। साधारणतः बाल एक वर्ष में ६ इंच या इससे अधिक बढ़ते हैं। अधिकतर मुनष्यों में बाल एक निश्चित लम्बाई प्राप्त करने के बाद उखड़ जाते हैं और पुराने बालों के स्थान पर नये बाल निकल आते हैं। कभी-कभी रूसी दूर करने के लिये तेल लगाने से यह समस्या और बढ़ जाती है। शरीर के सभी स्थानों की त्वचा की भांति सिर की त्वचा का नवीनीकरण होता रहता है और पुरानी त्वचा निकलती रहती है। आमतौर पर इस क्रिया की जानकारी नहीं होती है। रूसी की स्थिति में यह क्रिया तेज हो जाती है और पुरानी त्वचा के टुकड़े झड़ते रहते हैं। त्वचा रोग विशेषज्ञों के अनुसार रूसी वास्तव में त्वचा की हल्की सूजन से पैदा होती है जो सिर की त्वचा या पूरे शरीर की त्वचा में हो सकती है। यह सिर के साथ-साथ भौंहो, पलकों के पास, नाक के अगल-बगल, कानों के पीछे और छाती के मध्य में हो सकती है जहां त्वचा ग्रंथियां अधिक पाई जाती हैं। त्वचा की यह सूजन पिट्रोस्पोरम ओवेल नामक फफूंद के संक्रमण के कारण होती है। कभी-कभी बालों में प्रयोग के कुछ उत्पादों के प्रति ऐलर्जी होने के कारण ऐसा होता है। यद्यपि इस बात का कारण ज्ञात नही है तथापि रूसी जाड़ों में बढ़ जाती है तथा गर्मी में कम हो जाती है। सामान्य तौर पर आधुनिक चिकित्सा पद्धति में सेलीनियम सल्फाइड अथवा टार युक्त शैम्पू का प्रयोग करने की सलाह दी जाती है। गर्म पानी से बाल धोने, ड्रायर का उपयोग करने या शुरुआती स्थिति में ही रासायनिक रंगों का प्रयोग करने से बाल जल्दी सफेद हो जाते हैं।

फैक्टरियों में बने आधुनिक तेलों के उपयोग से भी बाल सफेद हो सकते हैं अतः इनसे बचना चाहिये। बाल सादा ठंडे पानी से धोना चाहिए और ड्रायर का उपयोग नहीं करना चाहिये।

ठंडक और साइनसाइटिस की चिकित्सा कर लेने के बाद निम्न उपाय किये जा सकते हैं।

- ठंडे पानी से बाल धोने के बद उंगलियों के सिरों से सिर की त्वचा की तब तक अच्छी तरह मालिश की जानी चाहिये जब तक त्वचा में गर्मी न महसूस होने लगे। इससे त्वचा की ग्रंथियां क्रियाशील होती हैं और उनमें रक्त का संचार बढ़ता है। इससे स्वस्थ बाल निकलते हैं और बालों के गिरने में कमी होती है।
- गिलोय और गोखुरू को समान मात्रा में लेकर उनका चूर्ण बना लें। इस चूर्ण का एक चम्मच दिन में तीन बार शहद के साथ लें।
- दो भाग भृंगराज, एक भाग काले शीशम के बीज और एक भाग आंवला लें। इनका महीन चूर्ण बना लें और इसका एक चम्मच दूध अथवा चीनी के साथ नित्य दो बार कई हफ्ते तक सेवन करें।
- बालों को जल्दी पकने से रोकने के लिए दो भाग आंवला, दो भाग हरड़ और ढाई भाग पुराना मंडूर लें और इनका महीन चूर्ण बना लें। इस चूर्ण के एक चम्मच को ऐसे पानी में भिगोयें जिसमें रात भर आंवले भिगोये

शेष पृष्ठ ४६ पर

गुणकारी केश तैल

आंखों के स्वास्थ्य, स्मरण शक्ति और बालों की वृद्धि के लिये निम्नलिखिति तेल का निर्माण किया जा सकता है-

सामग्री : सूखा आंवला- १५० ग्राम, बड़ी हरड़ की छाल- १५० ग्राम नागर मोथा-१५० ग्राम, ब्राह्मी (सूखी) १५०-ग्राम, जटामांसी-१० ग्राम, कपूर ३० ग्राम, पानी-७०० मि.ली. और नारियल का तेल एक किलो।

विधि : कपूर छोड़कर उपरोक्त सामग्री को पीस कर चूर्ण बना लें। इसे पानी से भिगो कर लेई सी बना लें और दो घंटे के लिये छोड़ दें। इसके बाद इस लेई को नारियल के तेल में मिला लें और इसे धीमी आंच पर गर्म करें। इसे ध्यान से चलाते रहें। जब पानी जल जाय तो इसे ठंडा कर लें और छान लें। इस मिश्रण में ३ ग्राम पिपरमिन्ट, कपूर और २० ग्राम कार्डमम तेल मिला कर कांच की बोतलों में सुरक्षित कर लें।

दादी माँ के नुस्खे

वैद्य बदलूराम रसिक, लखनऊ

सरस्वती– दादी मां चरण स्पर्श

दादी मां– प्रसन्न रहो बेटी आज बड़ी कापी लेकर आई हो मालूम होता है कि आज बहुत कुछ पूछना चाहती हो अभी–अभी गांव की एक औरत बहुत कुछ पूछ के गई है वह बहुत दिन से बीमार थी ठीक हो जाएगी।

सरस्वती– दादी मां जब से आपने हमको अपना शिष्य बना लिया है तब से हमारे यहां भी तमाम लोग आते हैं और दवाइयां पूछ जाते हैं और दवा खाकर ठीक हो जाते हैं। जब से हमारे यहां कन्या इण्टर कालेज हो गया है तब से तमाम लड़कियां और अध्यापिकाएं नाना प्रकार के रोगों की दवा पूछने आती हैं मैने कई रोग उनके लिख लिए हैं अब उन्हीं की दवा आप से पूछना है। पहले आप यह बताएं कि १८–२० साल की महिलाओं को मासिक धर्म के २–३ दिन पहले से कमर में भयंकर पीड़ा होती हे जो चार पांच दिन रहती है और बाद में उन्हें हफ्ते भर तक गंदा पानी आता है, कुछ के पेशाब में जलन होती है, कब्ज बहुत रहता है, सर के बाल गिरने लगते हैं, नींद कम आती है, याददाश्त कम हो जाती है, भूख कम लगती है। इन सब का कारण और दवा बताइये।

दादी मां– वाह बेटी तुम तो पूरे लक्षण ही लिख कर लाई हो अच्छा पहले इन रोगों का कारण सुनो और फिर लिखो।

आजकल की लड़कियां खासतौर से छात्राएं चाय, काफी, अण्डा, बाजार की चाट, अचार, तथा कुसमय भोजन छोले भटूरे, डबल रोटी, दोसा, समोसा, पकौड़ी दालमोठ आदि खाने की शौकीन होती हैं घर का बना शुद्ध भोजन कम खाती हैं। रात को पढ़ने के समय कम से कम २–३ बार चाय अवश्य पीती हैं परीक्षा के समय रात भर जागने पर तो ४–५ बार तक चाय या काफी पीती रहती हैं। इनके अतिरिक्त मासिक धर्म प्रारम्भ होने के समय ठंडे पानी से आधा–आधा घंटे स्नान से उपरोक्त रोग होता है। इन से बचने के लिये नियमित भोजन करना, बाजार की चीजें न सेवन करना, चाय काफी आदि बार–बार सेवन न करना, अचार आदि भी कभी–कभी लेना और मासिक के समय गरम पानी से नहाना चाहिए। लिख लिया बेटी ?

सरस्वती– हां, लिख लिया दादी मां, अब खाने वाली औषधियां बताइये।

दादी मां– लिखो बेटी, पहले कब्ज दूर करने की दवा लिखो– सौफ २५ ग्राम, सनाय २५ ग्राम, सोंठ २५ ग्राम, हड़ छोटी २५ ग्राम, सेंधा नमक २५ ग्राम सबको कूट पीस छान कर चूर्ण बनाकर किसी बोतल या डिब्बे में रख लें, रोज रात में सोते समय २ चाय वाले चम्मच के बराबर फांक कर ऊपर से गुनगुना पानी पी लें इससे कब्ज दूर होगा जब तक पेट नही साफ होगा कोई भी औषधि देर में फायदा करेगी इसलिए हमेशा पेट साफ रखना चाहिए। मासिक धर्म के समय कमर–पेडू में पीड़ा होने या स्राव कम होने पर अथवा अनियमित कभी ३५ दिन में कभी २५ दिन में होने पर रजःप्रवर्तिनी वटी लेकर ४ गोली रात को सोते समय पानी से लेने से २–३ मास में ठीक समय अर्थात ३० दिन में मासिक धर्म होने लगेगा। मासिक धर्म होने के समय गर्मी के मौसम में अगर पीड़ा हो तो हल्के गरम पानी से और जाड़ों में गर्म पानी से स्नान करना चाहिए इससे कमर तथा पेडू का दर्द ठीक हो जायगा सोते समय रबर की थैली में गरम पानी भरकर रात को ५–६ दिन अवश्य पेट और पेडू सेंकने से पीड़ा ठीक हो जाती है मासिक धर्म भी नियमित होता है यह विधि कुमारी तथा विवाहित दोनों ही को करने से लाभ होता है। मासिक होने के समय मूली, दही, आइसक्रीम आदि ठंडी चीजें खानी चाहिए। लिख लिया बेटी ?

सरस्वती– हां, दादी मां, लिख लिया अब प्रदर अर्थात सफेद या गंदा पीला पानी आने की औषधियां बतायें।

दादी मां– लिखो, अशोक की छाल २५ ग्राम, बबूल की फली २५ ग्राम, संगजराहत २५ ग्राम, नाग केसर २५ ग्राम, माजूफल २५ ग्राम। सबको लेकर कूट पीस छान कर इस चूर्ण के बराबर चीनी मिलाकर रख लें और २–२ चाय के चम्मच की नाप से सबेरे तथा शाम को फांक कर पानी पीने से प्रदर ठीक होता है। अगर योनि में खुजली होती हो तो नीम की १०० पत्तियां लेकर उन्हें पानी में उबालकर छान कर हल्के गुनगुने काढ़े से, अंगुली में रुई लपेट कर उसे इसी काढ़े में बोर–बोर कर योनि के अन्दर डालकर सफाई करनी चाहिये।

विवाहित स्त्रियों को बच्चे होने के बाद अक्सर प्रदर रोग हो जाता है उनको हड़ का छिलका, बहेड़ा का छिल्का, आमला तथा नीम की पत्ती सुखा कर चारों को २५–२५ ग्राम लेकर कूट कर महीन कर और १० ग्राम चूर्ण ५०० मिली. पानी में डालकर स्टील के भगोने में रख आग पर पका लें। आधा रहने पर उतार कर दूसरे भगोने में छान लें और इसे हल्के गुनगुने पानी से, रुई को अंगुली में लपेट कर उसी में बोर कर योनि की धुलाई करें। इससे बड़ा लाभ होता है तथा योनि का ढीलापन भी दूर होता है, योनि में खुजली या अन्य कोई बीमारी नहीं होती है व पेशाब की जलन भी दूर होती है। मैं तो कई बार इस काढ़े को २ औंस स्त्रियों को सबेरे निहारमुख पीने को भी बता देती हूं इससे पेट की सूजन भी दूर होती है, पाखाना साफ होता है व नींद ठीक आती है। लिख लिया बेटी ?

सरस्वती– हां, दादी मां, लिख लिया, अब छात्राओं की स्मरण शक्ति बढ़ाने, सर का दर्द दूर करने, सर के बाल न गिरने, चिड़चिड़ापन दूर करने, ठीक नींद आने के लिये औषधि बताइये।

दादी मां– लिखो बेटी, हम यह योग अनेकों छात्राओं तथा छात्रों को बता चुकी हैं इसके सेवन करने से बड़ा लाभ होता है। ब्राह्मी १ ग्राम बचमीठी १ ग्राम, काली मिर्च ५, सौंफ १ ग्राम, बादाम ५ रात को पानी में भिगोकर सबेरे छीलकर डाले। इन पाचों चीजों को सबेरे सिलपर पानी से पीस लें और छान लें इसमें १ कप दूध तथा २ चम्मच चीनी मिलाकर रोज सबेरे पीने से बड़ा लाभ होता है शरीर स्वस्थ रहता है बुद्धि बढ़ती है यह शतशः अनुभूत है।

सरस्वती– अच्छा दादी मां, जिन छात्राओं या स्त्रियों को अनियमित खान–पान से हमेशा भूख कम लगती है पेट में वायु बहुत बनती है खट्टी डकारें आती हैं हमेशा पेट में दर्द बना रहता है उनके लिये कोई चूर्ण बतायें।

दादी मां– लिखो, हड़, बहेड़ा, आँवला, धनिया, सौंफ, सोया का बीज, अजवाइन, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, बायविडंग, जीरा, लौंग, निशोथ, २५–२५ ग्राम ले लें। काला नमक २५ ग्राम, सोडा खाने वाला २५ ग्राम सबको पीस छान कर रक्खें इसमें १० ग्राम उत्तम हीरा हींग घी में भून कर पीस कर मिला दें। यह चूरण पेट के तमाम रोग, गैस का बढ़ना, डकारें आना आदि दूर करके भूख बढ़ाता है और पाखाना भी साफ लाता है इसको १ चम्मच से २ चम्मच की मात्रा में भोजन से पहले लेने से लाभ होता है पेट में दर्द होने पर गरम जल के साथ लेना चाहिए।

सरस्वती– दादी मां आपने कई रोगों के सम्बन्ध में बता दिया, बड़ी कृपा है, अब यह बतायें कि बहुत सी बालिकाओं या विवाहित स्त्रियों को मासिक धर्म बहुत होता है और ६–८ दिन तक रहता है इसके कारण और औषधि बताइए।

दादी मां– देखो बेटी जो स्त्रियां पित्त प्रकृति की होती है उनको रक्तस्राव अधिक और ६–७ दिन होता है। ४०–४५ वर्ष की आयु में जब मासिक बंद होने का समय होता है उस समय भी मासिक धर्म १५–१५ दिन में होता है और रक्तस्राव बहुत होता है उसी के बाद मासिक बंद हो जाता है। पहले २० से ३० साल की आयु वाली स्त्रियों के अधिक रक्तस्राव की दवा लिखो–

पीपल की लाख २५० ग्राम, गेरू २५ ग्राम, नागकेसर २५ ग्राम, संगजराहत २५ ग्राम, खून खराबा (दम्बुल अखवैन) २५ ग्राम, माजू फल २५ ग्राम सबको कूट पीस कर छान लें। बराबर चीनी मिला कर रखलें और २–२ चम्मच सबेरे शाम दूध से लें और खून बहुत आ रहा है तो २–२ चम्मच ४–४ घंटे पर दूध या पानी से लें इसके अतिरिक्त दूब घास ५ ग्राम धोकर पानी से सिल पर पीस लें छान कर १ चम्मच चीनी डालकर सुबह शाम पिला दें या बरगद की ताजी लाल जटा १० ग्राम पानी से सिल पर पीस छान १ चम्मच चीनी डालकर सुबह शाम पिलायें या कंघी की पत्ती २० पानी से सिल पर पीस छान कर चीनी डालकर सबेरे शाम पिलायें लाभ अवश्य होगा। यह सब अनुभूत योग हैं।

लिख लिया बेटी। इस प्रकार के रोगियों को अचार, सिरका, गुड़, मिर्च, टमाटर आदि नहीं खाना चाहिए।

सरस्वती– हां लिख लिया। दादी मां चलती हूं। चरण स्पर्श।

पृष्ठ ४४ का शेष

...स्वस्थ व सुन्दर बाल

गये हों। इस पेस्ट को रात भर लोहे के बर्तन में रखें और प्रातः बालों पर लगायें। जब पेस्ट सूख जाय तो बालों पर तेल लगायें और ठंडे पानी से धो लें।

गंजेपन के भी वही कारण हैं जो समय से पहले बाल सफेद होने के होते हैं। मिक्सोडीमा, सिफलिस, इन्फ्लूएन्जा, खून की कमी और बहुत तनाव या मानसिक झटके की स्थिति में गंजापन हो सकता है। यदि उपरोक्त बीमारियों में से कोई हो तो उसकी उचित चिकित्सा की जानी चाहिये। यदि समय से पहले बाल गिरना पैतृक है तो इसे ठीक नहीं किया जा सकता फिर भी यदि प्रारम्भ में ही उचित चिकित्सा की जाय तो इसे कुछ महीने या कुछ साल टाला जा सकता है। कुछ मामलों में त्वचा की एक्जिमा से भी बाल गिर सकते हैं। यदि एक बार बाल गिर जाय और त्वचा ग्रंथि का मुंह बन्द हो जाय तो विग लगाने के अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं है।

बाल गिरने की प्राकृतिक चिकित्सा यह है कि सिर की उंगलियों से तब तक मालिश की जाय और बालों को हाथों से रगड़ा जाय जब तक वह सूख न जाय।

यूनानी मत के अनुसार निम्न औषधियां प्रयोग की जा सकती हैं।

- फर्राश (*टामारिक्स आर्टीकुलाटा*) जिसे लालझाऊ भी कहते हैं, की ५० ग्राम पत्तियां लें इन्हें पीस कर गोलियां बना लें व इन्हें खौलते हुय सरसों के तेल में पका लें। तेल को ठंडा करके छान लें। इससे गंजे वाले स्थानों की मालिश करें।
- ६० ग्राम कनेर की पत्तियां लेकर इन्हें २५० ग्रा. सरसों के तेल में जला लें। तेल को ठंडा करके छान लें और इसका मालिश के लिये प्रयोग करें।

कभी–कभी केवल कुछ हिस्से गंजे हो जाते हैं इसे एलोपीसिया एरियाटा अथवा पैची बाल्डनेस कहते हैं। यह बीमारी किशोर या युवाओं में हो जाती है। आम तौर पर इसे छूत का रोग माना जाता है पर ऐसा नहीं है। कुछ चिकित्सक इसे तंत्रिका तंत्र की खराबी मानते हैं। कुछ मामलों में इसका सम्बन्ध दांत, गले या आंख की बीमारियों के कारण होना पाया गया है। इसमें निम्न औषधि प्रयोग की जा सकती है–

लहसुन की दो तीन गांठे थोड़े से काजल के साथ पीस लें और गंज के स्थान पर लगायें। यदि जलन हो तो थोड़ा सा मक्खन गंज पर लगाया जा सकता है या कुछ दाने पोटेशियम परमैगनेट (पोटाश) के थोड़े से पानी में डालकर इसे धोयें। उपरोक्त क्रिया कुछ दिन करें। इसके साथ ही साथ करीर (*कैप्पारिस डिसीडुआ*) की कोमल पत्तियों का पेस्ट बना लें व इसे गंज के स्थान पर लगायें।

मेथी

सब्जी और औषध भी

वैद्य एस.ए.खान, लखनऊ

मेथी एक सर्वपरिचित पौधा है जिसके कोमल पत्ते शाक के रूप में प्रयोग किये जाते हैं। औषधि के रुप में भी इसके पत्ते प्रयोग किये जाते हैं। यह रबी की फसल का पौधा जाड़े की ऋतु का प्रसिद्ध शाक है।

भाषावार नाम- मेथी (हि., म., गु.) मेथिका, पातबीजा (सं.) शालीत, शक्लीज (फा.), मेंते(क.), मेथरी, मेथरे (पं) मेंति (त.) फेनूग्रीक (अं), *ट्राइगोनेल्ला फीनम ग्रीकम लिन.* (लै.)

मेथी के गुण

मेथी कटु रस व उष्णवीर्य वाली, कटु विपाकी, वातकफ शामक, पित्तवर्धक, दीपन, बल्य, स्निग्ध तथा ज्वर नाशक है।

मेथी के पत्तों का उपयोग

मेथी के कोमल ताजे पत्तों को पीसकर जौ के आटे में गूंथकर कड़ुवे तेल में पूरी बनाकर खाने से मधुमेह के रोगियों को लाभ होता है। मेथी के पत्तों को पीसकर गरम कर पुल्टिस के रूप में प्रयोग करने से नवीन शोथ ठीक होता है तथा घाव शीघ्र पक जाते हैं। वात कफज प्रकृति के व्यक्तियों के लिये मेथी का साग लाभकर है। पित्तज प्रकृति के लोगों को मेथी का प्रयोग नहीं करना चाहिये क्योंकि यह पित्तवर्धक व प्रकोपक होती है अतः उन्हें पित्तज रोग होने की संभावना बढ़ जायेगी। यदि मेथी के साग में डन्ठल या पौधे का काण्ड़ भाग (कड़ा भाग) होगा तो साग वातकफ शामक न होकर वातवर्धक (वातकारक) भी हो सकता है। अतः कोमल पत्तों का ही प्रयोग करें।

मेथी के बीजों का प्रयोग

मेथी के बीज वात का अनुलोमन करने वाले, भूख बढ़ाने वाले, वाजीकर, उदर को हितकर व गर्भाशय उत्तेजक होते हैं। मेथी के बीज मधुमेह नाशक हैं। पाँच-पाँच ग्राम मेथी के बीज चूर्ण को गरम जल से प्रातः खायें या १० ग्राम मेथी बीजों को शाम को पानी में भिगो प्रातः उन्हें कड़वे तेल में छौंक कर नाश्ते के साथ खा लें।

मेथी के बीजों को ३-५ ग्राम की मात्रा में प्रातः शाम सेवन करने से कमर का दर्द, जोड़ों का दर्द, आमवात, गर्भाशय का शूल भी ठीक होता है। प्रसव के पश्चात मेथी का सेवन कराने से विशेष लाभ होता है। गर्भाशय का शोथ दूर होकर जननांग व उदर अपनी पूर्व अवस्था में शीघ्र आ जाते हैं, यह वातज प्रकृति के लोगों के लिये विशेष लाभकर है।

वातज व्याधियों में मेथी को पानी में उबाल कर उससे स्नान या स्वेदन भी कराते हैं।

मासिक धर्म कम आने पर मेथी के बीजों का सेवन करने से लाभ होता है।

अहितकर

पित्तज प्रकृति के लोगों को मेथी के बीजों का सेवन नहीं करना चाहिये वातज रोगों मे- सोंठ, कालीमिर्च और सेंधा नमक के साथ लगातार प्रयोग करने से लाभ होता है।

सरसों में कैंसर नाशक गुण

मसाले और वनस्पति तेल के रूप में बड़े पैमाने पर काम में आने वाला सरसों अब संभवतः कैंसर के इलाज में भी काम आने लगेगा। हैदराबाद के राष्ट्रीय पोषण संस्थान के वैज्ञानिकों ने सरसों में कैंसर नाशक गुण की मौजूदगी की संभावना का पता लगाया है। सरसों के दानों में आइसोथियोसायनेट नामक यौगिक होते हैं जो कैंसर से बचाव में उपयोगी हैं।

इन वैज्ञानिकों ने चूहों पर प्रारंभिक अध्ययन के बाद यह पाया गया कि अगर चूहों को सरसों मिश्रित आहार खिलाया जाए तब इन पर बेंजो (ए) पायरीन जैसे कैंसरजन्य यौगिकों का दुष्प्रभाव नहीं पड़ता। इन वैज्ञानिकों ने प्रयोग के दौरान सरसों के दानों को पीस कर चूहों के आहार में मिला दिया। आहार में सरसों की मात्रा एक से दस प्रतिशत रखी गयी। इसे चार सप्ताह तक चूहों को खिलाया गया और फिर इन चूहों में से प्रत्येक की बेंजो (ए) पायरीन के संपर्क में लाया गया तथा हर २४ घंटे पर प्रत्येक चूहे के गुण सूत्रों का विश्लेषण किया गया। इस अध्ययन से यह पता चला है कि सरसों चूहों को बेंजो (ए) पायरीन के उत्परिवर्तजनी (म्यूटेजेनिक) प्रभाव से रक्षा करता है।

स्वतंत्र भारत ४ अगस्त, १९९३

गुणकारी हरिद्रा या हल्दी

डा. जगदीश पंचोली, इंदौर

हरिद्रा को बोलचाल की भाषा में हल्दी कहा जाता है। यह सम्पूर्ण विश्व में प्रयुक्त होने वाली अत्यन्त सुलभ, चिरपरिचित एवं गुणकारी औषध द्रव्य है, हरिद्रा का दो-तीन फीट ऊँचा बहुवर्षायु क्षुप होता है। इसमें आयताकार, चिकनी, सतह युक्त पत्तियां लगी रहती हैं। पत्तियों से आम जैसी सुगंध का आभास होता है। इसके फूल पीले रंग के करीब डेढ़ इंच लम्बे होते हैं, जिनका उद्‌गम प्रायः शरद ऋतु में होता है।

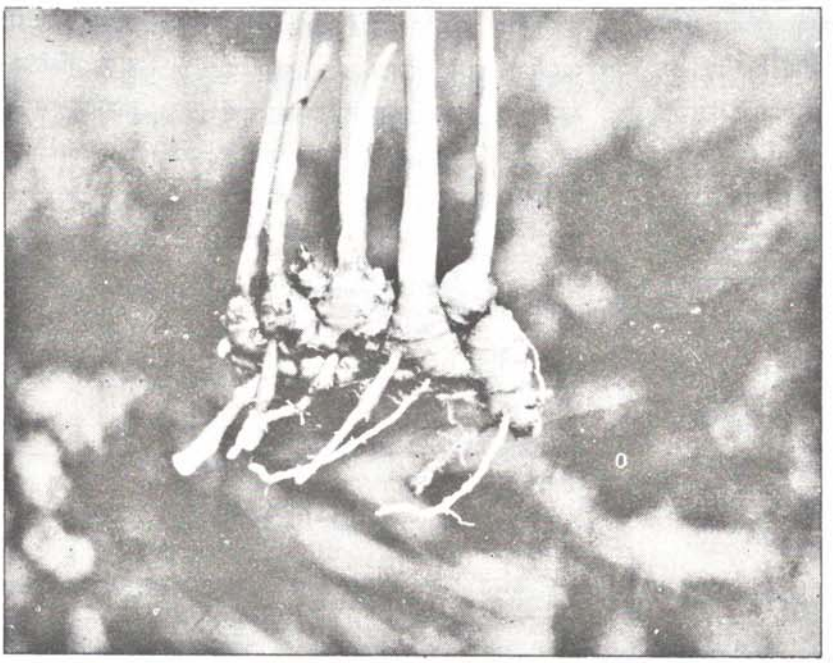

हमारे देश में हरिद्रा की मुख्य रूप से बंगाल, महाराष्ट्र एवं तमिलनाडु में खेती की जाती है। इसकी दो जातियां मिलती हैं।

१- वन हरिद्रा

२- आम्रगन्धि हरिद्रा

भाषावार नामः हिन्दी-हल्दी, संस्कृत-हरिद्रा, अंग्रेजी-टर्मेरिक, पंजाबी-हरदल, कन्नड़-हलादि, बंगला-हलुद, गुजराती-हलदर, तेलगु-पसुपु, मराठी-हकद, फेमेली-जिन्ज बरेसी; लैटिन नाम-*कुरकुरमा लोंगा।*

गुणकर्म एवं प्रयोग

औषधि के रूप में हल्दी के कन्द के प्रयोग का विधान शास्त्रों में बताया गया है। इसके कन्द को बाजार में लाने से पूर्व उबाल लिया जाता है, जिससे वह मुलायम हो जाती है, इसके पश्चात सुखा कर रगड़ते हैं। जिससे ऊपरी आवरण हट कर निखर जाता है। हरिद्रा के कन्द में कुर्कुमीन नाम पीतरंजक द्रव्य, उड़नशील तेल, विटामिन 'ए', प्रोटीन, स्नेह द्रव्य, खनिज द्रव्य, एवं कार्बोहाइड्रेट प्रचुर मात्रा में रहते हैं।

प्राचीन काल से ही हरिद्रा का प्रयोग त्रिदोषज व्याधियों में निरापद रूप से होता आया है। शरीर के किसी भाग में सूजन, दर्द एवं खुजली होने पर इसका लेप करते हैं। समस्त प्रकार के त्वचा के रोगों, कुष्ठ, शीत पित्त, कुष्ठ एवं एलर्जी की यह सर्वोत्तम औषधि है। हल्दी का उबटन चेहरे के वर्ण को निखारता है और इसका चूर्ण या मलहम विविध प्रकार के घावों के शोधन एवं रोपण में लगाया जाता है।

हल्दी के टुकड़े या चूर्ण को अंगारों पर रखने से जो धूम निकलती है वह हिक्का, श्वास, मूर्च्छा एवं बिच्छू के काटने पर उत्पन्न वेदना में लाभप्रद होती है। हमारे देश में लगभग सभी घरों में हल्दी भोजन को स्वादिष्ट बनाने के लिए मसालों में इस्तेमाल की जाती है। यह अरुचि, कब्जियत, पीलिया कृमि, जलोदर, सामान्य खाँसी, पाण्डु रक्तस्राव, प्रमेह, प्रसव के बाद होने वाले विकारों, स्तन्य रोगों, शुक्रमेह, जीर्णज्वर, सामान्य दुर्बलता एवं विष में अत्यन्त गुणकारी है।

गूलर

एक अद्‌भुत फल

गूलर का पेड़ भारत के प्रायः सभी स्थानों पर पाया जाता है। यह ऊँचा तथा बड़े आकार का होता है। इसके बारे में प्रसिद्ध है कि इसके फूल को 'गुप्त फूल' कहा जाता है। यह पेड़ गर्मियों में फल देता है। इसका फल गोल होता है जो थोड़ा सा दबाते ही फूट जाता है। कच्चे फल का रंग अन्य फलों की तरह हरा एवम् पके फल का लाल होता है। पेड़ के पंचांग में दूध भरा रहता है। यदि किसी धारदार चीज से इसके किसी भी अंग को काटा जाए तो कटे स्थान से दूध निकलने लगता है। इसका दूध ताजा अवस्था में सफेद होता है परंतु हवा लगने पर पीले रंग में बदल जाता है। यह दूध कई प्रकार से उपयोगी होता है।

भाषावार नामः हिन्दी–गुल्लर, गूलर, ऊमर, संस्कृत–उदुम्बर, जन्तुफल, बंगाली–यज्ञडुमुर, मराठी–उंबर, गुजराती–उंबरा, लेटिन– *फीकुस ग्लोमंराटा*, अंग्रेजी–कन्ट्री फिग

औषधीय गुण

इसका फल पित्त, कफ तथा रक्त विकारों के लिए लाभप्रद है। यह शीतल, रूखा, कसैला तथा मधुर व भारी होता है। इसका फल इतना मीठा होता है कि इसमें बहुत जल्दी कीड़े लग जाते हैं।

औषधीय उपयोग

इसके फलों का एक चम्मच चूर्ण बना यदि पानी के साथ कुछ दिनों तक नियमित सेवन किया जाए तो पेशाब में चीनी आने की समस्या से छुटकारा मिल जाता है।

- इसके फलों का काढ़ा बनाकर नित्यप्रति उससे कुल्ला करने से दांत और मसूढ़े स्वस्थ व मजबूत होते हैं।
- यदि इसके फलों को जल में पीस–छान कर मिश्री मिलाकर प्रतिदिन प्रातः काल पिया जाए तो स्त्रियों के रक्त प्रदर, नकसीर, खूनी पेचिश व बवासीर में खून गिरना बंद हो जाता है। इसका चूर्ण यदि चीनी के साथ खाकर ऊपर से पानी पी लिया जाए तो भी उपरोक्त रोगों में फायदा पहुंचता है। यदि इसके सिर्फ चूर्ण का ही उपरोक्त तरीके से इस्तेमाल किया जाए तो भी रक्त प्रदर में लाभ पहुंचता है।
- इसके फलों में कीड़े बहुत लगते हैं। अतः फलों का प्रयोग करने से पहले यदि उनमें कीड़े लगे हों तो कीड़ों को निकालकर फलों को सुखाकर प्रयोग करना चाहिए। रोग में सेवन करने के लिए प्रति खुराक २ से ४ फल काफी होते हैं।
- खूनी दस्त में इसकी जड़ का बारीक चूर्ण प्रतिदिन पानी के साथ लेने से काफी लाभ होता है।
- सूखा रोग से पीड़ित बच्चों को इसके दूध की कुछ बूंदें एक–दो चम्मच दूध में डालकर पिलाने से शिशु का शरीर हृष्ट–पुष्ट होता है। इसके दूध की प्रति खुराक मात्रा १० से २० मिग्रा. तक होनी चाहिए।

गेंदे से कीटनाशक

बागवान जानते हैं कि गेंदे का पौधा अपने आसपास के पौधों की मदद करता है, खासकर नुकसानदेहकीटों को दूर खदेड़ने में। अलबामा विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं ने इस पौधे के विभिन्न हिस्सों से कुछ ऐसे रसायन प्राप्त किए हैं जो काफी महत्वपूर्ण साबित हो सकते हैं।

शोधकर्ताओं ने गेंदे की जड़, पत्ती व फूलों का सत प्राप्त किया। इस सत की गैस–क्रोमेटोग्राफी के जरिए विश्लेषण करने पर उनमें मौजूद विभिन्न रसायन अलग–अलग प्राप्त हो गए। उन्होंने देखा कि इन पदार्थों में कीटनाशक गुण हैं। फूल का सत सबसे ज्यादा गुणयुक्त पाया गया। शोधकर्ताओं ने देखा कि गेंदे के हर हिस्से से प्राप्त रसायन कीटनाशी थे। इनमें वाष्पशील पदार्थ थायोफीन भी होते हैं। ये थायोफीन मच्छरों के लार्वा तथा वयस्क मच्छर दोनों का खात्मा करने में सक्षम हैं।

गेंदे से प्राप्त कीटनाशक बिक्री की दृष्टि से भी काफी महत्वपूर्ण साबित होंगे।

स्रोत फीचर्स, अक्तूबर १९९३

तेजपात

तेजपात शाकाहारी और मांसाहारी व्यंजनों विशेषतः चावल से बनने वाले भोज्य पदाथों में सुगन्ध के लिये प्रयोग किया जाता है। यह एक सदाबहार वृक्ष की सुखाई पत्तियां हैं। इसके औषधीय उपयोग भी है।

भाषावार नाम- हिन्दी और बंगला- तेजपात, तिजपत्ता, संस्कृत-पत्रकम्, तमिल-तालिशा पत्ती, अंग्रेजी-इन्डियन सिनेमन, लैटिन- *सिनामोमम तमाला।*

यह मुख्यतः हिमालय, खासी पहाडियों, बर्मा, पूर्वी बंगाल और पश्चिमी घाट के कुछ क्षेत्रों में समुद्र तल के १०० से ३३३५ मीटर की उंचाई तक पाया जाता है।

इसके पेड़ दो मीटर की दूरी पर उगाये जाते हैं। पहले बीजों से नर्सरी तैयार की जाती है और पांच वर्ष के होने पर पौधे स्थाई रूप से लगा दिये जाते हैं। पेड़ के बड़े होने में पांच वर्ष लगते हैं और दस वर्ष से फसल प्राप्त होने लगती है। इनसे १०० वर्ष या उससे भी अधिक तक उत्पाद प्राप्त किया जा सकता है। नये पेड़ों से प्रतिवर्ष अक्टूबर से दिसम्बर तक पत्तियां तोड़ी जा सकती हैं। पुराने और कमजोर वृक्षों से एक वर्ष छोड़कर पत्तियों को तोड़ते हैं। तोड़ी गई पत्तियों को तीन चार दिन धूप में सुखाने के बाद ये रखने बेचने योग्य हो जाती हैं। तेजपात के पेड़ों की अधिक देखभाल की आवश्यकता नहीं पड़ती है। सिक्किम क्षेत्र में इनकी छाल भी इकट्ठा की जाती है जिसका पत्तियों के स्थान पर प्रयोग किया जा सकता है। कश्मीर में पत्तियों का पान की तरह प्रयोग किया जाता है। तेजपात के पेड़ में मार्च से अप्रैल तक फूल आते हैं। इसके फल काले रंग के होते हैं। तेजपात की पत्तियों की तेज गंध उसमें पाये जाने वाले तेल के कारण होती है। यह तेल अल्कोहल में घुलनशील है और इसका मुख्य तत्व लौंग तेल में पाया जाना वाला यूजीनोल होता है। इसके तेल में टर्पीन और सिन्नैमिक एल्डीहाइड भी पाया जाता है।

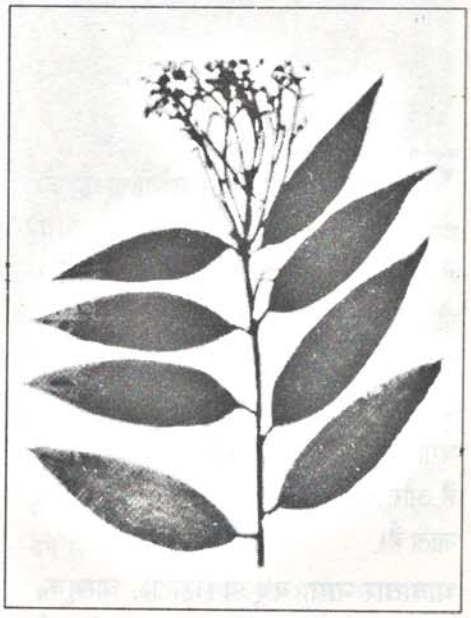

औषधीय उपयोग

- इसकी पत्तियों को हृदयोद्वेष्टन और हृदयदौर्बल्य आदि हृदय रोगों में दिया जाता है। यह हृदय को ताकत पहुंचाती है।
- वातिक अन्यथाज्ञान, उन्माद, विराग आदि मस्तिष्क रोगों में इसकी पत्तियों का उपयोग किया जाता है।
- आमाशय की दुर्बलता, पाचन की गड़बड़ी और पेटदर्द तथा पेट की गैस निकालने के लिये इसका उपयोग पाया जाता है।
- यदि पेशाब रुक जाय तो सिरके में इसकी पत्तियों को पीसकर उदर और पेडू पर लेप करने और पिलाने से पेशाब हो जाता है।
- फूली और नाखूना को दूर करने के लिये इसको सुरमें की तरह महीन पीस कर आंखों में लगाया जा सकता है।
- इसके अतिरिक्त मुख दुर्गन्ध को दूर करने के लिये इसकी पत्तियों को चबाया जा सकता है।
- वस्त्रों को कीटों से सुरक्षित रखने और उनमें सुगन्ध के लिये तेजपात की पत्तियाँ रखी जा सकती हैं।

कैंसर से बच सकते हैं

जहर खाने से आदमी की मौत हो जाती है परन्तु कुछ जहर ऐसे भी होते हैं जो रोगविष को समाप्त कर जान बचाते हैं। रिसिन एक ऐसा ही खतरनाक जहर है जो रक्त कैंसर के उपचार में मददगार पाया गया है। रिसिन को चखाने मात्र से आदमी की मौत हो सकती है। परन्तु पाया गया कि अस्थि मज्जा प्रत्यारोपण के बाद इस जहर का एक परिष्कृत रूप मरीज को देने से कैंसर को दुबारा पैदा होने से रोका जा सकता है। रिसिन के इस सुधरे रूप में जिसे एंटी बी-४ ब्लाक्ड रिसिन कहते हैं। जहर के रोग का पता लगाने वाली एक एंटीबायोटिक मिलायी जाती है। अस्थिमज्जा प्रत्यारोपण के बाद भी ५० प्रतिशत मामलों में रक्त कैंसर पुनः पैदा हो जाता है।

स्वतंत्र भारत, अगस्त ४ १९९३

बथुआ

वैद्य एस.ए.खान, स्टेट फार्मेसी, लखनऊ

यह लगभग सर्व परिचित पौधा है जो प्रायः सभी जगहों पर रबी की फसल के साथ खेतों में उगताहै। यह बहुत स्वादिष्ट व पौष्टिक साग है। यह दो प्रकार का होता है छोटा बथुआ एवं बड़ा बथुआ। बंड़ा बथुआ सब्जी उगाने वाले खेतों में या बाग बगीचों में उग आता है। छोटा बथुआ ही उत्तम है और यही साग के रुप में प्रयोग में लाया जाता है।

भाषावार नामः बथुआ (हिन्दी), वास्तूक, क्षारपत्र, शाकराज (संस्कृत), टांको, चिलनी भाजी (गुजराती), चाकवत (मराठी), बथुआशाक (बंगला), गूजफुट (अंग्रेजी), *काइनोपोडियम, अलबम लिन.* (लै.)

औषधीय गुण

बथुआ मुख्य रूप से पित्तहर है परन्तु उसके अन्य गुणों के कारण उसे तीनों दोषों को शमन करने वाला कहा गया है। फिर भी यह किंचित वायुकारक है। इसके बीज उष्ण हैं।

यह मधुर, कटु रसवाला, मधुर विपाकी, उष्णवीर्य वाला, भूख बढ़ाने वाला, शीघ्र पचने वाला, क्षारीय, स्रोतों का शोधन करने वाला, समस्त उदर रोगों में, विशेषकर यकृत तिल्ली आदि की सूजन में विशेष लाभ कर है। रेचक व क्षारीय होने के कारण आध्मान, व कृमि नाशक है। यह हृदय के लिये हितकर तथा बल व शुक्रवर्धक है। यह शाकों में सर्वोत्तम है। अनगिनत गुणों के कारण ही इसे शाकराज कहा गया है।

प्रयोग

इसे साग के रूप में या उड़द की दाल के साथ पकाकर जाड़े की ऋतु में खाते हैं। बथुये का यह प्रयोग बहुत ही स्वास्थ्यकर है। क्योंकि बथुआ थोड़ा वायुकर होता है और उड़द उत्तम वातशामक होता है। अतः बथुआ और उड़द की दाल का योग बहुत ही लाभदायक व स्वादिष्ट भी होता है। इसे बेसन के साथ मिलाकर पकौड़ी आदि के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है। पथ्य रूप में यह उरःक्षत, क्षयरोग, अग्निमांद्य, यकृतशोथ, कामला आदि रोगों में उत्तम पथ्य है।

जलोदर, संग्रहणी, विबन्ध आदि में बथुए की रोटी या साग खिलाते हैं। अधिक मूत्र लाकर, कोष्ठ शुद्धि करके यह सूजन को कम तथा पाचन क्रिया को सामान्य करता है। १०-१५ ग्राम बथुए के बीजों को उबालकर पिलाने से रुका हुआ मासिक धर्म हो जाता है। प्रसव आसानी से हो जाता है और प्रसव के पश्चात के रोग ज्वर, शोथ, रक्ताल्पता आदि नष्ट हो जाते हैं। अतः इस शाकराज का प्रचुर उपयोग कर लाभ उठाना न भूलें।

जीवनीय में छपे लेखों में मूल विचार लेखकों के ही हैं। जीवनीय का संपादक या प्रबंध मंडल का इससे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

संपादक

चीन में एक गर्भ-निरोधक पर प्रतिबंध

चीन में सालाना करीब १० लाख गर्भपात किए जाते हैं। इनमें से करीब ३ लाख गर्भपात तो सिर्फ इसलिए होते हैं कि वहां प्रयुक्त एक गर्भ निरोधक निष्प्रभावी साबित हुआ है। गर्भाशय में रखे जाने वाले ये गर्भ निरोधक (इन्ट्रा-यूटैराइन गर्भ निरोधक) स्टील के एक छल्लेनुमा हैं। इस तरह के अन्य गर्भ निरोधक, जैसे कॉपर टी आदि हैं।

पिछले वर्षों में चीन की जन्म-दर में भारी गिरावट आई है। गर्भ निरोधकों का इस्तेमाल करने वाली ४०% चीनी औरतें इसी छल्ले का इस्तेमाल करती हैं। यह छल्ला, गर्भाशय के अंदर रखा रहता है तथा भ्रूण को गर्भाशय की दीवार से नहीं जुड़ने देता। बगैर इस जुड़ाव के भ्रूण का विकास नहीं हो सकता। चीन में कॉपर टी के मुकाबले इस छल्ले का ज्यादा इस्तेमाल होने की वजह यह है कि यह स्थानीय उत्पादन है तथा सस्ता है। कुल इन्टा-यूटेराइन गर्भ निरोधकों में इस छल्ले का इस्तेमाल ९०% है।

इस छल्ले के निष्प्रभावी होने की वजह से ठहरने वाले गर्भ की भारी कीमत उन औरतों को गर्भपात के रूप में चुकानी होती है। चीन की अर्थव्यवस्था पर भी यह एक बोझ है।

अब चीन सरकार ने तय किया है कि स्टील छल्ले की जगह विश्वसीनय कॉपर टी का ही उपयोग किया जाएगा। इन गर्भ निरोधकों की पूरी क्रियाविधि आज तक स्पष्ट नहीं हुई है, किन्तु शोधकर्ता मानते हैं कि इनकी क्रियाविधि में तांबा एक विशिष्ट भूमिका अदा करता है। इसी वजह से तांबे से बने गर्भ निरोधक ज्यादा कारगर होते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन से साभार

संतरा

संतरा सिट्रस वर्ग का एक फल है इसका मूल उत्पत्ति स्थान चीन है। यह भारत के सभी उष्ण व आद्र क्षेत्रों में लगाया जाता है। इसकी व्यावसायिक खेती मुख्यतः महाराष्ट्र और मध्यप्रदेश में की जाती है। संतरे का वृक्ष मध्यम आकार का सदाबहार होता है। इसके पत्ते छोटे और पतले होते हैं। पत्तियों में ग्रंथियां होती हैं जिनमें रस होता है। फल के छिलके में भी ग्रन्थियां पाई जाती हैं। इसके फूल सफेद रंग के होते हैं तथा दिसम्बर से मई तक खिलते हैं। फूल गुच्छों में होते हैं। फल मण्डलाकार और सिर पर चपटे या गड्ढेदार होते हैं। फल सर्दियों में पकते हैं। पूरे पके फल का छिलका चमकीले नारंगी या लालछौंह नारंगी रंग का होता है। गूदा रसीला, मीठा या थोड़ा खट्टा होता है।

भाषावार नाम– हिन्दी–संगतरा, सन्तरा, सोंतरा; संस्कृत–नागरंग; गुजराती–नारंगी; मराठी–संत्रे, नारिंग, बंगाली–नारेंगा, अंग्रेजी–स्वीट आरेंज, लैटिन–*सिट्रस आउरेन्टियम।*

औषधिय गुण

संतरे के फल के रस में अनेक विटामिन तथा लवण पाये जाते हैं। संतरे के रस में विटामिन सी अधिक मात्रा में पाया जाता है। प्रत्येक १०० ग्राम रस में ६० मि.ग्रा. तक विटामिन सी पाया जाता है। संतरे के रस में प्राकृतिक शर्करा पाई जाती है जो बहुत तेजी से शरीर में अवशोषित हो जाती है। संतरे में सिट्रिक एसिड, साइट्रेट आफ पोटाश (२–३%), ग्लूकोसाइडस, कषाय द्रव और नेरोली आयल पाया जाता है। इस तेल को निकालना बहुत कठिन है अतः यह शुद्ध रूप में नहीं मिलता। संतरे के फूलों और पत्तियों से तेल निकाला जाता है।

उपयोग

- संतरे का रस हृदय की दुर्बलता और धड़कन को दूर करके उसे बल प्रदान करता है। एक गिलास संतरे केरस में एक बड़ा चम्मच शहद मिला कर लेने से बहुत लाभ पहुंचता है।

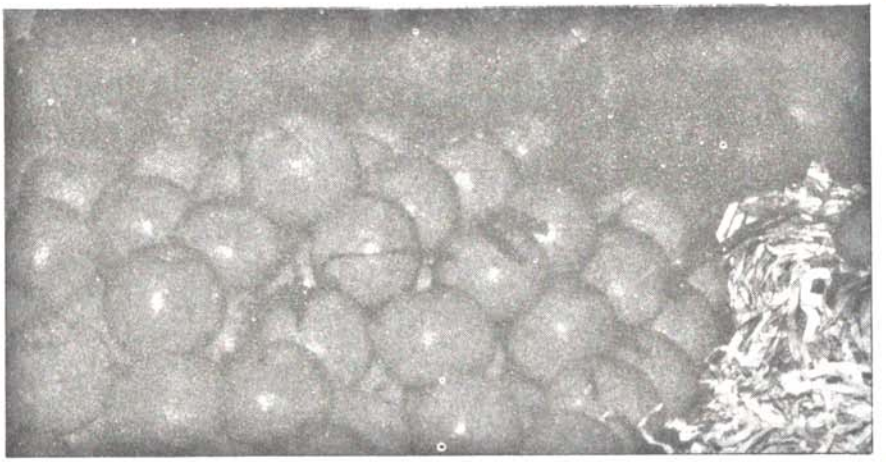

- इससे पित्त का प्रकोप शान्त होता है तथा प्यास और संताप कम होता है।
- संतरे का रस तुरन्त तृप्त करने वाला है। अतः खिलाड़ियों और शारीरिक श्रम करने वालों को इसका सेवन करना चाहिये।
- संतरे के रस में चुटकी भर सेंधा नमक मिलाकर लेने से लाभ होता है इससे रक्त की अम्लता कम होती है।
- कब्ज की शिकायत वाले व्यक्तियों को नित्य रात्रि भोजन के घंटे दो घंटे बाद दो तीन संतरे खाने चाहिये।
- गर्भवती महिलाओं की मिचली उल्टी आदि में एक–एक फांक सन्तरे की खाकर छिल्का थूक देने से लाभ मिलता है।
- सन्तरे के छिलकों को सुखा कर उनका पाउडर बना लें इस चूर्ण को शीशियों में अच्छी तरह बन्द करके रखें। इसको अंडे की जर्दी, शहद और थोड़े से गाढ़े दही के साथ मिलाकर अच्छा फेस मास्क तैयार किया जा सकता है। इस चूर्ण को बेसन में मिला कर चेहरे पर लगाने से त्वचा का रूखापन मिट जाता है। चेहरे के धब्बे, चित्तियां और मुंहासे दूर करने के लिये नित्य इसका उबटन किया जा सकता है।

संतरा या नारंगी : फल भी दवा भी

डॉ. प्रकाश कुमार 'आलोक', सहरसा (बिहार)

प्रसिद्ध आहारशास्त्री प्रो. इडरिट कहते हैं कि "मनुष्य कभी केवल फल ही खाकर रहता था, और आज भी वह केवल फलों पर रह सकता है।"

ऐसा ही एक सुन्दर, पौष्टिक फल संतरा है। महर्षि चरक के अनुसार नारंगी स्वाद में मधुर और थोड़ा अम्ल, हृदय को ताकत देने वाली, भूख जगाने वाली और वातनाशक है।

संतरे में विटामिन 'सी' सर्वाधिक मात्रा में उपलब्ध है। विटामिन 'सी' की कमी से होने वाले सभी रोगों में यह अवश्य सेवनीय है। हड्डियों एवं दांतों के विकारों, गठिया एवं वात रोगों, गर्भवती के वमन, स्कर्वी आदि रोगों में इसका सेवन लाभदायक है। संतरे का रस तुरंत ताकत प्रदान करने वाला माना गया है। इसलिए ज्वर आदि कमजोर कर देने वाली बीमारियों और उपवास के दिनों में संतरे का रस दिया जाता है। संतरे का रस प्यास बुझाने वाला और रक्तवर्द्धक है।

संतरा पौष्टिकता से भरपूर फल तो है ही यदि अनुपान–भेद से इसका उपयोग किया जाए तो कई रोगों में यह औषधि का काम भी कर सकता है।

अमरूद

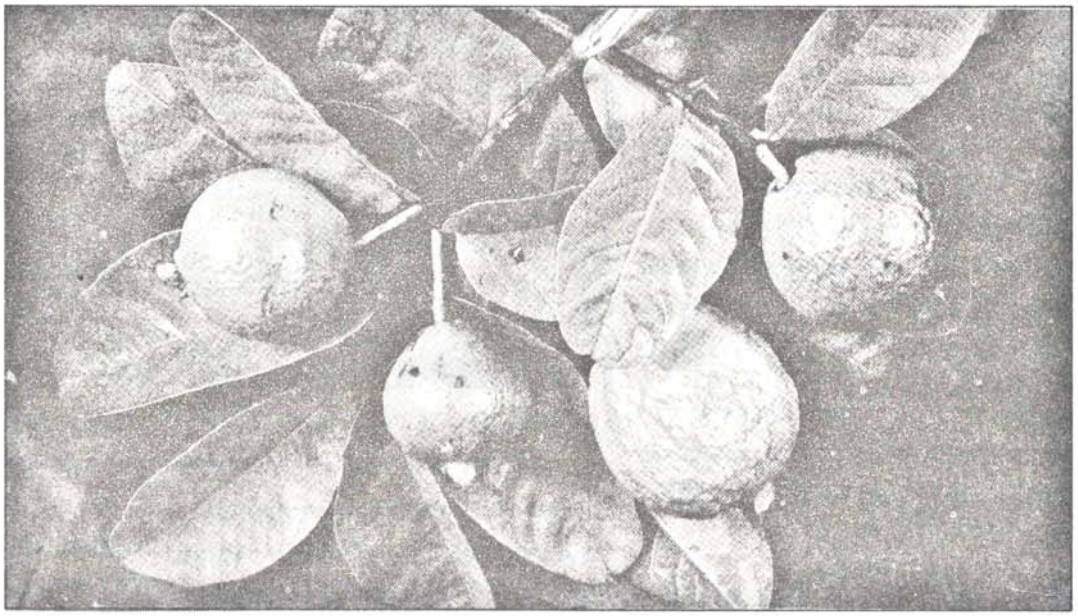

अमरूद गुणों में सेव के समान परन्तु उसके मुकाबले बहुत सस्ता व विटामिनों से भरपूर है।

अमरूद मूलरूप से दक्षिण अमरीका का है वहां से इसका प्रसार वेस्ट इंडीज में हुआ। स्पेनी विजेता इसे अपने साथ फिलीपीन ले गये। भारत में पुर्तगाली इसे लाये। पूरे भारत में लगभग १,८०,००० हेक्टेयर क्षेत्र में यह पैदा किया जाता है। और १५,००,००० टन से अधिक प्रतिवर्ष पैदावार होती है। अमरूद दो तरह का होता है सफेद गूदे वाला और लाल गूदे वाला। इसकी एक किस्म सेब की तरह लाल रंग की भी होती है और इसमें बीज भी नहीं होते परन्तु यह बहुत कम पाया जाता है। आम तौर पर इलाहाबादी बनारसी, नागपुरी और नासिक की किस्में अधिक पसन्द की जाती हैं। इसका फल गोल या गोलाकार लम्बा होता है। फल का भार २५ ग्राम से २५० ग्राम या इससे अधिक भी हो सकता है।

अमरूद के पेड़ बहुत ऊँचे नहीं होते पर फैलते हैं। इससे फल तोड़ने में सुविधा होती है। साधारणतया वर्ष में दो बार फल आते हैं पर जाड़े में मानसून की अपेक्षा अच्छे फल आते हैं। यदि अच्छी तरह पेड़ों की देखभाल की जाय तो एक अच्छे पेड़ में डेढ़ हजार से दो हजार तक फल आते हैं। इसकी खेती आर्थिक रुप से भी लाभदायक है।

भाषावार नाम : हिन्दी–अमरूद, मराठी–पेरू, गुजराती– जामफल, बंगाली–पियारा, अंग्रेजी–ग्वावा, लैटिन– *प्सीडियम गुआजावा*

अमरूद कसैला, मधुर तथा खट्टा होता है। पक्का अमरुद स्वादिष्ट होता है। आयुर्वेदिक मत के अनुसार यह शुक्रल, भारी, शीतल और कफवर्धक होता है। इससे वात और पित्त होता है।

अमरूद का कच्चा फल अतिसार में लाभदायक है। इसके वृक्ष की छाल का काढ़ा ज्वर में लाभदायक है।

अतिसार बन्द करने के लिए इसकी जड़ की छाल का काढ़ा देते हैं। यह काढ़ा स्कर्वी, दूषित व्रण तथा सूजे हुये मसूढ़ों में मुखधावन के रूप में बहुत लाभदायक पाया गया है।

अमरूद का फल कैल्शियम, फास्फोरस, लोहा तथा विटामिनों से भरपूर है। ये तत्व गूदे से अधिक फल के छिलके में पाये जाते हैं। अतः अमरूद के फल का छिलका नहीं निकालना चाहिये। अमरूद में विटामिन सी अधिक मात्रा में पाया जाता है जो फल पकने पर बढ़ जाता है परन्तु बहुत अधिक पके फलों और इसके डिब्बाबंद उत्पादों में कम हो जाता है। १०० ग्राम पके अमरुद में २१० मिग्रा. तक विटामिन सी पाया जाता है। अमरूद के फलों से कई डिब्बाबंद उत्पाद तैयार किये जाते हैं, जैसे जेली, जूस, नेक्टर आदि।

सोयाबीन

सोयाबीन वनस्पति प्रोटीन का बहुत अच्छा स्रोत है। सोयाबीन का मूल उत्पत्ति स्थान चीन माना जाता है तथा जापान, कोरिया, इन्डोनेशिया, सिंगापुर आदि देशों में इसका बहुत प्राचीन काल से उपयोग किया जाता है।

भाषावार नामः हिन्दी–सोयाबीन, रामकुरथी, भटनास, संस्कृत–द्विजशप्त, अंग्रेजी–सोया या सोयाबीन्स, सोजा, जापान पी, लैटिन–*ग्लीसाने माक्स, ग्लीसाने हिस्पिडा*

सोयाबीन की बेल और पत्तियां मटर के समान होती है व पत्तियों पर रोयें होते हैं। इसकी प्रत्येक फली में दो से पाँच बीज होते हैं। बीज गोल, अण्डाकार, बीच में चपटे व हल्के पीले या रंग–बिरंगे तक होते हैं।

सोयाबीन दुनिया की सबसे सस्ती प्रोटीन है। इसमें उच्च श्रेणी का तेल होता है। सोयाबीन में प्रोटीन ४०%, सेलुलोज १७%, शर्करा ७%, वसा २०% और रेशे ५% होते हैं। इसमें मनुष्य के लिये आवश्यक सभी अमीनों अम्ल पाये जाते हैं। मांस की प्रोटीन के विपरीत इसमें यूरिक एसिड पैदा करने वाले न्यूक्लियो प्रोटीन नहीं पाये जाते, अतः यह मांस प्रोटीन से भी श्रेष्ठ है।

सोयाबीन का सोया दूध, सोया पेय, सोया–सास, सोया–तेल, आटे और दाल आदि विभिन्न रुपों में प्रयोग किया जा सकता है।

सोयाबीन के तेल में कोलेस्ट्राल नहीं होता है। अतः हृदय रोगी भी इसका उपयोग कर सकते हैं। तेल निकालने के बाद सोयाबीन के आटे में प्रोटीन और अन्य कार्बोहाइड्रेट तो पाये जाते हैं पर इसमें स्टार्च नहीं होता अतः मधुमेह के रोगियों के लिये भी यह उत्तम आहार है। सोयाबीन के सेवन से पित्त का शमन होता है तथा अजीर्ण और अम्लपित्त रोगों में लाभ होता है। इसका सेवन शरीर की रोग–प्रतिरोध क्षमता को भी बढ़ाता है।

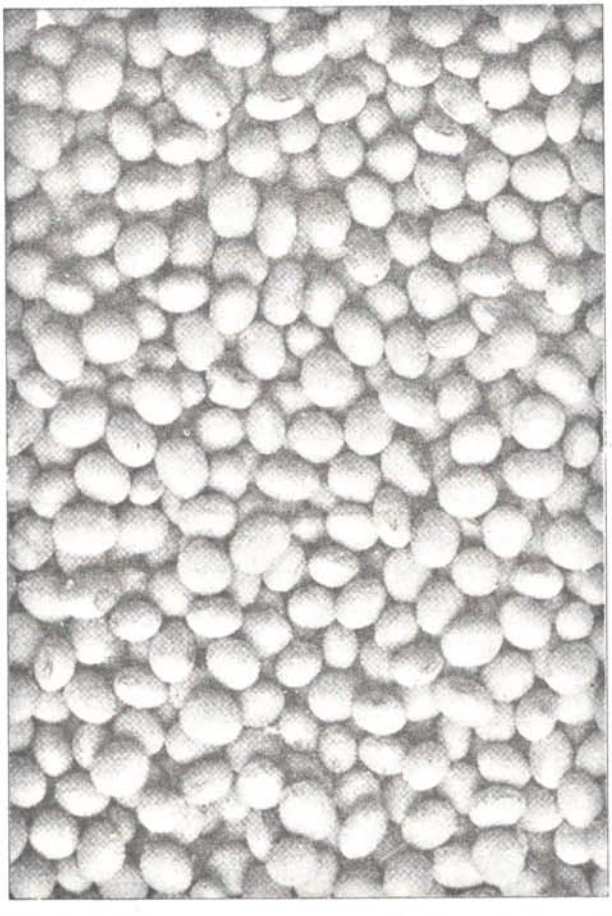

गेहूं के आटे में २०% सोयाबीन का आटा मिलाने से उसकी पौष्टिकता बहुत बढ़ जाती है। इस तरह के बने खाद्य जल्दी खराब भी नहीं होते हैं। गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं के भोजन में आसानी से पचा सकने वाले प्रोटीन खाद्य पदार्थों का होना अत्यन्त आवश्यक है। इनकी अनुपस्थिति में गर्भवती स्त्री में कमजोरी आ जाती है जिससे भ्रूण का उचित विकास नहीं होता व पैदा होने वाला बच्चा कम भार का होता है। ऐसे बच्चे को बीमारियां होने की आशंका भी होती है। सोयाबीन इस स्थिति में उत्तम आहार है। इसमें विटामिन सी भी होता है जिससे गर्भिणी के लिये आवश्यक लौह के शरीर में अवशोषण में मदद मिलती है।

बहुत से वृद्ध मुलायम और अधिक कार्बोहाइड्रेट वाला भोजन लेते हैं जिसमें उचित मात्रा में प्रोटीन विटामिन और खनिज तत्व नहीं होते। इन लोगों में मधुमेह, उच्च रक्त चाप, हृदय और वाहिका रोग और उच्च कोलेस्ट्राल की समस्यायें भी हो जाती हैं। इस स्थिति में सोयाबीन से बने खाद्य पदार्थ अधिक रेशे और अन्य गुणों के कारण कोलेस्ट्राल कम करता है तथा उच्च रक्त चाप और हृदय रोगों को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

गुरु–शिष्य परंपरा

एक दृष्टि

डॉ. शंकरदत्त ओझा, लखनऊ

आज के पल्लवग्राही बुद्धिजीवी समाज में 'गुरुशिष्य तत्व' तथा गुरु–शिष्य परम्परा का सही अर्थ समझा ही नहीं जा रहा है। एक ओर 'गुरु' ज्ञानजन्य यश एवं भौतिक गुरुदक्षिणा की कामना से ग्रस्त है, दूसरी ओर 'शिष्य' भी गुरु को मान–सम्मान देना भूलता ही जा रहा है, जबकि निःस्वार्थ भाव से गुरु के उपदेश का प्रचार–प्रसार कर उसके ज्ञान–सम्प्रदाय का नाम बढ़ाना ही उसका कर्तव्य है।

इस पृष्ठभूमि में आज वस्तुनिष्ठपरक होकर विचार करें तो हम यह अनुभव करेंगे कि प्राचीन भारत की सात्विक गुरुशिष्य परम्परा को पुनरुज्जीवित कर आयुर्वेद शास्त्र का प्रचार–प्रसार कर इस लुप्त होती विद्या को गम्भीर शोध द्वारा आज की रोगग्रस्त मानवता की सेवा में और भी उपयोगी ढंग से लगाया जा सकता है। इससे न केवल शिष्य का बहुमुखी विकास होगा प्रत्युत उस विशिष्ट गुरु–परिपाटी तथा विशिष्ट पद्धति में नयी उपलब्धियां मिलेंगी तथा दरिद्र-नारायण की सेवा में गुणगत अभिवृद्धि हो सकेगी।

आयुर्वेद ही क्या, ज्ञान–विज्ञान के किसी भी क्षेत्र में गुरु एवं शिष्य दोनों ही अपरिहार्य, अविभाज्य एवं अनिवार्य तत्व हैं। मनुष्य की बौद्धिक उन्नति पुस्तकीय ज्ञान से भले ही हो जाय, पर उसका आत्मिक विकास गुरु की वेदी पर ही होता है। आत्मिक अभ्युदय हेतु एक पराबाह्य शक्ति की आवश्यकता होती है। किसी आध्यात्मिक विषय पर कोई भी विद्वान एक सफल व्याख्यान तो दे सकता है किन्तु आध्यात्मिक जीवन जीने में वह शून्य हो जाता है।

आत्मा को स्फुटित करने वाली ऊर्जा हमें किसी अंतर आत्मा से ही मिल सकती है। जिस इतर आत्मा से यह ऊर्जा प्राप्त होती है वह 'गुरु' तथा जिस आत्मिक को यह ऊर्जा मिलती है वह 'शिष्य' कहलाता है। इस ऊर्जा के सम्प्रेषण के लिए प्रथम आवश्यकता तो यह है कि जिस आत्मा से यह ऊर्जा संचारित होती है उसमें ऊर्जा को अपने पास से दूसरे में सम्प्रेषित कर सकने की क्षमता हो तथा दूसरी आवश्यकता यह है कि जिसे यह ऊर्जा सम्प्रेषित की जाय उसमें उसे ग्रहण करने की क्षमता हो। बीज सजीव हो तथा आधारभूत खेत भलीभांति तैयार हो तभी उसका अंकुरण संभव होता है। ज्ञान का वक्ता अलौकिक हो तभी गुरु–शिष्य दोनों आत्मिक उत्थान कर सकते हैं। ऐसे ही लोग वास्तविक गुरु होते हैं तथा ऐसे ही लोग वास्तविक शिष्य भी होते हैं।

जब ज्ञान के प्रति अटूट छटपटाहट व अपूर्व पिपासा पैदा होगी तभी ग्रहीता शिष्य को समर्थ सद्गुरु मिल सकेगा। सतत व अभूतपूर्व उत्कट पिपासा शिष्य की पात्रता को यथार्थता प्रदान करती है और तभी शक्तिदाता गुरु भी प्राप्त होगा। अतः शिष्य को निरन्तर यह आत्मनिरीक्षण करते रहना चाहिए कि उसमें ज्ञान के प्रति वह सही पिपासा उठी है अथवा नहीं। यदि नहीं तो वह ढोंगी शिष्य होगा। इसी प्रकार शक्तिदाता गुरु के क्षेत्र में भी कठिनाई है। बहुत से ऐसे गुरु हैं, जो अज्ञानी होते हुए भी अपने को सर्वज्ञ समझते हैं। ऐसे पण्डितम्मानी गुरु, शिष्यों के भार को ढोने में उसी प्रकार असमर्थ सिद्ध होते हैं जैसे एक अन्धा दूसरे अन्धे को अपने कंधों पर ढोकर ले जाने में असमर्थ सिद्ध होता है। *'अन्धेनैन नीयमाना यथान्धाः'*। ऐसे गुरु अपने साथ शिष्य को भी गर्त में गिरा देते हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि गुरु को पहचानें कैसे? एक योग्य शिष्य ही योग्य गुरु को पहचान सकता है। सूर्य को प्रकाशित करने के लिए किसी दीपक को जलाने की आवश्यकता नहीं पड़ती, वह तो स्वयं प्रकाश है। सूर्य की प्रखर किरणें प्रकृति की अन्तरतम गुहाओं, कन्दराओं तक को भेद देती है, सत्य को उद्घाटित कर देती है। एक योग्य गुरु ठीक ऐसा ही होता है। सद्गुरु ज्ञान के मर्म को भलीभांति जानता है। वह मर्मज्ञ होता है। वह मात्र शास्त्र के शब्दजाल का शाब्दिक अर्थ लगाने में पण्डित नहीं होता। वह उस शब्द में छिपे परम तत्व 'सत्य' को पहचानने की क्षमता रखता है। शब्दार्थ खोजने वाले भोग में उलझ जाते हैं। उनका ज्ञान निर्वाणदायक नहीं होता–

'वाग्वैखरी शब्दझरी शास्त्रव्याख्यान कौशलम्।
वैदुष्यं विदुषां तद्वद् भुक्तये न तु मुक्तये।।'

विवेक चूड़ामणि, ५८

अर्थात् शब्दयोजना की विभिन्न रीतियां, सुन्दर भाषा, व्याख्यान की विभिन्न शैलियां शास्त्रों के अर्थ समझाने के अनेक रूप – ये सब विद्वानों के आनन्द भोग की वस्तुएं हैं, इनसे किसी को मुक्ति नहीं मिल सकती। संसार के समस्त सद्गुरु दिखावे के इस मार्ग के अनुयायी नहीं रहे हैं। ये गुरु 'तत्व' की, सत्य की, यथार्थ की सीधी–सादी व्याख्या करते हैं, पाण्डित्य–प्रदर्शन नहीं करते।

अच्छे गुरु का अन्य लक्षण है, निष्पाप होना। प्रायः लोग यह कहते पाये जाते हैं, 'हम गुरु के व्यक्तित्व को क्यों देखें हमें तो उनके ज्ञानोपदेश से मतलब रखना चाहिए। गुरु में तो बौद्धिक ज्ञानमात्र की आवश्यकता है। हमें यदि भौतिक शास्त्र सीखना है तो गुरु में सदाचार ढूंढने की क्या आवश्यकता है ?' बिना आत्मिक उन्नति प्राप्त किये भी मात्र बुद्धिबल से गुरु भौतिक शास्त्र का उपदेश कर सकता है। यह मत पाश्चात्यों का हो सकता है, भारतीय अवधारणा इससे नितान्त भिन्न है। हमारी अवधारणा में निष्पापत्व ही आध्यात्मिक सत्य है। हृदय की पवित्रता, निर्मलता गुरु का निज गुण व उसकी पहचान है।

गुरु की तीसरी आवश्यकता 'उद्देश्य' की है। गुरु को मात्र प्रेम के उद्देश्य से शिष्य को दीक्षा देनी चाहिए, किसी भी स्वार्थ के उद्देश्य से प्रेरित होकर नहीं। हमारी अवधारणा में गुरु ईश्वर का ही मूर्तरूप होता है। इतर शास्त्रों की तरह आयुर्वेद की आत्मा भी 'आध्यात्मिक' धरातल पर जन्म लेती है। आयुर्वेद स्वयं में सम्पूर्ण ज्ञान है, विज्ञान है, सत्य है, जीवन की एक श्लाध्य शैली है। धन्वन्तरि, आत्रेय, अग्निवेश, चरक, सुत्रुत, दृढ़बल तथा वाग्भट आदि मनीषी भारतीय मनीषा के समर्थ गुरु व आचार्य थे। ईश्वर ने प्राणिमात्र को जन्म दिया, किन्तु इन आचार्यों ने 'आयुर्वेद' की दिव्य-दृष्टि देकर प्राणि-मात्र में व्याप्त शिष्यों के समक्ष सत्य उद्घाटित किया तथा उन्हें प्रकृति-पुरुष के दर्शन कराये, उन्हें अभिनव जीवन शैली प्रदान की तथा भोग एवं योग के मंजुल मार्ग पर प्रवृत्त करने की अभूतपूर्व शिक्षा दी।

जिस प्रकार गुरु में कुछ लक्षणों का होना आवश्यक है, उसी प्रकार शिष्य में भी कुछ लक्षण होने चाहिए। पवित्रता, यथार्थज्ञान-पिपासा और धैर्य ये शिष्य के अनिवार्य लक्षण हैं। ज्ञानप्राप्ति हेतु सही पिपासा होनी चाहिए। यह पिपासा मात्र चाहना नहीं है। इसके लिए जन्म-जन्मान्तर तक संघर्ष करना पड़ सकता है। जो शिष्य इस यथार्थ पिपासा को पा लेता है, उसे ही योग्य गुरु मिल सकता है। यह गुरु-शिष्य परंपरा यदि इस दिशा में अग्रसर हुई तो वह हम सबके लिए अत्यन्त मंगलसूचक कदम होगा और हम इस सनातन शास्त्र की सेवा में अपना योग देकर स्वयं को कृतकृत्य समझेंगे।

यह सम्मेलन सर्वतोभावेन सफल हो, गुरु निःस्वार्थ भाव से शिष्य पर यथावत् ज्ञानवर्षा करता रहे तथा शिष्य अतृप्त ज्ञान पिपासा लेकर कृतज्ञ भाव से गुरु की शिक्षा के योग्य बने, उनके शिष्य होने का गौरव अनुभव करें, यही परमेश्वर से हमारी प्रार्थना है। आज गुरु शिष्य दोनों को चाहिए कि प्राचीन गुरुकुल परम्परा में दिये गये निम्नांकित दीक्षान्त-उपदेश को वे सदा याद रखें एवं तद्वत् आचरण करें-

'यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि त्वयोपास्यानि, नो इतराणि।'

स्वयं बनाएं

वासावलेह

इसके निर्माण के लिये निम्न द्रव्यों की आवश्यकता होती है:-

१. वासा (अडूसा) पंचांग १ किलोग्राम

२. गुड़ अथवा चीनी १ किलोग्राम

३. घी १५० ग्राम

४. पीपल (छोटी) का चूर्ण १०० ग्राम

निर्माण विधि : वासा (अडूसा) के पूरे पौधों (पंचांग) के छोटे-छोटे टुकड़े कर उसे किसी कड़ाही अथवा भगोने में रखकर उसमें १६ गुना जल मिलाकर आग में धीमे-धीमे पकायें। १ किलोग्राम वासा पंचांग में १६ किलोग्राम पानी मिलाते हैं। पकते-पकते जब जल की मात्रा लगभग १ किलोग्राम रह जाय तो उसे उतार कर छान लें। इस छने हुये काढ़े में १ किलोग्राम चीनी अथव गुड़ मिलाकर उसकी चाशनी बनायें। पुनः चाशनी में २५० ग्राम घी डालकर उस समय तक गाढ़ा करें जब तक चाशनी की एक बूँद को किसी ठण्डे बर्तन में डालने से वह गाढ़ा होकर चाटने लायक न हो जाए।

जब वह ठंडा होने पर गाढ़ा हो जाय तब उसमें छोटी पीपल का १०० ग्राम चूर्ण मिलाकर किसी साफ बर्तन में रख लें। यही वासावलेह है।

उपयोग व मात्रा

इसे सभी प्रकार की खाँसी व साँस की तकलीफों में प्रयोग किया जाता है।

बच्चों में - एक चम्मच दिन में दो बार।

बड़ों में - दो चम्मच दिन में तीन बार।

अनुपान : गुनगुना दूध अथवा जल।

गंधक द्रव

सामग्री : नैनुआ गंधक - १०० ग्राम, कटनी का चूना - १०० ग्राम

बनाने की विधि - सबसे पहले नैनुआ गंधक तथा चूना दोनों को अलग-अलग कूट-पीस-छानकर दोनों की बराबर मात्रा अलग-अलग लेकर लगभग २ लीटर पानी में दोनों को मिलाकर भगौने या कनस्तर में घोल बना लेते हैं फिर इस को आँच पर चढ़ाकर उबालते हैं। बीच-बीच में उसको लकड़ी से चलाते रहते हैं।

लगभग दो घंटे उबालने के बाद जब घोल का रंग नारंगी हो जाता है तो बर्तन को आँच से उतार लेते हैं। जब यह घोल ठंडा हो जाय तो साफ कपड़े द्वारा छानकर खाली साफ शीशी में भर लेते हैं व डाट लगाकर रख लेते हैं।

औषधीय गुण व उपयोग

सूखी खुजली वाले रोग में गंधक द्रव लेकर बराबर मात्रा में सरसों का तेल मिलाकर लगाने से लाभ होता है एक दो सप्ताह तक लगातार प्रयोग करते रहने पर पुरानी खुजली जड़ से समाप्त हो जाती है।

सावधानी : ध्यान रहे कि गंधक द्रव कटी हुई त्वचा व फोड़े-फुंसी पर न लगाएं। इसे आँख व मुख से भी बचाकर लगायें।

समस्या समाधान

इस स्तंभ के अंतर्गत हमारे पाठकों की स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के समाधान प्रबुद्ध वैद्य एस. ए. खान सुझाते हैं। परन्तु यह उचित ही है कि यदि पाठकों को समस्या के लक्षणों के उचित संप्रेषण आदि किसी भी कारण से लाभ न हो तो उन्हें किसी कुशल स्थानीय चिकित्सक से मिलकर समस्या को ठीक से समझ कर ही उसकी चिकित्सा करनी चाहिए।

संपादक

समस्याः पिछले ६ महीने से गर्दन घुमाने में चौबीस घंटे तकलीफ

श्री गोपाल गौड़, उदयपुर

निम्न औषधि एवं आहार विहार का सेवन करें:-

(१) योगराज गुग्गुल वटी, रस सिन्दूर १०० मिलीग्राम, शुंठी चूर्ण ३ ग्राम की एक मात्रा बनायें। १-१ मात्रा तीन बार मधु से लें। ऊपर से दशमूलारिष्ट २० मिली में समान पानी मिलाकर पियें।

(२) भोजन के बादः चित्रकादिवटी, विषमुष्टी वटी पानी से प्रातः, शाम लें।

(३) दशांग लेप चूर्ण को पानी और पंचगुण तेल के साथ पका लें, गाढ़ा होने पर एरंड और धतूरे के पत्ते पर सहन करने योग्य गरम गर्दन पर हर शाम बाँधे। नित्य यह प्रक्रिया करें। एक मास तक प्रयोग करें, हमें परिणाम से अवगत करायें।

परहेजः चावल, दालें और लाल मिर्च न खायें, तेजी से या दबा कर गर्दन की मालिश न करें। ठंड से बचें, ऐसी कोई व्यायाम न करें जिसमें गर्दन पर दबाव पड़ता हो।

समस्याः सत्रह वर्ष की आयु के पुरुष को तीन वर्ष से कब्ज की शिकायत

श्री मो. वारिस अली, रोहतास

(१) सप्ताह में एक बार ५० ग्राम एरण्ड तेल गरम दूध में मिलाकर रात में सोने से पहले पियें। अगले दिन पेट साफ हो जायेगा, फिर हल्का भोजन करें।

(२) चित्रकादिवटी, लशुनादि वटी १-१ गोली दो बार भोजन के बाद गरम जल से लें।

(३) ३ ग्राम असगन्ध चूर्ण, ३ ग्राम हरीतकी चूर्ण नित्य दूध से शाम को लें लेकिन एरण्ड तेल वाले दिन छोड़ कर लें।

परहेजः चावल, सभी दालें, लाल मिर्च, पत्तेदार साग, कड़वा तेल, तली हुई एवं गरम चीजें न खायें।

पथ्यः गेहूँ की रोटी, परवल, लौकी, तुरई, घी, दूध मक्खन, मट्ठा, बैंगन, अदरख, लहसुन, प्याज, हींग, जीरा, अजवाइन, गोभी, गाजर, अंगूर, सेब।

समस्याः टांसिल सूजी हुई, दर्द और थूक निगलने में कष्ट होना।

सुश्री साधना शुक्ला, उज्जैन

(१) कफकेतु रस १०० मिलीग्राम, रसमाणिक्य १०० मिलीग्राम, नारदीय लक्ष्मीविलास रस एक वटी, प्रवाल भस्म १०० मिलीग्राम, एक-एक मात्रा बनायें। एक मात्रा समान मधु एवं अदरख स्वरस के साथ दिन में तीन बार लें।

(२) कैशोर गुग्गुल १, आरोग्यवर्धिनी वटी भोजन के बाद गरम जल से लें।

(३) गुनगुना पंचगुण तेल हल्के-हल्के, गले के ऊपरी भाग पर मल कर फिर तवे पर बालू की पोटली गरम कर प्रातः, शाम सेंके।

(४) ठंडा व फ्रिज का पानी न पिएं, गुनगुने जल का ही प्रयोग करें।

परहेजः चावल, उड़द की दाल, गुड़, तली चीजें, दही, अधिक दूध, मिठाईयाँ, भिंडी, केला, सेब, खटाई, अचार, खीर, घी, डालडा

पथ्यः गेहूँ ज्वार की रोटी, दालें मट्ठा, अदरख, लहसुन, जीरा, हींग, अजवाइन, मेथी, हल्दी, काली मिर्च, मधु, कड़वा तेल, बैंगन, तुरई, लौकी, करेला और मेथी का साग विशेष रुप से खायें।

समस्याः पायरिया की ऐलोपैथिक दवाओं से एलर्जी।

श्री गोपाल, सिंडीकेट बैंक, आन्ध्र प्रदेशः

कृपया निम्न मंजन स्वयं तैयार कर प्रयोग करें जो पाइरिया के लिए अति लाभदायक है। तवे पर फुलाई फिटकरी ६ ग्राम, तवे पर फुलाया हुआ चौकिया सुहागा ४ ग्राम, आग पर भूना हुआ तूतिया १ ग्राम, सेंधा नमक ६ ग्राम, सोडा बाई कार्ब १० ग्राम सब को महीन पाउडर बना कर रख लें। उंगली से मसूढ़ों पर धीरे-धीरे मलें। मसूढों की सूजन, पायरिया के दर्द आदि में लाभदायक है।

(२) कड़वा तेल (सरसों) में सेंधा नमक घोटकर रख लें। उंगली में लगा कर मसूढ़ों पर हल्के मालिश करें।

परहेजः अधिक खटाई, मिर्च, गुड़, मीठा, नमक, दही, कड़वा तेल, उड़द की दाल, तली हुई चीजें, खादिराष्टि २० मिली, उतना ही पानी मिलाकर खाने के बाद महीनों निरंतर सेवन करें, तब हमें बतायें अपना हाल।

समस्याः माताजी के पैरों में दर्द और चलने-फिरने में असमर्थता।

श्री अजय गोरे, बांदा।

गोरे जी, आप अपनी माताजी को निम्न औषधि सेवन करायें:

(१) सिहनाद गुग्गुलु एक वटी, रस सिन्दूर १०० मिलीग्राम, विषमुष्टी वटी एक, छोटी हरड़ का चूर्ण तीन ग्राम मिलाकर एक पुड़िया बनायें एक-एक मात्रा आधा चम्मच घृत और एक चम्मच मधु के साथ तीन बार दें। खाली पेट यह औषधि कभी न दें।

नित्य शाम को सोने से पहले ३-४ जवा लहसुन चबाकर गुनगुना जल लें या मेथी चूर्ण एक चम्मच गुनगुने पानी के साथ लें।

हरसिंगार की पत्तियों का काढ़ा बनाकर दिन में २०-२० मिली, की मात्रा में पांच बार लें।

संभालू की पत्ती या दशमूल क्वाथ को उबाल कर पैरों का बफारा कराए। खाट के नीचे बर्तन रखकर ऊपर पैर रखकर बफारा दें।

परहेजः चावल, दालें, दही, लाल मिर्च, पत्तेदार साग।

पथ्यः मेथी, लहसुन, अदरख, हींग, जीरा, तेल, घी, मक्खन, दूध, गेहूँ की रोटी, बैंगन, तुरई, लौकी, गोभी, मट्ठा, दूध, अजवाइन।

स्त्रीहितकारिणी

झोपड़पट्टीवासी महिलाओं की यह संस्था १९६४ से बम्बई के झोपड़पट्टी निवासियों के लिए कार्य कर रही है। इसने झोपड़पट्टी निवासियों के सहयोग से अपने क्षेत्र में सराहनीय उपलब्धियां भी प्राप्त की हैं। यह संस्था मातृत्व एवं बाल स्वास्थ्य, परिवार नियोजन, अनौपचारिक शिक्षा और महिला साक्षरता, बालवाडियां तथा महिलाओं के अतिरिक्त आर्थिक अर्जन के क्षेत्र में भी कार्य कर रही है। इस संस्था में मुख्यतः स्थानीय कार्यकर्ता विशेषकर महिलायें कार्यरत हैं।

स्त्रीहितकारिणी ने परिवार नियोजन को महिला और बाल स्वास्थ्य से प्रभावी ढंग से जोड़ा है इसके लिये उसने अन्य सरकारी कार्यकर्ताओं से अलग छवि बनाने का प्रयास किया है, और आम जनता, विशेषकर महिलाओं से संवाद विकसित किया है।

पहले आम जनता उन्हें शौकिया स्वयंसेवी अथवा चुनाव अभ्यर्थी समझती थी। महिलाओं के मन में परिवार नियोजन कार्यक्रम के प्रति सरकारी प्रलोभन का ही आकर्षण था। १९८४ तक स्त्रीहितकारिणी ने इस भ्रम को दूर कर अपने कार्यक्रम को १६,००० परिवारों तक विस्तृत किया जिनकी कुल जनसंख्या १,००,००० थी।

संस्था ने अपने कार्य का संगठन करने के लिये प्रत्येक ४०० परिवारों पर एक स्वास्थ्य कार्यकर्ता और इसी तरह ५० स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं पर एक दल नेता और पांच नेताओं पर एक निरीक्षक नियुक्त कर रखा है। कार्यकर्ताओं को ७५.०० रु. नाम मात्र भत्ता और दल नेताओं को इससे दुगना दिया जाता है पर अधिकतर कार्यकर्ता सामाजिक सम्मान के लिए इस कार्य में प्रवृत्त हैं। कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण भी दिया जाता है ताकि वह अपना कार्य बेहतर ढंग से कर सकें। हां कार्यकर्ता शिक्षा और आय बढ़ाने के कार्यक्रम भी चलाते हैं। परामर्श, जांच और दवा के लिये प्रति बच्चे से २५ पैसे और वयस्कों से ५० पैसे लिये जाते हैं। स्वास्थ्य कार्यकर्ता महाराष्ट्र में प्रचलित पौष्टिक खाद्य 'उसल' के पैकेट भी वितरित करते हैं। २५ स्वास्थ्य केन्द्र पांच वर्ष की उम्र से कम बच्चों के लिये विशेष रूप से चलाये जा रहे हैं। बच्चों का टीकाकरण तथा महिलाओं को परिवार नियोजन की सलाह दी जाती है।

स्त्रीहितकारिणी ७ से १५ वर्ष के बच्चों के लिये निःशुल्क केन्द्र तथा १२ बालवाड़ियां भी चलाती है। इसके अतिरिक्त इसके द्वारा शराब पीने की कुप्रथा के विरुद्ध महिलाओं और पुरुषों में जागृति लाई जा रही है। महिलाओं की आय बढ़ाने के लिये व्यावसायिक प्रशिक्षण कोर्स और अन्य बचत योजना चलाई गई है। आजकल तो स्त्रीहितकारिणी को देश और विदेश की संस्थाओं तथा महाराष्ट्र सरकार की ओर से आर्थिक सहायता मिलती है।

अधिक जानकारी के लिये निम्न पते पर लिखें

डॉ. इन्दुमती पारिख
परियोजना निदेशक
स्त्रीहितकारिणी, लोकमान्य नगर,
काका साहेब गाडगिल मार्ग
दादर, मुंबई– ४०००२५

स्वादिष्ट और पौष्टिक
भारतीय व्यंजन

भारत वर्ष के भोज्य पदार्थ सारे संसार में अपने अनूठे स्वाद के लिए काफी ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। सेहत के प्रति जागरुकता के इस युग में भोज्य पदार्था का चुनाव प्रायः हम मौसमी ताजी–सब्जियों और आसानी से उपलब्ध पदार्थों के आधार पर करते हैं। जाड़े का मौसम तरह–तरह के स्वादिष्ट व्यंजनों का सेवन करने का समय हैं। इस मौसम में व्यंजन बनाना, खिलाना और खाना अच्छा लगता है। यहां कुछ पौष्टिक व स्वादिष्ट व्यंजन बनाने की विधियां दी जा रही हैं।

पत्ता गोभी वाली चने की दाल

सामग्रीः एक पत्ता गोभी (छोटा), एक टुकड़ा अदरख, एक कटोरी चने की दाल, लहसुन की चार–पांच कलियाँ, आधा चम्मच हल्दी, एक छोटा चम्मच पिसी हुई लाल मिर्च, आधा चम्मच गरम मसाला, कटी हुई हरी धनिया, स्वादानुसार कटी हरी मिर्च, देशी घी एक बड़ा चम्मच, नमक स्वादानुसार

विधिः पत्ता गोभी को एकदम बारीक काट लें, चने की दाल को धोकर कुकर में डालकर आंच पर चढ़ा दें। कुकर में पानी के साथ थोड़ा गरम मसाला भी डाल दें। दाल गल जाने के बाद कुकर का ढक्कन खोलकर दाल का पानी सुखा लें। फिर किसी खुले बर्तन में थोड़ा सा घी डालकर पिसी हुई अदरख और लहसुन हल्का भूनें, अब इसमें पत्ता गोभी व दाल डालकर थोड़ी देर तक चलाएँ। फिर ठक्कन ढक कर हल्की आंच पर पका लें। पत्ता गोभी गलने के बाद उसमें हरी मिर्च, हरी धनिया व गरम मसाला गरमकर डाल दें।

चिउड़े के कट्लेट्स

सामग्रीः चिउड़ा २५० ग्राम, तीन आलू, तीन स्लाइस ब्रेड, दो प्याज, चार कटी हुई हरी मिर्च, थोड़ी सी अदरख, तलने की तेल, थोड़ी कटी हुई हरी धनिया, स्वादानुसार नमक।

विधिः चिउड़े को पानी में भिगोकर निकाल लें। उबला आलू छिलका निकाल कर ठीक से मसल लें। फिर कटी हुई हरी मिर्च, कटी धनिया की पत्ती आलू व चिउड़े में मिला दें। ब्रेड स्लाइस को भी पानी में डुबाकर पानी निचोड़ लें। बने हुए मिश्रण को स्लाइस में मिलाकर हाथ से कटलेट बनाकर तेल में हल्का लाल तल लें। फिर इसे किसी चटनी के साथ खाने के लिए दें।

सेब पुडिंग

सामग्रीः चार सेब, एक चम्मच नींबू का रस, स्वादानुसार नमक, एक बड़ा चम्मच मैदा, डेढ़ चम्मच पिसी शक्कर, चुटकी भर बेकिंग पाउडर, २बड़ा चम्मच मक्खन, तीन चौथाई कप पानी।

मीठी क्रीम के लिए सामग्रीः एक कप क्रीम, चार बड़ा चम्मच पिसी शक्कर, चार–पांच बूंद वैनीला की।

विधिः सेब छील लें और उसके छोटे–छोटे टुकड़े काट लें। इसके बाद किसी खुले बर्तन में तीन चौथाई पानी डाल कर नमक और नींबू के साथ पकाएं। ध्यान रखें कि आंच धीमी होनी चाहिए। अब इसमें मैदा, बेकिंग पाउडर, पिसी शक्कर और तीन–चौथाई बड़ा चम्मच मक्खन मिला दीजिए। इस मिश्रण को ज्यादा चलाने की आवश्यकता नहीं है। इसके बाद बचा हुआ मक्खन ऊपर से डाल दीजिए। ओवन को १५०° सेंटीग्रेड ताप पर गरम करने के बाद इस मिश्रण को १५ मिनट तक के लिए रख दीजिए यह पक कर भूरी हो जाएगी। इसके बाद पके हुए मिश्रण को फ्रिज में रख दीजिए।

अब आप पिसी शक्कर और वैनीला की कुछ बूंद लेकर क्रीम में इस तरह मिला दें जिससे कि वह गाढ़ा पेस्ट बन जाए। इस पुडिंग्र को ठंडा, क्रीम के साथ दोपहर या रात के खाने के बाद दें।

अखरोट–केला क्रीम

सामग्रीः चार पके हुए केले, एक बड़ा चम्मच नीबूं का रस, ४० ग्राम शक्कर, चार–पांच कटे अखरोट, १०० ग्राम क्रीम

विधिः शक्कर और नींबू के रस को अच्छी तरह मसले हुए केले में मिला दीजिए। अब इसमें कटे हुए अखरोट मिला कर उसमें अच्छी तरह क्रीम को मिला दीजिए। इसके चार बराबर भाग करके खायें।

वैद्य बदलूराम रसिक आस्ट्रेलिया में सम्मानित

जीवनीय संपादक मंडल के मानद सदस्य, लखनऊ के प्रसिद्ध वैद्य माननीय बदलू राम रसिक को आस्ट्रेलिया में आयुर्वेद विषय पर भाषण देने के लिए आमंत्रित किया गया था। वैद्य रसिक को इससे पहले यूरोप के कई देशों और अमरीका में भी आयुर्वेद के प्रचार प्रसार के लिए सम्मानित किया जा चुका है। इस उपलब्धि के लिए जीवनीय परिवार की ओर से वैद्यराज रसिक जी को हार्दिक बधाइयां।

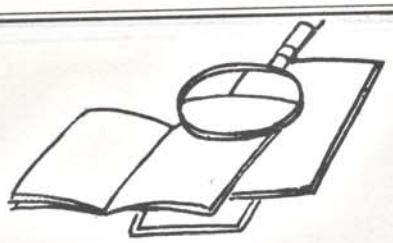

पत्र-पत्रिकाओं से

औषधीय पौधों के लिए जीन बैंक

औषधीय और सुगंधित पौधों को संरक्षित रखने के लिए भारत सरकार के जैव तकनीक विभाग ने तीन राष्ट्रीय जीन बैंकों की स्थापना की है। इस दिशा में देश में चल रहे बिखरे प्रयासों को इस जीन बैंक की स्थापना से काफी प्रोत्साहन मिलेगा। ये तीनों जीन बैंक लखनऊ, नयी दिल्ली और तिरुवनंतपुरम में स्थापित किये जायेंगे।

इन राष्ट्रीय जीन बैंकों की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य औषधिजनक और सुगंधित पौधों की प्रजातियों को सुरक्षित रखना है। इन जीन बैंकों में उन पौधों की प्रजातियां रखी जायेंगी जिनका अस्तित्व खतरे में है या जिनका औषधीय उपयोग है, या जिनका प्रसार मुश्किल है या वे पौधे जिनका शोध एवं विकास की दृष्टि से खास महत्व है। व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण पौधों की प्रजातियों को भी सुरक्षित रखा जायेगा।

पौधों की दुर्लभ प्रजातियां लखनऊ की केन्द्रीय औषधि एवं सुगंधित पौध संस्थान, राष्ट्रीय पौध जीन संसाधन ब्यूरो, नयी दिल्ली और उष्णकटिबंधीय वनस्पति उद्यान और शोध संस्थान, तिरुवनंतपुरम में रखी जायेंगी।

इन सभी जीव बैंकों को मूलभूत आवश्यकताओं से सुसज्जित किया जा रहा है। ये बैंक न केवल अपने निर्धारित क्षेत्रों का सर्वेक्षण करेंगे बल्कि एक राष्ट्रीय आंकड़ा भंडार बनाने के लिए पौधों की प्रजातियों का संग्रहण, वर्गीकरण आदि भी करेंगे। संरक्षण के लिए तकनीशियनों का प्रशिक्षण आदि राष्ट्रीय जीन बैंक ही करेगा। विकासशील देशों को भी इस क्षेत्र में प्रशिक्षण दिया जायेगा।

नवभारत टाइम्स, १४-१२-९३

भारतीय चिकित्सा पद्धतियों की उपेक्षा

केन्द्र सरकार भारतीय चिकित्सा पद्धतियों आयुर्वेदिक, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथिक की आठवीं पंचवर्षीय योजना में भी घोर उपेक्षा कर रही है। केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री बी. शंकरानंद जो भारतीय चिकित्सा पद्धतियों की बार-बार वकालत करते हैं, वे भी इन पद्धतियों को सुविधाएं देने में कतरा रहे हैं। आठवीं पंचवर्षीय योजना में स्वास्थ्य के मद में कुल १८०० करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया है, जबकि इसमें से भारतीय चिकित्सा पद्धतियों और होम्योपैथी को केन्द्रीय सहायता के मद में मात्र ८८ करोड़ रुपये रखा गया है। केन्द्र सरकार का पूरा जोर अंग्रेजी एवं आधुनिक चिकित्सा पद्धति पर है। पिछली संसदीय सलाहकार समिति की बैठक में स्वास्थ्य मंत्रालय के दस्तावेज में भी माना गया है कि भारतीय चिकित्सा पद्धति खास कर आयुर्वेद और होम्योपैथी देश में काफी लोकप्रिय है। इनके कोई दुष्परिणाम भी प्रायः नहीं होते। फिर भी इन पद्धतियों को बढ़ावा नहीं दिया जा रहा है।

स्वास्थ्य मंत्रालय के एक दस्तावेज के मुताबिक अंग्रेजी दवाओं के पंजीकृत डाक्टरों की संख्या मात्र तीन लाख ६५ हजार है, जबकि आयुर्वेदिक एवं होम्योपैथ डाक्टरों की संख्या इससे अधिक (चार लाख ८६ हजार छह सौ तिहत्तर) है। बाकी यूनानी एवं सिद्ध डाक्टरों की संख्या भी लगभग ४० हजार है। फिर भी केन्द्र सरकार अंग्रेजी (आधुनिक) चिकित्सा पद्धति को लगातार असंतुलित ढंग से बढ़ावा दे रही है।

देश में अंग्रेजी दवाओं के लगभग ११ हजार २४५ अस्पताल, लगभग २८ हजार दवाखाने और २१,६४१ प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र हैं। दूसरी तरफ घोर उपेक्षा के शिकार आयुर्वेद के लगभग डेढ़ हजार और लगभग ढाई सौ होम्योपैथिक अस्पताल हैं। आयुर्वेदिक और होम्योपैथी के दवाखानों की संख्या भी लगभग अठारह हजार है। इनमें से ज्यादातर स्वयंसेवी संस्थाएं ही चलाती हैं। देश के किसी भी हिस्से में आयुर्वेदिक या होम्योपैथी के प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र नहीं है। कुछ चिकित्सा केन्द्रों में एलोपैथिक डाक्टर नहीं होने की अवस्था में इन पद्धतियों के डाक्टरों को रखा गया है। आठवीं योजना में भी इन सुविधाओं पर कोई ध्यान नहीं दिया गया है।

यहां तक कि आयुर्वेदिक और होम्योपैथिक कालेजों के सरकारीकरण एवं नये सरकारी कालेज खोलने के बारे में भी ज्यादा उत्साह नहीं दिखाया गया है। देश के ५० प्रतिशत आयुर्वेदिक, यूनानी और सिद्ध कालेज निजी हैं। साथ ही देश के ९८ में ७१ होम्योपैथिक कालेज निजी हैं। निजी कालेजों में शिक्षकों और प्राध्यापकों का वेतनमान विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के मापदंडों से काफी कम है। देश की ३२ शिक्षण संस्थाएं आयुर्वेदिक, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथिक पद्धतियों में स्नातकोत्तर की डिग्री देती हैं, पर केन्द्र सरकार की सहायता मात्र कुछ ही संस्थाओं को मिलती हैं। केन्द्रीय आर्थिक सहायता एवं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की सहायता गुजरात आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय और महाराष्ट्र के कुछ कालेजों को मिलती है। ज्यादातर आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक और सिद्ध चिकित्सा पद्धति के अस्पताल तमिलनाडु, केरल, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश में हैं।

मधुसंचय

पर्यावरण और कीटनाशक

हाल में झाबुआ जिले के कई गांवों से राष्ट्रीय पक्षी मोरों की अकालमृत्यु के समाचार मिले हैं। स्थानीय ७० वर्षीय वन्य-प्रेमी वच्छराज बाफना का मानना है कि मोरों की अकाल मृत्यु इस क्षेत्र में फसलों पर छिड़की गयी कीटनाशक दवा के कारण ही है। चिकित्सकों के अनुसार उनकी मृत्यु सोयाबीन की पत्तियों पर छिड़की गई कीटनाशक दवा से हुई है। बेचारे मोरों को क्या पता कि अब पत्तियां भी उनके खाने लायक न रही। पर क्या यह सब हमारे साथ भी नहीं हो रहा है। जो कीटनाशी कभी हमने मलेरिया से बचने के लिये मच्छरों को मारने के वास्ते व फसलों को कीड़ों से बचाने के लिए हवा, पानी व मिट्टी पर छिड़के थे, वे मांस, मछली, अण्डों, दूध, मक्खन, घी, सब्जियों व अनाज के रास्ते फिर हम तक पहुंच रहे हैं। इस दिशा में हुए अध्ययन बताते हैं कि इन सब में डी.डी.टी. व बी.एच.सी. जैसे खतरनाक कीटनाशकों की मात्रा निर्धारित सुरक्षित सीमा से कहीं अधिक है। इन कीटनाशकों को 'इकॉलॉजिकल बूमरैंग' कहते हैं।

द्वितीय विश्वयुद्ध के पहले प्राकृतिक कीटनाशियों को प्रयोग किया जाता था। इनमें तम्बाकू से प्राप्त निकोटीन व लेड आर्सेनिट प्रमुख थे। हमारे देश में नीम का इस हेतु प्रयोग वर्षों से होता आ रहा है, जिसे हम लगभग भुला भी बैठे थे। अचानक पश्चिमी विद्वानों ने बताया कि नीम तो एक बढ़िया कीटनाशी है, जो पर्यावरण की दृष्टि से सुरक्षित भी है। आजकल फिर हमारा ध्यान नीम के गुणों की ओर गया है। कीटनाशियों के बारे में संयुक्त राष्ट्र संघ की एक रिपोर्ट पर ध्यान देना आवश्यक है। कीटनाशियों के असावधानीपूर्वक प्रयोग के तीव्र और जीर्ण सह-प्रभाव होते हैं, जिनमें गम्भीर बीमारी से लेकर मृत्यु तक शामिल है। ये मनुष्य, जानवरों, मछलियों और पक्षियों तथा फसलों का सर्वनाश तक कर देते हैं।

कीटनाशकों से होने वाली मृत्यु के आंकड़ों में भारत तीसरे नम्बर पर हैं। कीटनाशकों के इस्तेमाल का असर आँखों व दिमाग पर भी पड़ता है। जिन इलाकों में इनका प्रयोग ज्यादा होता है, वहां लकवे के रोगी ज्यादा मिलते हैं।

हमारे यहां कीटनाशियों के उपयोग के मामले में पांच राज्य सबसे आगे हैं पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र, आन्ध्रप्रदेश व तमिलनाडु। ये राज्य देश की कुल खपत का ५० प्रतिशत इस्तेमाल करते हैं। अनुमान है कि १९९० में १ लाख बीस हजार टन से ज्यादा कीटनाशी प्रयोग में लाए गए। जिन प्रमुख उद्देश्यों को लेकर कीटनाशी बनाए गए थे, लगता है, वह काम भी अब उनसे नहीं हो रहा। फलमक्खी (ड्रोसोफिला) की कई प्रजातियां डी.डी.टी. से प्रतिरोधी हो चुकी हैं। समय के साथ डी.डी.टी. कई कीटों पर असरहीन हो चुका है। मच्छर भी उनमें से एक हैं।

इन कीटनाशकों की एक खासियत यह है कि अप्राकृतिक होने के कारण ये विघटित नहीं होते और वसा में जमा होते चले जाते हैं। पर्यावरण में लम्बे समय तक बने रहने के कारण ये झरनों, नदियों व समुद्र तक पहुंच चुके हैं। यहां तक कि जो डी.डी.टी. कभी मच्छरों को मारने के लिए घरों की दीवारों पर छिड़का गया था, सुदूर अंटार्कटिका पर मिलने वाले पेंग्विन के शरीर में देखा गया।

कीटनाशी पदार्थों के अवशेषों को लेकर हमारे यहां कम ही काम हुआ है, पर जो नतीजे सामने आए हैं, वे चौकाने वाले हैं। भारतीय पशु विज्ञान अनुसंधान परिषद द्वारा किए गए एक अध्ययन में मांस, मछली, अण्डे और दूध के सभा नमूनों में डी.डी.टी. पाया गया। दिल्ली, उत्तर प्रदेश आंध्र प्रदेश व पंजाब के नमूनों में कोई भी ऐसा नहीं था, जिसमें डी.डी.टी. न हो। कीटनाशियों के कहर से मां का दूध भी अछूता नहीं रहा। नमूनों में डी.डी.टी. तथा बी.एच.सी. पाये गये। अध्ययन के अनुसार मां का दूध पीने से बच्चा सुरक्षित मात्रा से २१ गुना ज्यादा डी.डी.टी. और बी.एच.सी. पीता है।

स्रोत फीचर्स, अक्तूबर १९९३

सर्वाधिक कुपोषित और गरीब स्त्रियाँ

संयुक्त राष्ट्र संगठन की रिपोर्ट में कहा गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में महिला शक्ति का समुचित उपयोग होना चाहिए। गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन के लिए बाध्य लगभग एक अरब की आबादी में भी महिलाओं की संख्या ५६ करोड़ ४० लाख है। यानी पुरुषों से अधिक। यह दो दशक पहले के मुकाबले ४६ प्रतिशत अधिक है। महिलाएं दुनिया भर में सर्वाधिक गरीब श्रेणी में भी आती हैं। यदि महिलाओं को संसाधन उपलब्ध कराए जाते हैं तो चौंकाने वाले परिणाम सामने नजर आ सकते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने अपनी एक रिपोर्ट में महिलाओं की गरीबी तथा मृत्युदर अधिक होने का कारण कृषि पर आधारित समाज की पर्याप्त आमदनी न होना बताया गया है। भारत की आधे से अधिक आबादी भूख तथा कुपोषण से पीड़ित है। रिपोर्ट में कहा गया है कि संयुक्त अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों से दस वर्ष की अवधि में इस समस्या से छुटकारा पाया जा सकता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने कहा है कि खासतौर पर विकासशील देशों में महिलाओं में रोग और मौतों में हो रही वृद्धि का मुख्य कारण कुपोषण ही है। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि महिलाओं में आयोडीन लौह की कमी और अपर्याप्त विटामिनों के कारण मानसिक विकृति, अंधता और मौत जैसी समस्याएं बढ़ी हैं।

स्वतंत्र भारत - ४.१.९४

जीव विज्ञान समाचार

गर्भ निरोधक गोलियो से एड्स और कैंसर

वैज्ञानिकों ने यह आशंका व्यक्त की है कि ये गोलियां एड्स तथा गले के कैंसर को बढ़ावा देती हैं। कनाडा के मैनीहोट विश्विद्यालय के प्रोफेसर डा. फ्रैन्क प्लूमर ने अपने अध्ययनों से निष्कर्ष निकाला है कि गर्भ निरोधक गोलियों के सेवन से एड्स विषाणु 'एच.आई.वी.', से संक्रमित होने का खतरा बढ़ता है। नैरोबी में हुए अध्ययनों से भी पता चलता है कि गर्भनिरोधक गोलियां सेवन करने वाली महिलाओं में एच.आई.वी. के संक्रमित होने की आशंका अधिक होती है। एड्स संक्रमण अन्य कारणों जैसे यौन व्यवहारों, कंडोम के इस्तेमाल तथा यौन संचारित रोगों इत्यादि पर भी निर्भर करता है।

इन गोलियों के इस्तेमाल से गर्भ ग्रीवा के स्तर में परिवर्तन हो जाना है जिससे इन गोलियों के इस्तेमाल करने वाली महिलाओं के शरीर के रक्त प्रवाह में एच.आई.वी. का प्रवेश आसान हो जाता है। एक दूसरा प्रमुख कारण यह है कि ये गोलियां शरीर के रोग प्रतिरक्षण तंत्र में परिवर्तन कर देती हैं। यह तंत्र ही हमारे शरीर को विभिन्न रोगों के विषाणुओं और जीवाणुओं के हमले से बचाता है। एड्स विषाणुओं का संक्रमण होने से इस तंत्र की कोशिकाएं नष्ट हो जाती हैं और शरीर एक के बाद एक करके अनेक रोगों की गिरफ्त में फंस जाता है।

अध्ययनों से भी यह पाया गया है कि गर्भ निरोधक गोलियों के लम्बे समय तक सेवन करने तथा ३६ वर्ष की उम्र से पूर्व स्तन स्तर कैंसर से ग्रस्त होने की आशंका के बीच संबंध है। दुनिया भर में छः करोड़ से अधिक महिलाएं तथा विकासशील देशों में तीन करोड़ ८० लाख महिलाएं, गर्भनिरोधक गोलियों का इस्तेमाल करती हैं। चिकित्सकों के अनुसार सिर्फ कंडोम के इस्तेमाल से एड्स तथा यौन संचारित अन्य रोगों से बचा जा सकता है। यौन संचारित बीमारियां (एस.टी.डी.) एच.आई.वी. के संक्रमण का बड़ा कारण है।

जून १६, १९९३ स्वतंत्र भारत

बांझ महिलाएं मां बन सकेंगी

महिलाओं में बांझपन दूर करने की यह तकनीक जयपुर के सवाई मानसिंह मेडिकल कालेज के प्रोफेसर ने ईजाद की है, जिसके जरिए अब कोई भी बांझ महिला मां बन सकेंगी। मां बनने में आने वाली रुकावट को डिंबवाहिनी में इस नयी तकनीक, बलून ट्यूबोप्लास्टी के जरिए दूर किया जा सकता है। डॉ. गोपाल काबरा जयपुर में शरीर संरचना विज्ञान के प्रोफेसर हैं। उन्होंने बताया कि फिलहाल उनकी यह तकनीक प्रयोगात्मक तौर पर अमेरिका में ही उपयोग में लायी जा रही है। वहां इसकी सफलता तथा भारतीय महिलाओं पर होने वाले प्रभाव के अध्ययन के बाद ही इसे भारत में लागू किया जाएगा। श्री काबरा के मुताबिक हर साल दुनिया में कोई एक करोड़ महिलाएं बांझ हो जाती हैं। उनके अनुसार पहले संक्रमण में १३, दूसरे में ३१ और तीसरे में ७६ प्रतिशत महिलाएं बांझपन की शिकार हो जाती हैं।

फिलहाल ऑपरेशन करके रुकावट वाले भाग को निकाल कर डिंबवाहिनी को वापस जोड़ा जाता है। लेकिन इसी नयी तकनीक के मुताबिक एक पतली सी नली गर्भाशय के मुंह के ऊपर से डिम्बवाहिनी में सरका दी जाती है। और बाद में इस नली पर लगे गुब्बारे को फुलाकर डिम्ब की रुकावट खोल दी जाती है। श्री काबरा के अनुसार यह क्रिया पूरी तौर पर धमनियों में होने वाली रुकावट को दूर करने वाली बाईपास सर्जरी की तरह होती हैं। इसी प्रक्रिया के तहत महिलाओं के गर्भाशय की तकलीफ को दूर करने के लिए भी डा. काबरा अध्ययन कर रहे हैं।

इस पद्धति से वे महिलाओं के अधिक रक्तस्राव पर शोध कर रहे हैं। अब तक अधिक रक्तस्राव रोकने के लिए ऑपरेशन करके गर्भाशय निकाल दिया जाता है, लेकिन अब इसे इलेक्ट्रॉनिक पद्धति से अंदर ही ठीक किया जाएगा। डॉ. काबरा के मुताबिक हर साल कोई एक लाख महिलाएं भारत में गर्भाशय की तकलीफ के कारण बेमौत मर जाती हैं।

नवभारत टाइम्स, मार्च १, १९९३

कोलेस्ट्रोल का कम होना घातक है

सेहत की परवाह करने वालों के लिए कोलेस्ट्रोल अरसे से सबसे घृणित पदार्थ रहा है। हाल के अध्ययन से यह बात सामने आयी है कि अच्छे स्वास्थ्य के लिए कोलेस्ट्रोल जरुरी होता है। यही नहीं, कम कोलेस्ट्रोल वालों में मौत का खतरा ज्यादा होता है। कम कोलेस्ट्रोल वालों पर किये गये १९ अध्ययनों का यही नतीजा है।

हर सामान्य आदमी के हर एक डेसीलीटर खून में १६० से १९९ मिलीग्राम कोलेस्ट्रोल होना चाहिए। २०० मिलीग्राम से ज्यादा कोलेस्ट्रोल वाले लोगों में दिल की बीमारी की आशंका ज्यादा होती है। उसी तरह १६० मिलीग्राम से कम कोलेस्ट्रोल वालों के विभिन्न बीमारियों से मरने का अंदेशा १४ से २२ फीसदी ज्यादा होता है। इनमें कैंसर होने की आशंका सामान्य की तुलना में १९ फीसदी ज्यादा होती है। यही नहीं, ऐसे लोगों में पेट की बीमारी ज्यादा होती है और कम कोलेस्ट्रोल वाले आत्महत्या भी ज्यादा करते हैं। तो कोलेस्ट्रोल कम करने वाली दवा लेते वक्त डाक्टर से सलाह जरूर ले लें।

स्वतन्त्र भारत, जून १६ १९९३

अनुसंधान समाचार

एड्सग्रस्त वेश्याओं का पुनर्वासः केवल लफ्फाजी

इंडियन कांउसिल फार मेडिकल रिसर्च (आई सी एम आर) की ताजा रपट के अनुसार बंबई की ३० प्रतिशत वेश्याओं में एड्स के विषाणु पाये गये हैं। आइ सी एम आर के पूर्व महानिदेशक श्री ए. एस. पेंटल ने एक संवाददाता सम्मेलन में कहा कि विश्व स्वास्थ्य संगठन के आंकलन के अनुसार बंबई में हर तीसरी गर्भिणी में प्रसव पूर्व जांच करने पर आज एड्स के विषाणुओं के पाये जाने की संभावना है।

बेलासिस रोड स्थित नगरमहापालिका रतिज रोग चिकित्सालय के चिकित्सक डॉ. मनियर, आइ सी एम आर की रिपोर्ट को अतिरंजना मानते हैं। उनका कहना है कि आइ सी एम आर ने उन्हीं के कार्यक्षेत्र में सर्वेक्षण किया है, जहां लगभग ६०,००० वेश्याएं हैं और जो बंबई का एड्स के नाते सबसे खतरनाक इलाका है।

रतिज रोग चिकित्सालय में अब तक १८०० पुरुष मरीजों की जांच की है जिनमें से ९५% अविवाहित थे। उनमें से १६४ के शरीर में एच आइ वी विषाणु के ऐंटीबाडीज पाये गये। यह संख्या दस प्रतिशत से भी कम है। इन सभी को रतिज रोग थे। इसी प्रकार १३०० वेश्याओं की जांच करने पर उनमें से १० वेश्याओं में एड्स धनात्मक था।

डा. मनियर ने आइ सी एम आर की घोषणा को जनता में अनावश्यक आतंक फैलाने की संज्ञा दी है जिसके अनुसार दस वर्ष बाद नगर की लगभग एक करोड़ जनसंख्या का लोप हो जायगा। क्योंकि वर्तमान समय में हमारे समाज में विवाहेत्तर यौन संबंधों की बाढ़ हो रही है।

आइ सी एम आर द्वारा जनसाधारण के सांयोगिक नमूनों की जांच से दो प्रतिशत धनात्मकता पता चला है, जो कि डॉ. मनियर की राय में एक गंभीर मामला है। अब आइ सी एम आर के निर्देशानुसार रक्त बैंक उस खून को त्याग देते हैं जो एच आई वी पाजिटिव होता है। किंतु सरकार की ओर से ऐसे एच आई वी वाहकों को रतिज रोग चिकित्सालयों में जाकर चिकित्सा कराने के लिए बाध्य नहीं किया जाता।

दो वर्ष पूर्व राज्य सरकार ने आदेश दिया था कि प्रत्येक सरकारी अस्पताल में उचित सावधानी के साथ एड्स के रोगियों की चिकित्सा की जानी चाहिए। जबकि केंद्र सरकार ने देश भर में एड्स के दस चिकित्सा केन्द्र खोले हैं। एक ऐसा ही केंद्र जे. जे. अस्पताल में भी खुला है। इस प्रकार के केंद्रों के खुलने के बाद अब साधारण डाक्टर एड्स के मरीजों को खुद न देखकर इन केंद्रों में जाने की सलाह देंगे।

वस्तुतः एड्स चिकित्सालय रतिज रोग अस्पताल का एक विभाग होना चाहिए। जो चिकित्सक एड्स की चिकित्सा करने से इनकार करे उसका लाइसेंस रद्द कर दिया जाना चाहिए। साथ ही डाक्टरों और अन्य चिकित्सा कर्मियों को एड्स सम्बन्धी सघन प्रशिक्षण देने की भी आवश्यकता है।

प्रशिक्षण का जो प्रयास किया जा रहा है वह गलत और मंहगा है। प्रशिक्षण के लिए डाक्टरों को अमरीका या यूरोप न भेजकर आस्ट्रेलिया भेजा जा रहा है। जबकि आस्ट्रेलिया की अपेक्षा यूरोप-अमरीका में एड्स की विशेषज्ञता गहरी है। आस्ट्रेलिया तो इस ज्ञान में भारत से भी कहीं पीछे है।

डा. मनियर की राय में डाक्टरों को आस्ट्रेलिया की बजाय अफ्रीका भेजना बेहतर होगा। लंदन स्थित कामनवेल्थ सचिवालय ने डाक्टरों का एक दल गठित किया है जो अफ्रीका में एड्स का प्रशिक्षण प्राप्त करेगा।

डा. मनियर ने नयी बंबई में एड्स के रोगियों के लिए आवासीय गृह निर्माण योजना का भी विरोध किया है जहां के आवासियों को आजीवन रु.१५००/- मासिक पेंशन भी मिलेगी। भारत एक निर्धन देश है जो हर वेश्या को उसकी आमदनी की क्षति के एवज में मासिक वेतन नहीं दे सकता। फिर इस बात की क्या गारंटी है कि ऐसी पेंशन भोगी वेश्याएँ ऐच्छिक कामाचार में लिप्त न होंगी।

दुबला होना बांझपन का कारण

खूबसूरत बनने और माडलिंग के चक्कर में आज हर ओर महिलाओं में दुबला-होने की होड़ लगी हुई है। इसके लिए एरोबिक्स, डायटिंग और न जाने किन-किन चीजों का सहारा लिया जा रहा है। परन्तु हाल ही में किये गये अनुसंधानों से पता चला है कि जरूरत से ज्यादा दुबला होना बांझपन को जन्म दे सकता है। यह चेतावनी ब्रिटिश मेडिकल जर्नल के ताजा अंक में दी गयी है।

चिकित्सकों के अनुसार रजःस्राव शुरू करने के लिए किसी भी लड़की के शरीर में उसके वजन की १७ प्रतिशत चर्बी होनी आवश्यक है। रजःस्राव का चक्र नियमित होने तथा संतानोत्पादन के लिए शरीर के कुल वजन का २२ प्रतिशत वसा होना जरुरी है। हेलसिंकी स्थित यूनिवर्सिटी सेन्ट्रल हास्पिटल के शोधकर्ताओं ने इस नतीजे पर पहुंचने के लिए १९२० के बाद के माडलों को अध्ययन किया और पाया कि १९५० के बाद के माडल खतरनाक रुप से दुबले हैं।

स्वतंत्र भारत -४ अगस्त, १९९३

अनुवासन

पं. काशीनाथ गोपाल गोरे

महर्षि सुश्रुत के अनुसार *'अनुवसन्नपि न दूषयति अनुदिवसमपि दीयते इत्यनुवासनम्'* अर्थात् जो कभी दोष उत्पन्न नहीं करता या प्रतिदिन दिया जा सकता है, उसे अनुवासन कहते हैं। अनुवासन एक उपचार है जो स्नेह अर्थात तेल या घी से किया जाता है। घी या तेल की बस्ति को अनुवासन कहते हैं। इसका प्रयोजन है शरीर का स्नेहन। अनुवासन को स्नेहविधि भी कहते हैं जिसमें तेल, घी, वसा और मज्जा का प्रयोग होता है।

अनुवासन में मुख्यतया तेल का उपयोग होता है। स्थावर अनुवासन में तेल अथवा तैलयुक्त पदार्थ का प्रयोग करते हैं और जंगम अनुवासन में घी, वसा या मज्जा का प्रयोग करते हैं। वात और कफ विकारों के लिए तेल श्रेष्ठ है और पित्त विकार के लिए घी श्रेष्ठ है। वैसे उचित संस्कारों द्वारा अनुवासन में प्रयुक्त होने वाले सभी द्रव्य समस्त विकारों में उपयुक्त माने जाते हैं। मात्राबस्ति या उत्तर बस्ति अनुवासन के ही प्रकार कहे जा सकते हैं। संक्षेप में रुक्षता, दीपाग्नि और वात पीड़ित रोगियों के लिए अनुवासन उपयुक्त होता है। गुल्म, पेट फूलना, वातरक्त, अतिसार, शूल, जीर्णज्वर, प्रतिश्याय, शुक्रदुष्टि, वातदोष, मलावरोध, मूत्राश्मरी, रजोनाश आदि रोगों में यह लाभप्रद है। भूखे, पांडुरोगी, कामला रोगी, प्रमेह, कफोदर, ऊरुस्तंभ, मेदपीड़ित, मद्यपी, विषबाधित, अतिस्यूल, हस्तिपाद, गजगंड, गंडमाला, कृमि आदि से पीड़ित रोगियों के लिए अनुवासन उपयुक्त नहीं माना जाता। मध्यमवयीन मनुष्य के लिए छः पल की मात्रा श्रेष्ठ, तीन पल मध्यम और डेढ़पल अल्प मात्रा बताई गई है। इसी हिसाब से मात्रा का निर्णय करना चाहिए।

रेचन के बाद सात दिन बीतने पर सामान्य आहार लेने की स्थिति आने पर अनुवासन देना चाहिए। अभ्यंग अर्थात् तेल से मालिश कर गरम पानी से स्नान कर उचित आहार लेना चाहिए। तत्पश्चात थोड़ा टहलने के बाद शौच और मूत्र विसर्जन करें। तत्पश्चात निरूह बस्ति के समान अनुवासन दिया जाय। अनुवासन दिये जाने पर पीठ के बल थोड़ी देर लेटना चाहिए ताकि स्नेह सारे शरीर में फैल जाय। रोगी को बिना विशेष हलचल के लेटे रहना चाहिए। तीन या चार प्रहर के बाद अनुवासन बस्ति वात और मल के साथ वेग से निकलती है। रास्ना, देवदार, बेल, सौंफ, पुनर्नवा, गोखरू, अरणि आदि अनुवासन के लिए उपयोगी औषधियां बताई गई हैं।

बृहस्पति और रोग

पं. काशीनाथ गोपाल गोरे

बृहस्पति या गुरु स्वभावतः शुभ ग्रह है अतः प्रायः शुभ कारक होता है। सामान्यतया गुरु के स्थान सम्बन्ध अथवा दृष्टिसम्बन्ध से अन्य अशुभ ग्रहों का अशुभत्व भी कम हो जाता है। कुछ विद्वानों के मतानुसार गुरु के सम्बन्ध से अशुभ स्थान अथवा अशुभ ग्रह का बल क्षीण होने के कारण उसका फल परिवर्तित हो जाता है। गुरु यदि उच्च का अर्थात् कर्क राशि में, स्वक्षेत्री अर्थात धनु या मीन में हो, स्वनवांश अथवा कई नवांश में हो और त्रिकोण अर्थात् लग्न, पंचम या नवम में हो तो अत्यन्त शुभ हो जाता है। परन्तु गुरु का शुभत्व भावों, अशुभ ग्रहों की दृष्टि पर निर्भर करता है। षष्ठ स्थान में स्थित गुरु रोग की दृष्टि से अनिष्टकारक है। रक्त विकार, प्लुरिसी, गुल्म, गांठें, फोडे, फुन्सी, यकृतविकार और शरीर में स्थूलता ये गुरु के दुष्प्रभाव से उत्पन्न होने वाले रोग हैं।

विभिन्न राशियों मे स्थित गुरु का प्रभाव निम्नानुसार होता है:-

मेष- बेहोशी, मस्तिष्क में रक्ताधिक्य, मस्तिष्करोग

वृषभ- सन्धिशूल, गले में विकार, यथेच्छ आहार-विहार से उत्पन्न कष्ट।

मिथुन- श्वास नलिका में विकार, दमा, पार्श्वशूल, रक्त विकार, फुप्फुस संबंधी रोग।

कर्क- स्थूलता, अजीर्ण।

सिंह- ज्वर, पार्श्वशूल, हृदयविकार, रक्तचाप।

कन्या- विष्टम्भ, रक्त विकार, यकृतविकार, यकृत संबंधी रोग यथा पाण्डुरोग।

तुला- मूत्र संबंधी कष्ट, वृक्क विकार, मधुमेह।

वृश्चिक- मूत्र-वीर्य विकार, गुदा में कष्ट यथा अर्श, प्रजनन अंगों में कष्ट।

धनु- कमर से नीचे कष्ट, गृध्रसी, पैरों में सूजन और वेदना, सन्धिवात।

मकर- चर्मरोग, रक्तचाप, कटिशूल।

मीन- रक्ताल्पता, रक्त का विभिन्न स्थानों में एकत्र होना, गांठें।

श्रद्धांजलि

हमें बड़े दुख के साथ कहना पड़ रहा है कि जीवनीय पत्रिका से एक लम्बे समय से सम्बद्ध वैद्य सैय्यद मोहम्मद अतीक जी अब हम लोगों के बीच नहीं रहे। सम्पूर्ण जीवनीय परिवार उस दिवंगत आत्मा की शांति के लिए भगवान से प्रार्थना करता है। वैद्य अतीक ने कैंसर जैसे भयानक रोग के उपचार के लिए जीवनपर्यन्त अनवरत प्रयास किया। अतीक जी न केवल लखनऊ के बल्कि भारतवर्ष के एक प्रसिद्ध चिकित्सक थे जिन्होंने कैंसर के अतिरिक्त अन्य रोगों का भी सफल उपचार किया।

वैद्य अतीक का असमय निधन न सिर्फ जीवनीय परिवार के लिए वरन आयुर्वेद चिकित्सा क्षेत्र के लिए भी अपूरणीय क्षति है।

पुस्तक समीक्षा

स्वास्थ्य की स्थानीय परम्पराएं : एक परिचय

लो.स्वा.प.सं.स. (लोक स्वास्थ्य परम्परा संवर्धन समिति) मोनो ग्राफ नं. १

प्रकाशन तिथि अगस्त, १९९१

मूल्य ४० रु. प्रति

(लो. स्वा. प. सं. स व जीवनीय के सदस्यों के लिए ३५ रु.)

प्राप्ति स्थान जीवनीय ई-१११/२४९, सेक्टर-एच, अलीगंज, लखनऊ-२२६०२०

मूल लेखक ए.वी. बालसुब्रमणियन्

हिन्दी रूपान्तरकार पं. माधवाचार्य एवम् डॉ. नरेंद्र मैहरोत्रा

जिस प्रकार स्थानीय लोक-संगीत, लोक-नृत्य, तथा लोक-कथा-साहित्य परम्पराओं के रुप में पीढ़ी दर पीढ़ी चलते रहते हैं, लोक-औषधियों एवम् रोगोपचार की विविध पद्धतियों की जानकारी आज भी विभिन्न स्थानीय समाजों में पूर्वजों की अलिखित धरोहर के रूप में जीवित है और इसका उपयोग होता है। आज विज्ञान के युग में ऐसी लोकोपचार विधियों का लिखित संकलन तथा उनका वैज्ञानिक आंकलन निश्चित रूप से अत्यंत आवश्यक है।

प्रस्तुत पुस्तक में अनेक रोगों अथवा दुर्घटना-जनित चिकित्सीय दशाओं के उपचार में प्रयुक्त होने वाली विभिन्न लोक-औषधियों अथवा चिकित्सा विधियों का वर्णन है। उन स्थानों का उल्लेख भी है जहाँ यह शायद हजारों वर्षों से प्रचलित हैं, और आज भी प्रयोग में लाई जाती हैं। इनमें निम्नलिखित रोग/अवस्थायें विशेष तौर पर उल्लेखनीय हैं : विषाकृत (बिच्छू अथवा सर्प-दंश-जनित), पीलिया, नाड़ी-मंदता, अतिसार, आधाशीशी दर्द, पेट का दर्द या जलन, दमा आदि। पुस्तक में लोक-चिकित्सा की कुछ ऐसी विधियों का भी वर्णन है जिनके लिए विशेषज्ञों की आवश्यकता है, उदाहरणतः मर्म चिकित्सा, हड्डियाँ बैठाना आदि।

उपरोक्त चिकित्सीय औषधियों / विधियों के अतिरिक्त, पुस्तक में आहार के गुणों तथा प्रभाव संबंधी मान्यताओं, दिनचर्या संबंधी, घरेलू उपचार एवम् भोजन संबंधी, तथा अन्य स्वास्थ्य संबंधी लोकोक्तियों तथा कसरतों व योग आदि की उपयोगिता पर भी खासी विस्तृत चर्चा है।

स्वास्थ्य संबंधी विविध लोक मान्यताओं का संकलन एक सराहनीय प्रयास है जिसके लिए लो.स्वा.प.सं.स., लेखक एवम् हिन्दी रूपान्तरकार तीनों ही बधाई के पात्र हैं। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान (जिसे लेखक प्रायः पाश्चात्य चिकित्सा प्रणाली की संज्ञा देता है) के मंहगे साधनों के बावजूद यह लोकोपचार साधन आम जनता को लाभ पहुंचाते ही हैं। लेकिन अधिकांश लोक मान्यताओं को तर्कसंगत अथवा वैज्ञानिक सिद्ध करने के लेखक के प्रयास समीक्षक के विचार में परंपरा के पक्ष में पूर्वाग्रह से ग्रसित हैं। ऐसे लोकोपचारों के पक्ष में जो तर्काधार दिये गये हैं उनमें उनकी प्रभावोत्पादकता सिद्ध करने के लिए कोई आँकड़े प्रस्तुत नहीं किये गये हैं, केवल प्राचीन आयुर्वेदिक लेखकों के श्लोक मात्र प्रस्तुत किये गये हैं। यह शायद मान लिया गया है कि ऐसे श्लोक स्वयं में पूरी तरह वैज्ञानिक हैं। अत्यंत मौलिक प्रश्न उठाना होगा कि विज्ञान आखिर है क्या ? किसी भी जानकारी, मान्यता अथवा संकल्पना, को 'वैज्ञानिक', 'अर्ध-वैज्ञानिक' अथवा 'अवैज्ञानिक' का विशेषण देने के लिए क्या मानदंड अपनाने चाहिए ?

विज्ञान का सबसे बड़ा गुण (अथवा अवगुण) है कि इसकी कोई भी मान्यता अंतिम नहीं है। समय के साथ निरंतर नये-नये तकनीकी साधन विकसित होते रहते हैं जिनसे पुरानी मान्यताओं तथा संकल्पनाओं का पुनः आंकलन होता रहता है। इससे उनका स्वरुप बदलता रहता है। आज का विज्ञान इसी प्रक्रिया द्वारा हजारों वर्षों में अपने आधुनिक स्तर तक पहुंच सका है और इसी प्रक्रिया से निरंतर आगे बढ़ रहा है। यह केवल किसी देश विदेश अथवा संसार के भाग विशेष (पूर्व, पश्चिम, उत्तर या दक्षिण) की सम्पत्ति नहीं है, इसका विकास सहयोगिक अंतर्राष्ट्रीय प्रयास द्वारा हुआ है। यह हमारा दुर्भाग्य है कि हम कुछ ऐतिहासिक कारणों से कभी इस वैज्ञानिक दौड़ में (अन्य देशों की अपेक्षा) बहुत आगे होने के बावजूद, पिछले वर्षों में काफी पीछे छूट गये हैं। लेकिन केवल इसीलिए आधुनिक विज्ञान की उपलब्धियों की ओर नकारात्मक रुख अपनाने का संमीक्षक की दृष्टि से कोई औचित्य नहीं है। लेखक के ऐसे पूर्वाग्रह की झलक पृष्ठ ६७-६८ पर एक प्रश्नोत्तर के रूप में प्रस्तुत किसी अनामित आयुर्वेद शास्त्री का यह तर्क है, जिसमें २००० वर्ष पुराने आयुर्वेदिक ज्ञान की तुलना 'हीरे' और आधुनिक चिकित्सीय ज्ञान की तुलना जल्दी सड़ जाने वाली मछली से की है। इसके विपरीत तथ्य यह है कि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की एक उल्लेखनीय विशेषता यह रही है कि इसमें प्रायः हर वैज्ञानिक क्षेत्र में होने वाली महत्वपूर्ण खोजों का समावेश समय-समय पर होता रहा है। उदाहरण के तौर पर भौतिक शास्त्र की खोज, एक्स रे, रसायनिक शास्त्र की संज्ञाहरण करने वाले रसायनों की खोज, रोग पहचान साधनों में रसायनिक परीक्षणों, रेडियोएक्टिव प्रतिरक्षक विधियों तथा आधुनिक बायोटेक्नालॉजी संबंधी विधियों का उल्लेख किया जा सकता है, यद्यपि ऐसे उदाहरण अनगिनत हैं।

समीक्षक यह नहीं कहता कि इस पुस्तक में तथा प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रंथों में वर्णित जानकारी में कुछ भी ऐसा नहीं है जो चिकित्सा विज्ञान में संपूर्ण विश्व का बन सकता है। भारतीय योग, चीन के एक्यूपंक्चर आदि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के द्वार पर पहुंच चुके हैं और इन जैसा और भी ऐसा बहुत कुछ हमारे परम्परागत ज्ञान में संभवतः है जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण और वैज्ञानिक परीक्षण-विधियों द्वारा परखे जाने पर देश और विदेश दोनों के ही लिए कल्याणकारी सिद्ध हो सकेगा। अतः आवश्यकता इस बात की है कि हमारा यह परंपरागत ज्ञान आधुनिक विज्ञान से सक्रिय वार्तालाप में जुड़े।

डा. प्रेम सागर, लखनऊ

जीवनीय विज्ञान पहेली

हमारे पिछले अंक में प्रकाशित पहेली पर प्राप्त प्रतिक्रियाओं से हमारा उत्साह बढ़ा है हमें और अधिक शुद्ध हलों की प्रतीक्षा है और हम इसको और अधिक रोचक बनाने का संकल्प करते हुए प्रस्तुत करते हैं।

प्रथम पुरस्कार : दो वर्ष तक निःशुल्क जीवनीय।

द्वितीय पुरस्कारः एक वर्ष तक निःशुल्क जीवनीय।

नियम और शर्तें

- पहेली का हल भेजने का कोई शुल्क नहीं देना होगा।
- पहेली का हल कोई भी पाठक भेज सकता है।
- पहेली का हल साधारण डाक से भेजना होगा।
- एक व्यक्ति को एक ही पुरस्कार मिल सकेगा।
- सर्वशुद्ध हल न आने पर पुरस्कार देने या न देने का अधिकार सम्पादक को होगा।
- सम्पादक का निर्णय हर स्थिति में मान्य होगा। किसी तरह की शिकायत सम्पादक से ही की जा सकेगी।
- किसी भी तरह का कानूनी दावा, कहीं भी दायर नहीं किया जा सकेगा।
- यहाँ छपे पृष्ठ को भरकर सामान्य डाक द्वारा भेजी गयी पूर्ति ही स्वीकार्य होगी।

कृप्या सही का निशान (√) उन वाक्यों पर लगायें जो सही हों। जहाँ विवरण देने के लिए कहा गया है, वहाँ विवरण भरें।

१. कृपया सही का निशान लगाएँ

(१) हेमन्त ऋतु में

(क) पित्त कुपित होता है।

(ख) वात का शमन होता है।

(ग) पित्त का शमन होता है।

(घ) रोग बढ़ते हैं।

(२) हेमन्त ऋतु में सेवन करें।

(क) पौष्टिक

(ख)लघु

(ग)कषाय

(घ)अम्ल

(ङ)मधुर

२. कृपया खाली स्थान भरें।

हेमन्त ऋतु में त्वचा ..... हो जाती है अतः ..... लाभदायक होती है।

३. ऋतुसन्धि की सामान्यतः क्या अवधि होती है ?

४. गर्दन में कितनी हड्डियाँ होती हैं ?

५. गर्दन के दर्द के प्रमुख कारण बताएँ

(क)

(ख)

(ग)

(घ)

(ङ)

(च)

(छ)

६. सूर्य नमस्कार के अन्तर्गत कौन-कौन से योगासन हो जाते हैं ?

७. 'स्वभाव बल प्रवृत्त' रोग कौन से हैं ?

८. पदार्थ की षड्विध अवस्थाएं क्या हैं?

(क)

(ख)

(ग)

(घ)

(ङ)

(च)

९. वृद्धावस्था में कौन से दोष प्रबल होते हैं ?

१०. 'पत्थरचटा' के बारे में संक्षेप में विवरण दीजिएः-

रतिज रोगों की विभीषिका

आज रतिज रोग सारे संसार की एक गंभीर समस्या है। विगत दो दशकों में रतिज रोगों की संख्या पांच से बढ़कर बीस से अधिक हो गयी है। १९८५ में भारत में दस लाख से अधिक रतिज–रोगियों ने चिकित्सालयों की शरण ली। इनमें से उपदंश के ३०.५%, शैंकर के २५.९%, सूजाक के ८.८% और अगोंनोकोकसी मूत्रमार्ग शोथ के ३.३% मरीज थे। महाराष्ट्र में रतिज रोग सर्वाधिक थे। इसके बाद तमिलनाडु और गुजरात में रोगियों की अधिकता थी।

१८–२५ वर्ष की उम्र वाले युवाओं को रतिज रोग का सर्वाधिक खतरा रहता है। ये रोग विशेष रूप से वेश्याओं के माध्यम से फैलता है। इसके अतिरिक्त यह विधवाओं, तलाकशुदा तथा परित्यक्ताओं, अविवाहित युवतियों और आर्थिक रूप से विपन्न स्त्रियों के लुकछिप कर किये गये यौनाचार से फैलता है।

अविवाहित किशोरों को रतिज रोग विशेष रूप से घेर लेता है। यौन शिक्षा की कमी के कारण पहले पहले अपनी मर्दानगी के विषय में उन्हें संदेह उत्पन्न होता है जिसके निराकरण के लिऐ वे वेश्यालयों में जाते हैं और रतिज रोग अर्जित करते हैं।

स्त्रियां प्रायः रतिज रोगों का इलाज नहीं कराती पुरुष ही कराते हैं। ऐसी स्थिति में संक्रमित किंतु अचिकित्सित स्त्रियों की संख्या बढ़ रही है।

महाराष्ट्र में यह भी देखने में आया है कि सासें अपनी बहुओं के रतिज रोगों को 'गरमी' की संज्ञा देती हैं और इसका दोष चाय और गरम तथा मसालेदार भोजन को देती हैं तथा उन्हें पति के साथ सोने नहीं देती, न ही उन्हें चिकित्सक के पास जाने देती हैं। ऐसी स्थिति में स्त्रियां पर पुरुष के संपर्क में आ जाती हैं और उन्हें भी रोगी बना देती हैं।

रतिज रोगी अपना इलाज भी ठीक से नहीं कराते। अधिकांश रोगी पूर्ण रूप से स्वस्थ होने से पहले ही चिकित्सा छोड़ देते हैं। इससे उनके शरीर में औषध का प्रतिरोध करने की क्षमता पैदा होती है, दवा का असर ही नहीं होता।

इस समस्या का समाधान तभी संभव है जब किशोर किशोरियों को यौन शिक्षा दी जाने लगेगी। इससे उन्हें अपनी मर्दानगी की जांच कराने की आवश्यकता नहीं महसूस होगी और किशोरियों के भी कदम बहकेंगे नहीं।

(स्रोत में एस. बी. मोरनकर)

धूम्रपान से महिलाओं को अधिक खतरा

शोधकर्ताओं ने ३,८६,४०२ सिगरेट न पीने वालों और १,५९,१२४ सिगरेट पीने वालों का सर्वेक्षण किया। हालाकि सिगरेट पीने वाले लोग, न पीने वालों की तुलना में काफी कम उम्र के थे। दो वर्ष की शोध अवधि में, इनमें अपेक्षाकृत ज्यादा मौत हुई। धूम्रपान करने वाली महिलाओं में मृत्यु दर पुरुषों से कहीं ज्यादा थी। तुलनात्मक रूप से सिगरेट पीने वाले पुरुषों में मृत्यु दर ७८ प्रतिशत से ज्यादा थह जबकि महिलाओं में यह प्रतिशत ९२ था। ४६ से ६० वर्ष के बीच की सिगरेट पीने वाली महिलाओं में तो असमय मृम्यु की आशंका ११ प्रतिशत तक पाई गई।

आलू टमाटर खाओ

जिन लोगों को सिगरेट लगातार पीने की आदत पड़ चुकी है किन्तु वे उसे छोड़ना चाहते हैं तो उन्हें अमरीकी वैज्ञानिक डॉ. एडवर्ड डोमिनो की सलाह मान कर सिगरेट की अपनी लत छुड़ाने में मदद मिलेगी। 'न्यू इंग्लैण्ड जर्नल ऑफ मेडिसिन' नामक पत्रिका में डॉ. एडवर्ड ने सुझाव दिया है कि रोज ५० ग्रा. आलू, ८५ ग्रा. पके टमाटर का रस तथा पत्तगोभी का रस ९३ ग्रा. दिन में २ बार नियमपूर्वक सेवन करने पर सिगरेट पीने की इच्छा नही होगी, कारण इनमें 'निकोटिन' तत्व प्राकृतिक रूप से मौजूद है। काफी व्यापक अनुसन्धान और बहुत से लोगों पर परीक्षण कापे के बाद ही डॉ. एडवर्ड ने यह दावा किया है कि सिगरेट की लत आलू, टमाटर और पत्तागोभी खाकर छुड़ाई जा सकती है।

निरोगधाम जनवरी ९४

देश में ढाई करोड़ से ज्यादा लोग फ्लोरोसिस से पीड़ित

देश के करीब १७५ जिलों में ढाई करोड़ से अधिक लोग फ्लोरोसिस से पीड़ित हैं। और फ्लोरोसिस के शुद्धिकरण का कार्य सबसे अधिक प्रभावित करीब १५० जिलों में प्रारम्भ किया जा चुका है तथा वहां जल शुद्धिकरण संयंत्र स्थापित किए गए हैं।

यह बताया यह गया है कि राजस्थान में करीब ९ हजार ७०० गांव फ्लोरोसिस से प्रभावित हैं। डीफेन्स रिसर्च लेबोरेटरी के निदेशक ने बताया कि फ्लोरोसिस के शुद्धिकरण हेतु तकनीक को विकसित किया गया है तथा यह राज्य सरकारों की जिम्मेदारी है कि लोगों को शुद्ध जल वितरित करे। उन्होंने बताया कि लेबोरेटरी द्वारा विभिन्न जिलों में ग्यारह शुद्धिकरण संयंत्रों को स्थापित किया जा चुका है जिनकी ३० हजार लीटर प्रति संयंत्र जल शुद्धिकरण करने की क्षमता है।

नवभारत टाइम्स, १९.१२.९३

कोष्ठबद्धता या कब्ज

वैद्य अशोक कुमार सोनी, चित्रकूट धाम, कर्वी

कोष्ठवद्धता या कब्ज क्या है? इसके उत्पन्न होने के मूलभूत कारण क्या हैं? एवं इसकी सरल घरेलू चिकित्सा क्या है? आदि प्रश्न जिज्ञासा स्वरूप हैं, जिनका समाधान यहां किया गया है। जिस समय मनुष्य की जठराग्नि मंद पड़ जाती है, उसकी भोजन पाचन की क्षमता लगभग नष्टप्राय सी हो जाती है, जिसके परिणामस्वरूप मल का विसर्जन ठीक से नहीं हो पाता, ऐसी अवस्था को "कोष्ठवद्धता" की संज्ञा से विभूषित किया गया है। इसके विभिन्न भाषाओं के पर्यायवाची शब्द भी मिलते है यथा-- संस्कृत में-मंदाग्नि, यूनानी में कब्ज एवं अंग्रेजी में कांस्टिपेशन इत्यादि।

इसके उत्पन्न होने का मूलभूत कारण अग्नि (जठराग्नि/भोजन पाचन की शक्ति) का मन्द पड़ जाना हैं। इसके मन्द होने के कारणों में से कब्ज या कोष्ठबद्धता का मूल रहस्य सामने उठकर आ जायेगा जिससे सदैव के लिए इससे छुटकारा पाया जा सकता है।

अग्निमन्द पड़ जाने का मूल रहस्य यह है कि मनुष्य अपने ओज वीर्य का क्षरण करने में निरन्तर लगा है, जिसके कारण तीनों धातुएं (वात, पित्त, कफ) त्रिदोष में परिवर्तित हो जाती है और शरीर में ये साम्यावस्था में नहीं रह पाती, फलस्वरूप रोगों की जननी मन्दाग्नि उत्पन्न होती है, फलतः मनुष्य के भोजन का सम्यक् पाचन छोटी आँत नहीं कर पाती। परिणामतः महा कष्टदायी कब्ज उत्पन्न हो जाता है। अब पुनः यहां एक विशेष प्रश्न उत्पन्न होता है कि मनुष्य वीर्य या ओज (तेज) का अति मात्रा में क्षरण क्यों करता है? तथा वह कैसे इस पर संयम कर सकेगा? अगर वह ओज के लक्षण पर अधिकार कर ले तो फिर उसे औषधि की आवश्यकता नहीं रह जायेगी। अन्यथा यदि वह ओज के क्षरण की प्रक्रिया को चालू रखेगा और निरन्तर औषधि का सेवन करता भी रहेगा तो भी उसे कोई विशेष स्थायी लाभ नहीं होगा, और वह कब्ज से परे शान ही रहेगा एवं मन्दाग्नि कभी भी उसका पीछा नहीं छोड़ेगी। क्योंकि जिस प्रकार किसी छेददार घड़े में कितनी भी बार जल भरें उसमें वह तब तक नहीं ठहरेगा जब तक उस घड़े का छेद बन्द नहीं कर दिया जाता। यदि वास्तव में स्थायी रूप से जो कब्ज से छुटकारा पाना चाहते है, वे सर्वप्रथम अपने फूटे घड़े का छेद बन्द करें।

मनुष्य अति मात्रा में ओज का क्षरण करने को इसलिए बाध्य होता है कि तामसिक पदार्थों के अतिमात्रा में सेवन से शरीर में काम भड़क उठता है, उस भडके काम की पिपासा शान्ति हेतु वह क्षरण हेतु बाध्य होता है। अगर वह तामस भोजन की मात्रा कम कर दे तो उसे काम पर विजय प्राप्ति का सोपान मिल सकता है। अब पुनः समस्या उठ खड़ी होती है कि जिह्वा स्वाद की चटोरी जो बन गयी है। इसके चटोरपन को कैसे दूर किया जाए? तो सर्वप्रथम यह दृढ़ प्रतिज्ञा करें कि सूर्योदय से पूर्व हम हर हाल में उठ जायेगें तथा स्नानादि नित्यकर्म से निपटकर ईश्वर ध्यान अवश्य करेंगे। फलस्वरूप जिह्वा स्वाद से विमुख होने लगेगी, परिणामतः जो भी उचित भोजन आवश्यक होगा उससे ही संतोष मिल जाएगा। इससे काम पर विजय प्रारम्भ हो जाएगी। परिणामस्वरूप ओज के क्षरण पर भी कमी आएगी, जिससे कब्ज ही क्या अन्य शरीरगत रोग भी नहीं उत्पन्न होंगे। यह ऐसी निःशुल्क, सस्ती घरेलू चिकित्सा है जिसका अभ्यास बालक -वृद्ध, युवा, नर-नारी सभी समानरूप से कर सकते है। तथा इस चिकित्सा में कोई झंझट भी नहीं है और न ही कोई जड़ी आदि की खोज करनी है।

उपर्युक्त दिव्य दैवीयचिकित्सा के साथ साथ एक कार्य और करना भी करना होगा। ध्यान दें - भारतीय योग दर्शन के अनुसार मनुष्य के शरीर में प्राण मन और वीर्य ये तीन प्रधान है, इनमें से किसी भी एक पर भी यदि मनुष्य विजय प्राप्त कर ले तो बाकी दो अपने आप उसके वश में हो जाते हैं। वीर्य से मन प्रधान है और मन से प्राण प्रधान है। वीर्य या मन, साधारणतया वश में होने वाले नही। प्राण अवश्य प्राणयाम के द्वारा वशीभूत हो जायेगा। उस समय मन वीर्य स्वतः शान्त एवं वश में हो जायेगें। जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाले विशेष प्राणायाम है- (१) भस्त्रिका एवं (२) सूर्यभेदी।

इस प्रकार विशेषकर नवयुवक, किशोर, नवयुवतियों, किशोरियों व अधेड़ उम्र के लोग उपर्युक्त निःशुल्क चिकित्सा विशेष स्वतः कर सकते है। हां बालक और अतिवृद्ध जो प्राणायामादिक क्रियाएं नहीं कर सकते हैं उनकी औषधि की योजना करनी ही पड़ेगी। उनके लिए यहां पुराने कब्ज को नष्ट करने वाली गोपनीय सिद्व औषधि यहाँ प्रकाशित करता हूं। घर पर इसे बनाकर सदैव के लिये कब्ज से छुटकारा पाये

हिंगुल (शिगरफ) को लेकर स्त्रीदुग्ध में ८ घन्टे चीनी मिटटी आदि के घिसने वाले क्षरल में घोटें। पश्चात छाया में सुखाकर पुनःसमभाग बिजौरा नीबू के रस में खरल कर रस को सुखाएं और २-२ तोले (२३-२३ ग्राम) की टिकिया बनाकर धूप में अच्छी तरह सुखा लें। अब आधा किलो पके अमलतास के गूदे को अच्छी तरह कूटकर (एक जानकर) एक गोला या चक्का बना लें, उसके बीचों बीच, शिगरफ की 2 तोले की टिकियों को अच्छी तरह फंसा दें, शिगरफ की टिकियां दिखें नहीं। उसके बाद लकड़ी के कोयलों की आँच में इस पूरे पदार्थ का पाचन करें बार-बार पलटते रहे जब यह जाने कि बाहर का सारा भाग जल चुका हैं, मात्र अन्दर भर बाकी है तब उसे निकाल कर ठण्डा होने दें तथा शिगरफ की टिकिया को अच्छी तरह से निकाल लें। यह क्रिया (सात) बार पूर्णतया दोहरानी है। अन्त मे आठवीं बार यही क्रिया आधा किलो मालकांगनी एंव आधा किलो अमलतास के गूदे की सम्मिलित लुगदी में करनी है। एक बार की क्रिया में हल्की आंच से पाचन करने पर उसे 4 घंटे तक का समय लग जाता है। अब शिगरफ की टिकिया को निकालकर २० गुना शोधित भिलावा में इसी तरह कड़ाही में तेज आंच पर पका लें, भिलावों में स्वतः आग लग जाएगी। जब अग्नि शांत हो जाए तब शिगरफ की टिकिया को निकाल कर खरल मे पीसकर (घिसकर) बंद डाटदार कांच की शीशी में भर लें। यह शिगरफ स्वर्णयुक्त सिद्ध चन्द्रोदय की टक्कर लेने वाला तथा तत्काल अपनी शक्ति को प्रगट कर देने वाला है। १ से २ रत्ती की मात्रा में शहद के साथ प्रातः खाली पेट एंव रात्रि को सोते समय चाटें एवं ऊपर से पावभर से आधा किलो दूध लें। यह क्रिया ९० दिन तक लगातार करें। कब्ज सदैव के लिए गायब हो जायेगा तथा जठराग्नि प्रदीप्त होगी। इसके सेवन से

शरीर में नयी स्फूर्ति एंव परमाणविक शक्ति का उदय होता है। फलतः शरीर से आलस्य एंव दीर्घसूत्रता समाप्त हो जाती है। रोगों से लड़ने की क्षमता शरीर में बढ़ जाती हैं। नेंत्र ज्योति बढ़ती है बुद्धि एंव मेघा क्षमता प्रगट होती है। कफ विकार का नामोनिशान तक नही रहता है। धातुपुष्ट हो जाती है। शरीर बलवान तथा दृढ़ बनता है।

भिलावा शोधन की अति उत्तम एवं अति सरल विधि

बाजार आदि से भिलावा के पके फलों को लाकर उनको गर्म जल से धो लें। धूल मिटटी आदि से साफ कर ठंडे पानी में छोड़े। जों भिलावे पानी की तली पर बैठ जाएं वही ग्राहय होगे, जो पानी पर तैरें उन्हें न लें। अब सूती कपड़े की पोटली में भिलावों को बाध दे तथा एक घण्टे में भैसा का गोबर एंव जल भरकर उक्त पोटली को दोलायन्त्र की भांति घड़े के मुंह पर लटका दें। नीचे (चूल्हे में चढ़ाकर) पहले धीरे धीरे आग दें। २ घन्टे बाद आग तेज करें–इस प्रकार ४ प्रहर अर्थात्र १२ घन्टे तक भिलावे की पोटली की सेकाई करें। पश्चात् भिलावों की पोटली को निकाल कर साफ पानी से धो लें। पुनः इसी प्रकार गाय या भैंस के दूध से १२ घन्टे स्वेदन करें। भिलावे परम उत्तम शुद्ध हो जाएगें। अन्दर का तैल भी परमशुद्ध निकलेगा। अब तैल हाथ मे लगने से जलन, खुजली आदि कुछ भी नही होगी। एक बात विशेष ध्यान में रहे कि, गोबर–नर भैंसा का ही लेना हैं, भैंस का नहीं। तथा पोटली गोबर पानी/दूध आदि में तो डूबी रहे परन्तु घड़े की पेंदी से न छुए।

चौकीदार जीन

जीन के बीच–बीच में डी. एन. ए. की ऐसी लंबी श्रृंखलाएं होती हैं, जिनका कोई प्रत्यक्ष प्रयोजन नजर नहीं आता। इन्हें इन्ट्रॉन कहते हैं। जबकि जीन श्रृंखला को एक्सॉन कहा जाता है। इन्ट्रॉन के बारे में मान्यता यह थी कि ये प्राचीन अवशेष हैं तथा वर्तमान में निष्प्रयोजन हैं। कुछ वैज्ञानिकों की राय में ये 'निष्प्रयोजन जीन' दरअसल विविधता पैदा करने में सहायक होते हैं। इनके कारण, एक ही जीन अलग–अलग प्रोटीन बना लेता है।

मगर हाल ही में ब्रेडफर्ड विश्वविद्यालय के क्रिप्टोग्राफर साइमन शेफर्ड ने एक नया सिद्धांत विकसित किया है, जिसके मुताबिक ये इन्ट्रॉन एक तरह से चौकीदारी का काम करते हैं ताकि जीन अपना कामकाज सुचारु रूप से करें। इनकी उपस्थिति में जीन, प्रोटीन निर्माण संबंधी निर्देश देने में कोई त्रुटि नहीं करते। शेफर्ड के अनुसार इन्ट्रॉन 'भूल सुधारक डी. एन. ए. है।

शेफर्ड ने यह सिद्धांत मानव जीन के आंकड़ों का विश्लेषण करते हुए विकसित किया। ये आंकड़े 'मानव जीनोम' नामक अंतर्राष्ट्रीय प्रोजेक्ट के अंतर्गत इकट्ठे हुए हैं। अपने सिद्धांत के जरिए वे मात्र एक्सॉन को देखकर नजदीकी इन्ट्रॉन की रचना का पूर्वानुमान करने में ७५ प्रतिशत सफल रहे। यदि शेफर्ड का विचार सही है तो जिनेटिक विज्ञान की एक पुरानी गुत्थी सुलझ सकती है।

लेखकों के लिये

"जीवनीय" में स्वस्थ रहने के सरल सिद्धान्तों और रोज़मर्रा की बीमारियों के घरेलू इलाज के अतिरिक्त स्वास्थ्य–ज्ञान सम्बन्धी अन्य सामग्री भी प्रकाशित की जाती है जिसका अवलोकन आप इसके अंकों में करते ही रहते हैं। इस सम्बन्ध में भी लेखकों के सुझाव आमन्त्रित हैं।

"जीवनीय" में प्रकाशन हेतु लेख या अपने अनुभव भेजते समय इस बात का विशेष ध्यान रखें कि रचना टाइप की हुई हो या उसकी लिखावट साफ–सुथरी व कागज के एक ओर ही हो। कृपया हाशिये की पर्याप्त जगह भी छोड़ें। भेजी गयी रचना मौलिक होनी आवश्यक है। रचनाओं पर निर्णय लेने में आठ से दस सप्ताह का समय लगता है अतः इस विषय पर बार–बार पत्र–व्यवहार न करें।

अपनी रचना के साथ कृपया टिकट लगा एक लिफाफा अवश्य भेजें जिस पर आपका सही पता भी लिखा हो। अन्यथा रचना अस्वीकृत होने की स्थिति में वापस करने की कोई ज़िम्मेदारी हम नहीं ले सकेंगे।

सम्पादक का पता– जीवनीय प्रकाशन,

ई– III/ २४९, सेक्टर एच

अलीगंज,लखनऊ–२२६०२०

सुझाव/आलोचना पुरस्कार

जीवनीय की बढ़ती हुई लोकप्रियता को देखते हुए जीवनीय परिवार के सदस्य इसमें नवीन पठन सामग्री पाठकों को सदैव देने के लिये तत्पर हैं। इस पत्रिका में सुधार पाठकों के सहयोग से ही सम्भव है। इसी विचार से हम लोग यह पुरस्कार योजना शुरू कर रहे हैं। यदि आपकी आलोचना एवं सुझाव सम्पादक मण्डल द्वारा चुन लिये जाते हैं तो आपको एक वर्ष तक जीवनीय मुफ्त भेजी जाती रहेगी। अपने सुझाव निम्न फार्म को काटकर और भरकर ही भेजें।

जी हाँ, आप दस भाग्यशाली विजेताओं में शामिल होइये

नाम ---------- आयु ----------

पता ----------

योग्यताएँ एवं व्यवसाय ----------

मेरा सुझाव/आलोचना है कि ----------

(यदि रिक्त स्थान कम हो तो आप अलग कागज़ पर लिखकर संलग्न कर सकते हैं)।

जीवनीय चंदे की दरें

	व्यक्तिगत (रुपये)	संस्थागत (रुपये)
वार्षिक	५०	८०
द्वैवार्षिक	९०	१५०
त्रैवार्षिक	१३०	२२०
आजीवन	५००	८००

जीवनीय ग्राहक चंदा अनुरोध कार्ड

जीवनीय द्वैमासिक

☐ कृपया मुझे एक/दो/तीन वर्ष/जीवन भर के लिये जीवनीय का ग्राहक बनाकर यह हिन्दी/अंग्रेजी पत्रिका निम्न पते पर भिजवाने का कष्ट करें। मैं चन्दे की सहयोग राशि रु. ..... ड्राफ्ट (नं. ..... दिनांक .....)/धनादेश द्वारा प्रेषित कर रहा हूँ।

नाम : .....

पता : .....

कोड : ☐☐☐☐☐☐

भवदीय

चंदा साधारण डाकखर्च सहित है पर यदि पत्रिका रजिस्टर्ड डाक से मंगाना है तो उपरोक्त दरों में रु. ३५ और जोड़ कर भेजें। चंदे की रकम ड्राफ्ट या मनीआर्डर द्वारा ही 'जीवनीय सोसाइटी, लखनऊ' के नाम से भेजें। लोस्वापसंस के सदस्यों एवं स्वैच्छिक संस्थाओं को चंदे में १० प्रतिशत की छूट मिलेगी।

मस्तरामजी

कथा : पं० काशीनाथ गोरे
चित्र : सन्दीप सेन

अंगुलियों के बीच का स्थान, गुप्तांग आदि!
गर्मी में शीतल जल से रगड़-रगड़ कर नहाना चाहिए.
जाड़े में हल्के गरम पानी से नहाना स्वास्थ्यकर और सुखकर होता है.
जाड़े में उबटन का प्रयोग लाभकारी होता है!
उबटन क्या होता है वैद्यजी?
उबटन कई चीजों का बनता है. तिल्ली-पानी के साथ पीस कर भी उबटन बनता है.
उबटन से क्या लाभ होता है?
उबटन शरीर में लगाकर जब सूख जाए तो उसे रगड़-रगड़ कर निकाल देना चाहिए.
उसके साथ शरीर पर जमा मैल निकल जाता है!
तिल स्निग्ध होने के कारण उससे त्वचा मुलायम हो जाती है.
मगर उबटन निकालने के बाद क्या करना चाहिए?
उबटन निकालने के बाद तेल लगाकर मालिश भी लाभदायक होती है!
क्रमशः

ISSN No. 0971–2267

रजि० न० ५११०३/९०

WE ARE IN STEP WITH TIME

TIME

NEW WAVE!

NEW STYLE!

NEW LOOK!

NEW LIFE!

action®
SHOES